जैनज्ञान-गुणसंग्रह

मुनिसौभाग्यविजय.

श्री पार्श्वनाथाय नमः।

श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह।

लेखक और संग्राहक

मुनिश्रीसौभाग्यविजयजी महाराज

गौलनगर के श्रीजैनसंघ की आर्थिकसहायतासे

प्रकाशक—

श्रीकविशास्त्रसंग्रह समिति,

जालोर (मारवाड)

वीरसंवत् २४६२

विक्रमसंवत् १९९३ ईस्वी न १९३६

प्रथमावृत्ति

मूल्य सवा रुपया।

इदं पुस्तकं श्रीशारदामुद्रणालये तदधिपतिना
श्रावकहर्षचंद्रात्मजेन पण्डितभगवानदासेन मुद्रितम् .
जैनसोसाइटी नं० १५.-अमदावाद

प्रस्तावना

मारवाड के विहारसे अनुभव हुआ कि इस प्रदेशके निवासियोंके लिये ऐसी पुस्तकोंकी खास जरूरत है जिन्हें सामान्य मनुष्य भी पढ़ सके और श्रावकधर्म तथा उससे संबन्धित अन्य सामान्य बातें सुगमतासे जान सके। जो कि इस आवश्यकता को किसी अंशमें पूरा करने वाली गुजराती भाषाकी पुस्तकें मिल सकती हैं, परन्तु इस प्रदेशवासियों के लिये गुजराती पुस्तक उतनी उपयोगी नहीं हो सकती, जितनी कि हिन्दी हो सकती है, यह सब विचार करने पर यही निश्चय हुआ कि यहां के जैनगृहस्थों के लिये एक ऐसे ग्रन्थकी योजना होनी आवश्यक है जो हर प्रकारसे उपयोगी हो सके, हमने इस कार्य के लिये मुनिवर्यश्री सौभाग्यविजयजी को सूचना की और उन्हों ने परिश्रमपूर्वक एक गद्यपद्य का संग्रह कर के हमारे सुपुर्द किया जो "जैनज्ञान-गुणसंग्रह" नामक पुस्तक के रूपमें पाठकगण के सामने है।

"जैनज्ञान-गुणसंग्रह" एक 'संग्रह' ग्रन्थ है। इस में दो खण्ड और उनमें अनेक प्रकरण हैं।

ग्रन्थ का पहला खण्ड हिन्दीगद्यमें है जो अन्य ग्रन्थों के आधारसे मुनि श्रीसौभाग्यविजयजीने लिखा है, सिर्फ "धारणागति अथवा नामाजोडा" और "रोगिमृत्युज्ञान" नामक

दो अप्रसिद्ध लेख इसमें हमारे भी शामिल किये गये हैं जो "विविधविचार" शीर्षक प्रकरणमें छपे हैं।

दूसरा खण्ड पद्यमय है, इसमें कुछ रचनायें मुनिश्रीसौभाग्यविजयजीकी खुद की हैं, और बाकी सब नवे पुराने अनेक कवियों की। इन की पसंदगी इस प्रदेश के श्रावक-श्राविकागण की रुचि के अनुसार की गई है।

इस प्रकार इस संदर्भ के दो खण्डोंमें क्रमशः जैनज्ञान और जैनगुणोंका संग्रह होने के कारण ही इसका सार्थक नाम "जैनज्ञान-गुणसंग्रह" रक्खा गया है।

"जैनज्ञानगुणसंग्रह" की भाषा सरल और सुबोध बनानेका लक्ष्य रक्खा गया है, इसी कारण इसमें कहीं कहीं देशप्रसिद्ध शब्दों का प्रयोग किया गया है और कुछ हिन्दी शब्दों के उच्चारण देश्यभाषा के अनुसार लिखे गये हैं।

दूसरे खण्ड में प्राचीन लेखकों के स्तुति, स्तवन, सज्झाय, पद आदि सब मुद्रित पुस्तकों में से लिये गये हैं परन्तु अवकाश न मिलने के कारण उनका हस्तलिखित-मूलपुस्तकों से मिलान नहीं हो सका, इस कारण क्वचित् अशुद्धि रह गई हो तो पाठकगण सुधार कर पढें।

ग्रन्थ के अन्तमें "गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध" और "पोषधविधि" नामक दो परिशिष्ट जोडे गये हैं, जिनमें

"पोषधविधि" का तो ग्रन्थ के साथ खास संबन्ध है, क्यों कि 'पोषधव्रत' का ग्रन्थमें निरूपण है तो उस के लेने पारनेकी विधि भी बतानी चाहिये ही, अतः 'पोषधविधि' का इस के साथ जोडना बिलकुल प्रासंगिक है परन्तु 'प्रतिष्ठाप्रबन्ध' का इस ग्रन्थ के साथ क्या संबन्ध है ? यह एक प्रश्न है और उत्तर इस का यह है कि प्रस्तुत " जैनज्ञानगुणसंग्रह " 'गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठा ' का स्मारक ग्रन्थ है, गोलनगर के श्री जैनसंघकी प्रार्थना और आर्थिक सहायता से ही यह ग्रन्थ प्रसिद्ध किया गया है, इस दशा में " गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध " का भी इस के साथ छपना अन्यन्त जरूरी था।

'प्रतिष्ठाप्रबन्ध' को इस स्थायीसाहित्य के साथ जोडने का एक और भी कारण है, वह यह कि मारवाडमें प्रतिवर्ष छोटी बडी अनेक प्रतिष्ठायें हुआ करती हैं, और उनमें हजारों रुपया खर्च होता है, परन्तु कई जगह पर प्रतिष्ठाकारकों को अपने काम में 'यश' नहीं मिलता, इसका मुख्य कारण प्रतिष्ठाकार्य सम्बन्धी योग्य व्यवस्था की खामी होती है। प्रतिष्ठा में कार्यव्यवस्था कैसी होनी चाहिये और उसके व्यवस्थापकों को अपने कार्य में किस प्रकार तत्पर रहना चाहिये, यह जानने के लिये 'गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध' एक पठनीय निबन्ध है। कोई भी प्रतिष्ठाकर्ता साधु और श्रावकगण इसमें लिखे मुजब प्रतिष्ठाकार्य की व्यवस्था करेंगे तो उन्हें अपने

कार्य में कभी 'अपयश' नहीं मिलेगा।

अन्त में पाठकगण से निवेदन है कि वे इस पुस्तक को जिज्ञासावृत्ति से पढ़ें और इसमें लिखी हुई शिक्षाओं को अपने हृदय में स्थापित करें, निस्सन्देह इससे उनको अपने जीवन सुधार में मदद मिलेगी और ऐसा होने से ही इस पुस्तक के लेखक, प्रकाशक और सहायकों का परिश्रम भी सफल होगा। तथास्तु।

तखतगढ,
ता० २५-५-३६
ज्येष्ठशुदि ५ सं० १९९३

मुनि कल्याणविजय

श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह का विषयानुक्रम

प्रथमखण्डे—

विषयनाम	पृष्ठाङ्क
१ देवदर्शनविधि—	१-१२
सामान्य उपदेश	१
८४ आशातना	६
४० मध्यम आशातना	९
१० जघन्य आशातना	११
२ जिनपूजाविधि—	१२-३८
सामान्य उपदेश	१२
मूर्तिपूजा की ज़रूरत	१३
प्राथमिक कर्तव्य	१६
पूजाभावना के दोहे	१७
जिनमन्दिर में प्रवेश और द्रव्यपूजा	१८
जलाभिषेक में भावना और जयणा	२१
नवअङ्गपूजा के दोहे	२२
पूजामें मूलनायकजी की मुख्यता	२३
पुष्पपूजा में विवेक	२४
अंग-अग्रपूजाविषयक भावना	२५
स्वस्तिक	२८
भावपूजा	२९
सतराभेदी पूजा	३३

	इक्कीस प्रकारी पूजा	३४
	दर्शन और पूजनसम्बन्धी कुछ सूचनायें	३५
३	**श्रावक-द्वादशव्रत—**	३८-९५
	सम्यक्त्व अथवा समकितस्वरूप	३८
	स्थूलप्राणातिपातविरमण	४२
	स्थूलमृषावादविरमण	४७
	स्थूलअदत्तादानविरमण	५०
	स्वदारसंतोष-परस्त्रीविरमण	५४
	स्थूलपरिग्रहपरिमाण	५६
	दिक्परिमाणव्रत	६२
	भोगोपभोगपरिमाण	६५
	(२२ अभक्ष्य, ३२अनन्तकाय,१४नियम,वनस्पतिटीपसहित)	
	अनर्थदण्डविरमण	८४
	सामायिक व्रत	८६
	देशावकाशिक व्रत	८९
	पोषधोपवास व्रत	९१
	अतिथिसंविभाग व्रत	९३
४	**तपस्याविधि—**	९५-११५
	वीसस्थानक-तपविधि	९५
	अष्टकर्मओली (कर्मसूदनतप)	९७
	रोहिणीतपविधि	९८
	वर्धमानओली की विधि (वर्धमानआयंबिल तप)	९९
	लघुपंचमी तप	९९
	ज्ञानपंचमी तप	१००
	४५ आगम तप	१००
	पक्खवाडातपविधि	१०४

पौषदशमीतप की विधि १०५
पंचरंगीतप विधि १०६
दशपच्चक्खाण विधि १०७
२४ जिनकल्याणकतप विधि १०८
५ विविधविचार— ११५-१८८
(१) वर्तमानजैनागमपरिचय ११५
(२) ६३ शलाकापुरुषविचार १२८
(३) ५२ बोलका नकशा १३३
(४) धारणागति अथवा नामाजोड़ा १५५
(५) घर कहां और कैसा बनाना चाहिये ? १६६
(६) सूतकविचार १७१
(७) रोगि-मृत्युज्ञान १७८

द्वितीयखण्डे—

१ चैत्यवन्दनसंग्रह १८९-२०१
(२४ जिनके २४ संस्कृतचैत्यवन्दन)
२ स्तुतिसंग्रह— २०१-२२०
आदिजिनस्तुति (शौरसेनी) २०१
शान्तिनाथजिनस्तुति (मागधी) २०२
नेमिनाथजिनस्तुति (पैशाची) २०४
पार्श्वनाथजिनस्तुति (चूलिका पैशाची) २०५
वर्धमानजिनस्तुति (अपभ्रंश) २०६
दीपमालास्तुति (संस्कृत) २०८
वीरजिनस्तुति (प्राकृत) २०८
ऋषभदेवस्तुति २०९
शान्तिनाथस्तुति २१०
गिरनारनेमिजिनस्तुति २११

	पार्श्वनाथजिनस्तुति (२)	२१२
	अध्यात्मगर्भित महावीरजिनस्तुति	२१३
	सीमंधरजिनस्तुति	२१४
	सिद्धाचलस्तुति	२१४
	सीमन्धरजिनस्तुति	२१४
	बीजतिथि स्तुति (२)	२१५
	पंचमी की स्तुति	२१७
	मौन एकादशी की स्तुति	२१८
	रोहिणीतप की स्तुति	२१९
	पर्युषणापर्व की स्तुति	२१९
३	स्तवनसंग्रह—	२२१-२९८
	ऋषभदेवस्तवन (११)	२२१-२२९
	अजितनाथस्तवन (२)	२२९-२३०
	संभवजिनस्तवन (२)	२३१-२३२
	अभिनन्दनजिनस्तवन (२)	२३३-२३५
	सुमतिनाथस्तवन (२)	२३५-३६
	पद्मप्रभजिनस्तवन (२)	२३७-२३८
	सुपार्श्वजिनस्तवन	२३९
	चन्द्रप्रभजिनस्तवन	२३९
	सुविधिनाथस्तवन	२४०
	शीतलनाथस्तवन	२४२
	श्रेयांसजिनस्तवन	२४२
	वासुपूज्यजिनस्तवन (२)	२४३-२४४
	विमलनाथस्तवन (२)	२४५-२४६
	अनन्तनाथजिनस्तवन	२४६
	धर्मनाथजिनस्तवन	२४८

शान्तिनाथस्तवन (५)	२४९–२५४
कुन्थुनाथस्तवन	२५४
अरनाथजिनस्तवन	२५५
मल्लिनाथस्तवन	२५६
मुनिसुव्रतस्तवन	२५७
नमिनाथस्तवन	२५८
नेमिनाथस्तवन (६)	२५९–२६३
पार्श्वनाथस्तवन (७)	२६४–२७०
महावीरजिनस्तवन (६)	२७०–२७५
चौवीसजिनस्तवन	२७५
सीमंधरजिनस्तवन	२७६
युगमंधरजिनस्तवन	२७७
चन्द्राननजिनस्तवन	२७८
आदि–शान्तिजिनस्तवन	२८०
सामान्यजिनस्तवन (२)	२८१–२८२
परमात्मस्तवन	२८२
जिनस्तवन (२)	२८३–२८४
जैनधर्मकी महत्ता पर स्तवन	२८५
प्रभुपूजागायन	२८६
प्रभुभक्ति–उपदेशपद	२८६
प्रभुप्रार्थना पद	२८७
प्रभुगुणगायन	२८८
जिनप्रतिमास्थापनस्तवन	२८८
दीवाली–वीरप्रभुस्तवन (२)	२८९–२९१
पर्युषणास्तवन	२९१
सिद्धाचल–शत्रुंजयस्तवन (३)	२९३–२९५
पुंडरीकस्वामिस्तवन	२९६

	विजयसिद्धिसूरिगहुंली	२९७
४	सज्झायसंग्रह—	२९८–३५४
	धन्नाजी की सज्झाय	२९८
	सद्गुरु–सदुपदेशसज्झाय	२९९
	समकितभेदे भावनारूपसज्झाय	३०१
	मुनिगुणसज्झाय	३०१
	माया अथिर की सज्झाय	३०२
	वैराग्य–उपदेशकसज्झाय	३०३
	एकादशी की सज्झाय	३०४
	मरुदेवी माता की सज्झाय	३०६
	रहनेमि की ,,	३०६
	अरणिकमुनि की ,,	३०८
	स्थूलभद्रजी की ,,	३१०
	आत्मप्रबोध ,,	३१२
	मेतारजमुनि ,,	३१५
	स्थूलभद्र ,, (२)	३१७–३२५
	मूर्खप्रतिबोध ,,	३२५
	लोभ की ,,	३२६
	देवानन्दा की ,,	३२७
	जम्बूस्वामि का चौढालिआ	३२९–३३३
	आठमदकी सज्झाय	३३३
	बाहुबली की ,,	३३५
	माया को ,,	३३६
	वयरस्वामी की ,,	३३८
	नंदिषेणमुनि की ,,	३४०
	प्रसन्नचंद्रमुनि ,,	३४३
	दशवैकालिकसूत्र ,,	३४४

	पंचमो की ,,	३४५
	नागिला की ,,	३४८
	सामायिकबत्तीसदोष ,,	३५२
	मनभमरा की ,,	३५३
५	पद्संग्रह	३५५-३७५
	लघुताभावनापद्	३५५
	रहेणो-कहेणीस्वरूपपद्	३५६
	भिन्नभिन्नमतस्वरूपपद्	३५६
	जैनस्वरूपपद्	३५७
	चैतन-उपदेशपद्	३५९
	उपशम पर पद्	३६०
	शरीररथ पर पद्	३६१
	कायामंदिर पर पद्	३६२
	उपदेशपद्	३६२
	समयकी दुर्लभता पर पद्	३६३
	चैतन-उपदेश पद्	३६४
	उपदेश पद्	३६५
	आत्म-उपदेश पद्	३६७
	आशा-त्याग पर पद्	३६८
	गुरु-उपदेश पद्	३७०
	प्राणिप्रार्थना	३७०
	धर्मी और कर्मीका संवाद्	३७२
	रावण के प्रति सीता का वाक्य	३७४
१	श्रीगोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध	३७७-४५८
	धनको सफलता	४५९
२	पोषधविधि	४६१-५०३

शुद्धिपत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	२०	जुते	जूते
१६	१०	किसों	किसी
१६	२२	पहने	पहनने
३७	२२	भेजे	भेज
३९	३	°रीक्षोंको	°रीक्षो
६१	११	डागें	डालें
६८	२	ऊपरऊपर	ऊपर
६९	२०	बोर	बेर
७१	६	२२	३२
७३	९	गितनो	गिनती
९२	५	एकाद्	एकाध
९५	१६	का० का०	का०
१०८	२१	दृसरी	दूसरी
११६	२१	ताउपत्र	ताडपत्र
१२५	१०	संख्या	सं०
१५०	२	ऋपभ	ऋषभ
१५७	३	वृषे	वृष
१५८	१५	वधेगा	बचेगा
१८४	१०	दोर्ध	दीर्घ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९५	५	°भीनै	°मीनै
१९५	१५	°हीन	°हीनं
२११	०	३११	२११
२१९	१५	जिण	जिम
२३०	१३	वांजित	वांछित
२३९	७	प्रति°	प्राति°
२६२	१०	पंचावन	चौपन
२७७	५	णइ	इण
३०५	५	पाबक	पावक
३०६	११	रहां	इहां
३५७	१९	शुद्र	शुद्ध
३९९	१	किसानजी	किसनजी
४०४	१३	घनकूट	कूट
४०९	५।१८	घनकूट	कूट
४११	९।११	समितियों	समितियां
४६१	७	नवकारका	नवकार का[2]
४६१	७	प्रकटलोगस्स[2]	प्र०लोगस्स[3]
४७१	६	पठ	परठ
४७४	५	करे'	करे[3]
४७६	१७	पोषण	पोषध

—— ० ——

श्रीवर्धमान जैनविद्याभवन-जालोर

ऊपर की संस्था संवत् १९९२ (मारवाडी १९९१) के वैशाख शुदि ६ के दिन जालोर में स्थापित हुई और अच्छी उन्नति कर रही है। इस समय इसमें १०० जैन विद्यार्थी धार्मिक, महाजनी, हिन्दी और अंग्रेजी का अभ्यास कर रहे हैं।

कार्यवाहकों की लगन और श्री जैनसंघ की मदद से आज तक यह संस्था ३००००) का चन्दा और बिल्डिंग के वास्ते ६०००० गज जमीन प्राप्त करने में समर्थ हुई है। चन्दा अभी चालू है, और पूर्ण आशा है कि सकल श्री जैनसंघ इसमें योग्य सहायता देकर इसकी नींव मजबूत करेंगे, ताकि भविष्य में यह विशेष कार्य कर सके।

कम से कम २५०) रुपया मकानखाते में देनेवाले सज्जनों के नाम आरसपाषाण की तख्तियों पर खुदवा कर मकानों के द्वार पर लगवाये जाते हैं।

भोजनफण्ड, स्थायीफण्ड, आदि किसी भी खाते में कम से कम ५००) रुपया देने वाले सद्गृहस्थ इस संस्था के 'कार्य वाहक-सभासद' बनाये जाते हैं और उनकी सलाहके अनुसार संस्था का कारोबार चलाया जाता है।

संस्था को २०००० या १०००० अथवा तो ५००० की सहायता देने वाले व्यक्ति अथवा श्रीसंघ इसके क्रमशः पहले, दूसरे और तीसरे वर्ग के पेट्रन बनाये जाते हैं।

पेट्रनों के बडे फोटू संस्था अपने खर्चे से बनवा कर मुख्य हॉल में स्थापित करेगी।

पेट्रनों, मेम्बरों और अन्य खास सहायकों की शुभनामावली उनकी दी हुई सहायता के उल्लेख और संवत् मिति के साथ शिलाओं पर खुदवा कर वे शिलालेख हाल में लगवाये जायंगे।

किसी भी प्रकार की फुटकर मदद देनेवाले भाइयों को संस्था के नाम की पक्की रसीदें दी जाती हैं।

विद्यार्थी भेजिये—

हमारी प्रार्थना केवल आर्थिक सहायता के लिये ही नहीं विद्यार्थी भेजने के सम्बन्ध में भी है।

जिन मा बापों को अपने पुत्रों को धार्मिक के साथ २ व्यावहारिक विद्या में प्रवीण बनाना हो वे उन्हें वर्धमान-जैन विद्याभवन में भर्ती करें। कम खर्च और कम समय में बच्चों को तैयार करनेवाली इसके सिवा दूसरी कोई संस्था नहीं है।

७ साल से १४ साल तक के बालक इसमें भर्ती हो सकते हैं।

१० वर्ष की उमर तक विद्यार्थियों को मासिक रु० ३) और इसके ऊपर की उमर में मासिक रु. ४) भोजन खर्च के देने पडते हैं।

खर्च देने में असमर्थ विद्यार्थियों को मुफ्त भी लिया जाता है।

११ रुपया डीपाझीट और तीन साल की गेरंटी ली जाती है। ३ साल पूरा करने पर डीपाझीट की रकम लौटा दी जाती है।

विशेष जानकारी के लिये पत्र-व्यवहार नीचे के पते से करें।

शा० नवलमल मूलचन्द,
मे० सेक्रेटरी श्रीवर्धमान जैन विद्याभवन-जालोर(मारवाड)

जाहिर सूचना–

इस पुस्तक के उपरान्त नीचे की पुस्तकें भी हमारे शास्त्रसंग्रहमें मिलती हैं—

१–वीरनिर्वाणसंवत् और जैनकालगणना।

इस पुस्तक की रायबहादुर म० म० पं० श्रीगौरीशङ्करजी ओझा आदि धुरन्धर विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। इतिहास के अभ्यासियों और जैन पाठकों के लिये बडे ही काम की चीज है। मूल्य १)

२–चालु चर्चामां सत्यांश केटलो ?।

(देवद्रव्यचर्चाविषयक निबन्ध)

करीब १७ वर्ष ऊपर जैनसंघ में एक सैद्धान्तिक चर्चा चल पडी थी जो 'देवद्रव्यचर्चा' के नाम से प्रसिद्ध है। उसी चर्चा का स्फोट करने वाला मुनिमहाराजश्रीकल्याणविजयजी द्वारा लिखा गया यह विद्वत्तापूर्ण निबन्ध है। मूल्य ≈)

३–जिनस्तुतिकुसुमाञ्जलि।

मुनिमहाराज श्रीकल्याणविजयजी विरचित संस्कृत–प्राकृत स्तुति–स्तोत्र–चैत्यवन्दनों का संग्रह है। मूल्य भेंट।

१ ली पुस्तक मंगानेवालों को पिछली दोनों ही पुस्तकें भेंट भेजी जायंगी।

पता—सेक्रेटरी श्रीकविशास्त्रसंग्रह–समिति,
जालोर (मारवाड)

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

श्रीजैनज्ञान–गुणसंग्रह ।

प्रथम–खण्ड ।

नमन करी जिनदेव को, वंदन करी गुरुराज ।
"जैन ज्ञान–गुण संग्रह" लिखूं बाल हितकाज ॥ १ ॥

दर्शनविधि १ पूजाविधि २, गृहिद्वादशव्रतसार ३ ।
तपविधि ४ विविधविचार ५ इति, प्रथम खंड अधिकार ॥२॥

१ देव–दर्शन विधि ।

सामान्य उपदेश—

प्रत्येक जैन श्रावक श्राविका का यह कर्तव्य है कि प्रति-दिन जैन मंदिरमें जा कर देव दर्शन करें ।

देवदर्शन जाते वक्त सब से पहले बाह्य शुद्धि रखनी चाहिये। कारण कि बाह्य शुद्धि अंतर शुद्धिमें निमित्त कारण है। इसी लिये मंदिर जाते यदि स्नान न बने तो हाथ पांव आदि

तो अवश्य धोने चाहिये। फिर उत्तम कपडे पहिन कर दर्शन करने को जावे। मंदिर तरफ पवित्र भाव से एक एक कदम रखने वाला मनुष्य कितना फल प्राप्त करता है वह नीचे दिये हुए श्लोक में पढिये—

"यास्याम्यायतनं जिनस्य लभते ध्यायंश्चतुर्थं फलं,
षष्ठं चोत्थित उद्यतोऽष्टममथो गन्तुं प्रवृत्तोऽध्वनि।
श्रद्धालुर्दशमं बहिर्जिनगृहात्प्राप्तस्ततो द्वादशं,
मध्ये पाक्षिक मीक्षिते जिनपतौ मासोपवासं फलम्॥१॥

तात्पर्य—मंदिर में जाने का विचार करने पर १ उपवास का फल, दर्शन के लिये खडा होते २ उपवास का फल, चलने को तैयार हुआ कि ३ उपवास का फल, मंदिर तर्फ बिदा हुआ कि ४ उपवास का फल, मंदिर के पास पहुंचा कि ५ उपवास का फल, मंदिर में प्रवेश करते ६ उपवास का फल, मंदिर के मध्य भाग में जाते १५ उपवास का फल, और साक्षात् भगवान् को देखते तो १ मासखमण का फल होता है।

यहां ध्यान रहना चाहिये कि ऊपर मुजब फल तब ही होगा जब कि दर्शन करने वाला मन वचन और काया के अशुद्ध व्यापार को रोक कर मंदिर तर्फ पवित्र भावना से गमन करेगा।

श्रीमान् आनन्दघनजी महाराज श्री सुविधिनाथ भगवान् के स्तवन में फर्माते हैं—

**"द्रव्य भाव शुचि भाव धरिने, हरखे देहरे जइये रे।
दहतिक पण अहिगम साचवतां, एकमना धुरि थइये रे १**

मन्दिर जाते रास्ते में दूसरी संसार की झंझटों में न पड-कर सीधा मंदिर पहुंचना चाहिये। मंदिर में जाने के बाद सब जगह नजर डालते कहीं धूल कचरा या कोई भी अशुद्धि मालूम हो तो स्वयं दूर करें या मंदिर के पूजारी को कह कर दूर करावे।

दर्शन करते भगवान के नजदीक न जाना बल्के अवग्रह के बाहर दूर खडे रह कर प्रार्थना करे।

पुरुष भगवान् के दाहिनी (जीमणी) तर्फ और स्त्री बायी (डाबी) तर्फ खडे रहकर दर्शन करे। उस वक्त यह भी ध्यान रहना चाहिये कि कोई दूसरा दर्शन करता हो उसको हरकत न पहुंचे वैसे खडे रहना चाहिये और कोई आगे चैत्यवंदन स्तवनादि बुलंद आवाज से बोलता हो तो खुद अपने दिल में ही पढे, कारण कि ऐसा न करने से गाने वाले की एकाग्रता में भंग पहुंचने का संभव है।

मंदिर में जहां तक हो सके शांति रहनी चाहिये। न किसी से संसारिक बात चीत करे और न मुख से गाली गलोज बोले। दर्शन करने वाले कई एक महाशय मंदिर में हा हू मचा देते हैं। एक कहता है मैं पहले पूजा करूंगा दूसरा कहता है मैं करूंगा, पालिताणा जैसे तीर्थ स्थानो में मंदिर में

दर्शन करते वक्त और पूजा के वक्त इतनी भीड और हल्ला मच जाता है कि उसमें पता नहीं लगता कि कौन क्या कहता है, वहां उस समय शांति भी नहीं देखी जाती। जब शांति के स्थान में आत्मा को शांति न मिली तो अन्यत्र कहां मिलेगी। दुनिया की झंझट को छोड कर घडी भर शांति प्राप्त करने को मंदिर में गया और वहां भी वही खटपट, तो कहिये वहां जाने में अपने आत्मा को क्या लाभ मिला। जिन मंदिर शांतिका स्थान है,वहां सब मनुष्य जा सकते हैं,किसी रईस या शेठ साहूकार के बंगले पर जाने में प्रतिबंध और रोक टोक हो सकती है, मगर भगवान् के स्थान पर वैसा हिसाब नहीं है। राजा भर्तृहरि ने इस विषय पर क्या ही मनोरंजक श्लोक कहा है—

"नायं ते समयो रहस्यमधुना निद्राति नाथो यदि,
स्थित्वा द्रक्ष्यसि कुप्यति प्रभुरिति द्वारेषु येषां वचः।
चेतस्तानपहाय याहि भवनं देवस्य विश्वेशितु-
र्निर्दौवारिकनिर्दयोक्त्यपरुषं निस्सीमशर्मप्रदम्॥१॥"

तात्पर्य—'अरे अभी जाने का समय नहीं है। वहां खानगी बातें हो रही हैं। शेठ निंदमें हैं। अगर तू देखेगा तो शेठ कोपायमान होंगे।' इस प्रकार के वचन जिनके दरवाजे पर सुने जाते हैं, अये दिल! ऐसे स्थानों को छोड कर परमात्मा के उस सुखप्रद स्थान पर जा, जहां न द्वारपाल हैं,

न कठोर वचन सुनाई देते हैं, और न किसी प्रकार की हरकतें हैं।

कहने का तात्पर्य कि ऐसे शांति के स्थान मंदिर में शांति रखना इसी में दर्शन की सफलता है, यूरोपीयन लोगों के चर्च (देवल) में देखो कैसी शांति होती है? सिर्फ एकही पादरी प्रार्थना बोलता है और दूसरे लोग खामोश रहकर सुनते हैं। जरा भी गडबड नहीं होने पाती। इस प्रकार की शांति जिनमंदिर में रखनी चाहिये जिससे दर्शन का यथार्थ लाभ प्राप्त हो।

मंदिर जाने वालों को ८४ आशातना भी टालनी चाहिये जिनके नाम नीचे मुजब हैं—

८४ आशातना

१ मंदिर में थूकना।
२ जुआ शतरंज पत्ते आदिसे खेलना।
३ टंटा फिसाद करना।
४ धनुर्विद्या सीखना (धनुष बाण चलाना)।
५ जल से कुरले करना।
६ पान खाना।
७ पान खाकर थूकना।
८ गाली गलोज देना।
९ टट्टी या पैसाब करना।
१० हाथ पांव आदि धोना।

११ मस्तक के केश समारना ।
१२ नख समारना ।
१३ खून का गिरना ।
१४ सुकडी (मिठाई) आदि खाना ।
१५ फोडे आदिकी चमडी उखेड कर गिराना ।
१६ दवाई खाकर पित्त गिराना ।
१७ उलटी करना ।
१८ मुखमें से हिलता दांत गिराना ।
१९ हाथ पांव के मालिश कराना ।
२० घोडा ऊंट आदि बांधना ।
२१ दांतों का मैल गिराना ।
२२ आंख का मैल गिराना ।
२३ नख का मैल निकालना ।
२४ गाल का मैल उतारना ।
२५ नाक का मैल निकालना ।
२६ मस्तक का मैल गिराना ।
२७ शरीर का मैल उतारना ।
२८ कान का मैल निकालना ।
२९ भूत जक्ष आदिकी साधना करना ।
३० विवाह शादी की पंचायत करना ।
३१ व्यापार का लेखा हिसाब करना ।

३२ राज संबंधी काम करना अपने भाई विगेरह को माल मिलकत बांटने की व्यवस्था करना ।

३३ घर की मिलकत मंदिरमें रखना ।

३४ पांव पर पांव चढाकर बैठना ।

३५ मंदिर की दिवार पर गोबर थपाना या ढेर लगाना ।

३६ कपडे सुखाना ।

३७ दाल दलना ।

३८ पापड विगेरह सुखाना ।

३९ वडीयां बनाना केर आदि सुखाना ।

४० पोलिस आदि के भय से मंदिरमें छिप जाना ।

४१ पुत्र स्त्री आदि के निमित्त रोना ।

४२ राजकथा देशकथा भक्तकथा स्त्रीकथा करना ।

४३ बाण धनुष तलवार आदि शस्त्र तय्यार करना ।

४४ गाय भेंस आदि बांधना ।

४५ ठंडके मारे सीगडी लगा कर तापना ।

४६ अनाज पकाना ।

४७ नाणे परखना ।

४८ विधि से निस्सिही न कहना ।

४९ छाता (छत्री) धारण करना ।

५० जूत्ते बूट या स्लीपर पहनना ।

५१ शस्त्र धरना ।

५२ चामर ढलवाना ।
५३ मन को एकाग्र न करना ।
५४ शरीर पर अत्तर सेंट आदि लगाना ।
५५ शरीर के सचित्त फुलमालादिका त्याग न करना ।
५६ हार कुंडल अंगूठी विगेरह जेवर उतारना ।
५७ भगवान को देख कर हाथ न जोडना ।
५८ उत्तरासन न रखना ।
५९ मस्तक पर मुकुट रखना ।
६० मस्तकको रुमाल आदि से लपेटना
६१ फूल का गजरा पास में रखना ।
६२ श्रीफल आदिका छिलका डालना ।
६३ दडे से खेलना ।
६४ पिता आदिको प्रणाम करना ।
६५ भांड भवाये की चेष्टा करना ।
६६ तूंकारा वचन बोलना ।
६७ लेहेणे के लिये पिकेटिंग-धरना देना ।
६८ युद्ध करना ।
६९ मस्तक के बाल सुखाना ।
७० पलथी लगाकर बैठना ।
७१ खडाउ पांव में रखना ।
७२ पांव लंबे कर बैठना ।

७३ पगचंपी कराना ।
७४ स्नान कर कीचड करना ।
७५ पांव के लगी हुई धूल झाडना ।
७६ मैथुन चेष्टा करना ।
७७ जूं निकालना ।
७८ भोजन करना ।
७९ शरीर के गुप्त भाग ढांक कर न बैठना ।
८० वैद्क का धंधा करना ।
८१ खरीदने और बेचने का कार्य करना ।
८२ बिस्तरा बिछाकर सोना ।
८३ जल पीने की मटकी रखना ।
८४ स्नान करने के लीये स्थान बनाना ।

ये चोरासी आशातना उत्कृष्ट कही जाती हैं और मध्यम आशातना ४० तथा जघन्य आशातना १० हैं जिन के क्रम वार नाम नीचे मुजब हैं—

४० मध्यम आशातना

१ पैसाब करना ।
२ जंगल जाना ।
३ जूते पहनना ।
४ जल पीना ।
५ भोजन करना ।
६ सोना ।

७ मैथुन क्रीडा करना ।
८ पान खाना ।
९ थूंकना ।
१० जुगार खेलना ।
११ जुगार देखना ।
१२ विकथा करना ।
१३ पलथी लगा कर बैठना ।
१४ पांव अलग अलग लंबे करना ।
१५ टंटा फिसाद करना ।
१६ हांसी ठट्ठे करना ।
१७ किसी पर ईर्ष्या करना ।
१८ ऊंचे आसन पर बैठना ।
१९ शरीर का शणगार बनाना ।
२० मस्तक पर छाता रखना ।
२१ तलवार बंदूक आदि शस्त्र रखना ।
२२ मुकुट मस्तक में रखना ।
२३ चामर ढलवाना ।
२४ स्त्रियों के साथ मजाक करना ।
२५ धरणा लगाना ।
२६ खेल करना ।
२७ मुख कोश विना पूजा करना ।

२८ मलिन कपडों से पूजा करना ।
२९ पूजा करते मनको स्थिर न रखना ।
३० शरीर पर सचित्त पुष्पमालादि पहन कर जाना ।
३१ गहने उतार कर जाना ।
३२ उत्तरासण न रखना ।
३३ भगवान् को देख कर नमस्कार न करना ।
३४ शक्ति होने पर भी पूजा न करना ।
३५ खराब फूलों से पूजा करना ।
३६ पूजा में आदर भाव न रखना ।
३७ प्रतिमा के निंदक को न दांटना ।
३८ मंदिर के द्रव्य की हिफाजत न रखना ।
३९ शक्ति होने पर भी सवारी पर चढ कर जाना ।
४० बडे पुरुषका अपमान करना ।

१० जघन्य आशातना

१ मंदिरमें पान सुपारी खाना ।
२ जल पीना ।
३ भोजन करना ।
४ जूते पहिनना ।
५ स्त्री क्रीडा करना ।
६ सोना ।
७ थूंकना ।
८ पैसाब करना ।

९ टट्टी जाना ।
१० जुगार चोपट पत्ते खेलना

ऊपर लिखी हुई आशातना टालने में विनय धर्म प्रकट होता है और भक्ति भी विशुद्ध मानी जाती है। दरबार की इजलास में या कोर्ट कचहरियोंमें जाना पडता है तो वहांभी कितना अदब (विनय) रखना पडता है ? । कपडे अच्छे पहनते हैं, विचार कर बोलते हैं, गाली गलोज मुख से नहीं निकालते, हर तरह से सोच विचार कर चलते हैं तो भगवान् तो तीन जगत् के स्वामी ह, इन का अदब करें उतनाही थोडा हैं। भगवान् वीतराग हैं, इन को किसी प्रकारकी दरकार नहीं है, मगर भक्ति करने वाले का फर्ज है कि पूज्य पुरुष के प्रति अपना अंतःकरण से बहुमान दिखलावे और किसी प्रकार की आशातना न करे ।

२ जिनपूजाविधि ।

सामान्य उपदेश ।

तीर्थंकर देव की पूजा करना यह भी हर एक जैन श्रावक का खास कर्तव्य है। शास्त्रकारों ने श्रावकों के जो षट्कर्म बतलाये हैं उनमें जिनपूजा को प्रथम नम्बर में रक्खा है, कारण कि एकनिष्ठा से की गई यह जिनपूजा समकितकी शुद्धि करने के साथ मोक्ष तक के उत्तम फल देने वाली है। कहा भी है—

"जो पूएइ तिसंझं, जिणिंदरायं तहा विगयदोसं।
सो तइयभवे सिज्झइ, अहवा सत्तट्ठमे जम्मे॥ १॥

इसका तात्पर्य यह है—"जो मनुष्य शुद्ध अंतःकरण से जिनेश्वर देवकी त्रिकाल (सुबह–दोपहर–शाम को) पूजा करता है वह तीसरे भव में या सातवे आठवे भव में मोक्षसुख को प्राप्त करता है।" देखिये कैसा उत्तम फल दिखलाया है? मोक्षाभिलाषी गृहस्थ के लिये पूजाभक्ति सच मुचही मोक्ष का साधन है।

मूर्ति पूजा की जरूरत—

इस साधन के द्वारा देवाधिदेव तीर्थंकरों की भक्ति करनी चाहिये। क्यों कि वे हमारे महान् उपकारी हैं। उन्होंने अपनीं वाणी द्वारा तत्त्वज्ञान और मोक्ष का मार्ग बता कर हम पर बडा भारी उपकार किया है। इस उपकार को न भूलना इसी का नाम कृतज्ञता है। यह कृतज्ञता तब ही मानी जायगी जब कि हम भगवान् की पवित्र हृदय से भक्ति करेंगे।

परंतु यहां पर एक सवाल उठता है, भगवान् यहां साक्षात् नहीं है, फिर हम किसकी भक्ति करें? इसका जवाब यही है कि भगवान् की गैरहाजरी में उनकी मूर्ति ही हमारे लिये भगवान् हैं। जिनविरह में जिनमूर्ति ही जीवों के लिये पूर्ण आलंबन है। उसमें भगवान् का आरोप कर उसके सामने जो कुछ भक्तिभाव किया जायगा उससे जिन भक्ति का

ही फल-लाभ होगा। क्रिश्चियन प्रजा मूर्ति पूजा को नहीं मानती फिरभी वह चर्च में (गिरिजाघर में) जेसस् क्राइष्ट की मूर्ति रखती है। मुसलमान मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी हैं फिर भी वे मक्का की तर्फ मुंह करके निमाज पढते हैं जो कि एक तरह से मूर्ति पूजा का ही स्वीकार है। चीन जापान सीलोन आदि में बौद्ध लोक बुद्ध देव को पूजते हैं और भारत वर्ष में हिंदू लोग विष्णु शंकर आदि को। अतः तत्त्वदृष्टि से देखा तो जमाने हाल में मूर्तिपूजा एक व्यापक धार्मिक मार्ग है। किसी भी व्यक्ति के आध्यात्मिक गुण-दोषों की परीक्षा के लिये उसकी मूर्ति ही आदर्श भूत साधन है। तीथकर देव अन्य देवों से श्रेष्ठ थे यह बात भी हम उनकी मूर्ति से ही जान सकते हैं। तीर्थंकरकी मूर्ति में जो शान्ति, क्षमा, वीतरागता आदि गुण झलकते हैं वे अन्य मूर्तियों में नहीं पाये जाते। इस विषय में पंडित धनपालका नीचे लिखा श्लोक पढने लायक है—

"प्रशमरसनिमग्नं दृष्टियुग्मं प्रसन्नं,
वदनकमलमङ्कः कामिनीसंगशून्यः।
करयुगमपि यत्ते शस्त्रसम्बन्धवन्ध्यं,
तदसि जगति देवो वीतरागस्त्वमेव ॥१॥"

भावार्थ—"हे प्रभो! तेरे दोनों नेत्र शांतरस से भरे हुए हैं, तेरा मुखकमल प्रसन्न है, तेरा अंकस्थान (गोद) स्त्री

संग से रहित है और तेरे दोनों हाथ शस्त्ररहित हैं इस लिये तू ही सत्य वीतराग देव है।" हरिभद्र सूरि का भी एक श्लोक यहां याद आ जाता है—

"मूर्तिरेव तवाचष्टे, भगवन्! वीतरागताम्।
नहि कोटरसंस्थेऽग्नौ, तरुर्भवति शाद्वलः॥१॥"

"हे भगवन्! आपकी मूर्ति ही वीतरागदशा को बता रही है। यदि आपमें राग-द्वेषादि दोष होते तो आपकी यह मूर्ति ऐसी शान्त कभी नहीं होती, क्यों कि मूल में अग्नि के रहते वृक्ष कभी हरा नहीं होता।"

ज्यादा क्या कहें, जैसी मूर्ति होती है वैसा ही प्रभाव देखने वालों पर पडता है। कोट पटलून बूट स्टोकिंग पहने हुए एक जेंटलमेन् का फोटो देखने पर शौकिनी का भाव पैदा होता है और ध्यान समाधि में बैठे हुए एक त्यागी महात्मा की तसवीर देख कर वैराग्य भाव पैदा होता है। इसी तरह सर्वथा राग-द्वेष रहित तीर्थंकर भगवान् की शांत मूर्ति देखकर हमें वैराग्यभाव पैदा हो इसमें आश्चर्य ही क्या है?। इसी लिये कहा जाता है कि—

"वीतरागं स्मरन् योगी, वीतरागत्वमश्नुते।"

"योगी पुरुष वीतराग का स्मरण करते हुए वीतराग दशा को प्राप्त होते हैं।"

इस प्रकार जब मूर्ति प्रभाव वाली सिद्ध हुई तो उसके

द्वारा तीर्थंकर भगवान् की पूजा भक्ति करना भी स्वतः सिद्ध होता है और इससे गृहस्थ धर्म में 'पूजा' विषय कितना जरूरी है यह अच्छी तरह सिद्ध हो चुका ।

प्राथमिक कर्तव्य—

प्रातः काल में उठकर प्रथम पंचपरमेष्ठी मंत्र को (नवकार को गिने और सामायिक का नियम हो अगर भाव हो तो वह भी कर लेवे, बाद जरूरी कामों से निवृत्त होकर जहां जीव-जंतु न हो ऐसी शुद्ध जमीन पर बैठ कर गरम जलसे या छाने हुए जल से स्नान करे, (यहां ध्यान रहना चाहिये कि अगर किसी के शरीरके किसी भाग में कुछ भी जखम हो और उसमें से खून या पीप निकलता हो तो पूजा नहीं हो-सकती) स्नान करते वक्त अगर नवकारसी का पच्चखाण आ-गया हो तो दांतून भी कर सकते हैं । स्नान करने के बाद रूमाल या टुवाल से अपने शरीर को अच्छी तरह पोंछ लेवे फिर अच्छी सफेद धोती जो फटी न हो संधावाली न हो जिससे पैसाब या टट्टी न गया हो बिलकुल अखंड हो पहिन लेवे । उत्तरासन भी वैसाही सफेद अखंड बायी तर्फ से तिरछा जनोई की तरह धारण कर ले । पूजा षोडशक ग्रंथ के अभिप्राय से पूजा के लिये रेशमीन कपडा भी चल सकता है । परंतु वह रेशमीन कपडा भी सिवाय पूजा के ओर किसी काम में नहीं पहिनना चाहिये, तथा इन पूजा के कपडों से हाथ नाक या मुख न पोंछना चाहिये, दूसरे पहने के कपडों के शामिल भी

न रक्खे ।

इस तरह जब पवित्र कपडे पहिन कर ठीक ठाक होजावे तब पूजा का सामान तय्यार करें ।

शास्त्र में द्रव्य और भाव भेद से दो प्रकार की पूजा बताई है । द्रव्य पूजा ८ द्रव्य से की जाती है, अष्टद्रव्य के नाम ये हैं—

१ जल, २ चंदन, ३ पुष्प, ४ धूप, ५ दीप, ६ अक्षत (चावल), ७ नैवेद्य, ८ फल । इन आठ द्रव्यों को लेकर घर से जिनमंदिर की तर्फ चले, रास्ते में नीचे दिये हुए दोहे दिल में याद करता रहे ।

पूजाभावना के दोहे ।

प्रभुपूजन कुं मैं चला, घसि चंदन घनसार । नव अंगे पूजा करी, सफल करूं अवतार ॥१॥ पांच कोडी के फूल से, पाया देश अढार । कुमारपाल राजा हुआ, वरता जय जयकार ॥२॥ तीर्थंकर को पूजते, उत्कृष्टे परिणाम । पाया है कइ जीवने, स्वर्ग मोक्ष के धाम ॥३॥ समकित को अजुआलवा, उत्तम यही उपाय । पूजा से तुम जाणजो, मन वछित सुख भाय ॥४॥ पूजा कुगति की अर्गला, पुण्य सरोवर पाल । मोक्षगति की प्रियसखी, देवे मंगलमाल ॥५॥ जिन दर्शन पूजा विना, दिन जितने ही जाय । निष्फल वे सब जाणजो, अरु जन्म अकारथ जाय ॥६॥

जिनमंदिरमें प्रवेश और द्रव्यपूजा ।

इस तरह की भावना के साथ ५ [1]अभिगम (सन्मुख जाने के ५ नियम) और १० [2]त्रिक का पालन करता हुआ जिनमंदिरमें प्रवेश करे । प्रवेश करते वक्त 'निसीही' बोल

---

(१) पांच अभिगम-१ सचित्त वस्तुका त्याग (पास में फल फूल माला विगैरह हो तो छोड देना)

२ अचित्त वस्तुका अत्याग-अर्थात् पास में रहे हुए आभूषणादि को न छोडना ।

३ खेश का उत्तरासन रखना

४ जिनप्रतिमा पर दृष्टि पडते ही दूरसे नमस्कार करना ।

५ अपने मनको एकाग्र करना ।

(२)-१० त्रिक के नाम-अवग्रहत्रिक, आलंबनत्रिक, प्रदक्षिणात्रिक, क्षमाश्रमणत्रिक, प्रणिधानत्रिक, निस्सिहीत्रिक, अवस्थात्रिक, मुद्रात्रिक, दिशात्त्रिक, भूप्रमार्जनत्रिक ।

दशत्रिक का तात्पर्य है-अलग अलग तीन तीन बातों के दश नियम, जिन का क्रमवार वर्णन इस मुजब है ।

१ अवग्रहत्रिक-अवग्रह भगवान के नजदीक के उस भूमि भागको कहते है जिसको छोड कर चैत्यवन्दन आदि करने के लिये बैठते हैं । यह अवग्रह उत्कृष्ट ६० हाथ,मध्यम ९ हाथ और जघन्य ३ हाथ का होता है, अर्थात् भगवानसे इतना दूर बैठना चाहिये ।

२ आलंबनत्रिक-१ वर्णालम्बन २ अर्थालंबन ३ प्रतिमालंबन। शुद्ध पद बोलने को वर्णालंबन कहते हैं, पदके अर्थ विचार को अर्थालंबन कहते हैं और प्रतिमा के सामने दृष्टि रखना इसे प्रतिमालंबन कहते हैं ।

कर भीतर जावे और तीन वार प्रदक्षिणा देवे। पहेले अपने

---

३ प्रदक्षिणात्रिक-मंदिर की भमती में ३ वार परिक्रमा करना इसे प्रदक्षिणात्रिक कहते हैं।

४ क्षमाश्रमणत्रिक-भगवान् को तीन वार खमासमण देना।

५ प्रणिधानत्रिक-दोनों जावंति और जयवीयराय का पाठ बोलना यह प्रणिधानत्रिक कहा जाता है।

६ निस्सीहीत्रिक-गृहव्यापारादि निषेध सूचक तीनवार 'निस्सीही' शब्द बोलना।

७ अवस्थात्रिक-भगवान् की छद्मस्थ अवस्था, केवली अवस्था, और सिद्ध अवस्था ये तीनों अवस्था विचारना इसको अवस्थात्रिक कहते हैं।

८ मुद्रात्रिक-१ योगमुद्रा २ जिनमुद्रा ३ मुक्ताशुक्ति मुद्रा।

दोनों हाथ की १० अंगुलियां परस्पर मिलाकर कमल के डोडे की शकल में दोनों हाथ जोड पेट पर कुंणी रख कर चैत्यवंदन करना यह 'योगमुद्रा' कही जाती है।

दोनों पांव के अंगुठों के वीच ४ अंगुली का अन्तर और दोनों एडी के बीच ३ अंगुलीका अन्तर रखकर खडे खडे काउस्सग्ग करना यह 'जिनमुद्रा' कही जाती है।

दोनों हाथ बराबर एकत्र कर ललाट के लगाकर जयवीयराय का पाठ बोलना यह 'मुक्ताशुक्तिमुद्रा' कही जाती है।

९ दिशात्रिक-आसपास की दो दिशायें तथा पिछली दिशा इन तीन दिशाओं से दृष्टिको हटाकर भगवान् के सामने देखना इसका नाम दिशात्रिक है।

१० भूप्रमार्जनत्रिक-चैत्यवंदन करते तीन वक्त खेश से भूमि पोंछना इस का नाम भूप्रमार्जनत्रिक है।

ललाट[1] में तिलक न किया हो तो तिलक करे फिर आठ पडका मुखकोश बांध कर दूसरी बार 'निसीही' कह कर गूढ मंडप में जा घुटने टेक कर तीनवार नमस्कार करे, फिर मूल गभारे में जावे, प्रथम मूलनायक भगवान् पर अगले दिन के चढे हुए पुष्पादि निर्माल्य मोरपीछ से प्रमार्जन करे, इसी तरह आसपास के बिंबों पर प्रमार्जन करे । बादमें पंचामृत से (दही दूध घी शक्कर और जल से) प्रक्षालन (पखाल) करने

---

१ यहांपर ललाट के सिवाय अपने शरीर के दूसरे अंग-उपांग-मस्तक-कान-गला-हाथ आदि पर कितनेक लोग केशर का तिलक करते हैं लेकिन् यह सिर्फ देखादेखी की रूढि है, पूजा की विधि में ऐसा लेख नहीं है, पूजा करने वालों को चाहिये के ऐसी रूढि पर ध्यान न देकर मूल बात पर खयाल रक्खे ।

ललाटमें जो केशर का तिलक किया जाता है उसके लिये केशर साधारण खाते का होना चाहिये, मंदिर का उपयोग में नहीं आ सकता । मंदिर खाते का केशर सिर्फ भगवान् की पूजा में ही काम आता है । कितनीक जगह देखा जाता है कि जो मंदिर खाते का केशर घीस कर भगवान् की पूजा के लिये तय्यार किया जाता है, उसीसे अपने ललाट में भी तिलक करते हैं, परंतु उस में देवद्रव्य का दोष लगता है । हां अगर पूजा करने वाले महाशय अपने घर का ही केशर पूजा के वास्ते ले जावे तो वह केशर अपने तिलक में और पूजा में दोनों जगह काम आ सकता है, वहां देवद्रव्य का दोष नहीं लगता । तिलक के लिये केशर दूसरी वाटकी में ले लेना चाहिये ।

के बाद शुद्ध जलसे अभिषेक करे उस वक्त दिल में जन्माभिषेक की भावना करे ।

जलाभिषेक में भावना और जयणा—

बालत्तणंमि सामिय, सुमेरुसिहरंमि कणयकलसेहिं ।
तियसासुरेहिं ण्हविओ, ते धन्ना जेहि दिट्ठो सि ॥१॥

" हे प्रभो ! बचपन में मेरुशिखर पर ६४ इंद्रोंने सुवर्ण कलशोंसे आप का अभिषेक किया उस समय जिन्होंने आपका दर्शन किया वे धन्य हैं । " इस भावना से प्रक्षालन करे, यहां ध्यान रहना चाहिये कि भगवान् के शरीर पर कहीं केशर चिपक गया हो तो धीमे हाथ से या अंगलूणे से साफ करे वालाकुंची को अधिक न घिसे, कारण के उससे मूर्ति पर सदा घसारा लगने से किसी समय मूर्ति के खड्डे होने का संभव है, हां अगर किसी जगह हाथ या कपडे से भी केशर रह जाता हो तो उस जगह अवश्य वालाकुंचीका उपयोग कर सकते हैं । आज कल कई जगह देखा गया है कि मंदिर के भाडुती पूजारी पूजाविधिका पूरा रहस्य न समझने से वालाकुंची से भगवान पर टूट पडते हैं , जल छिडक कर खूब घिसने लग जाते हैं, कई जगह श्रावक लोग भी जानकारी न होने से इसी तरह वालाकुंची का उपयोग करते हैं यह सब अविवेक है । पूजा करने वालों को चाहिये कि ऊपर लिखे मुताबिक जहां जरूरत हो वहीं वालाकुंची का उपयोग करें, संक्षेप में कहना यही है कि बडी जयणा के साथ जल से भगवान् का प्रक्षा-

लन करे। इस के बाद स्वच्छ अंगलूणों से यथाक्रम सब मूर्तियों को पोंछ कर स्वच्छ कर लेवे। पीछे केशर चंदन से पहले मूलनायक की, बाद दूसरे भगवान की नव अंगे पूजा करे। पूजा करते समय नीचे मुजब भावना के साथ एक एक दुहा बोलता जावे।

पूजा के दोहे—

जल भरी संपुट पत्रमां, युगलिक नर पूजंत।
ऋषभ चरण अंगुठडो, दायक भवजल अंत ॥ १ ॥

इस तरह बोल कर भगवान् के दाहिने और बाये अंगूठे पूजा करे।

जानुबले काउस्सग्ग रह्या, विचर्या देश विदेश।
खडा खडा केवल लह्युं, पूजो जानु नरेश ॥ २ ॥

ऐसा बोल दोनों घुटनों की (गोडों की) पूजा करे।

लोकांतिक वचने करी, वरस्या वरसीदान।
कर कांडे प्रभु पूजना, पूजो भवि बहुमान ॥ ३ ॥

दोनों हाथों की पूजा करे।

मान गयुं दोय अंसथी, देखी वीर्य अनंत।
भुजा बले भव जल तर्या, पूजो खंध महंत ॥ ४ ॥

दोनों खंधो की पूजा करे।

सिद्धशिला गुण ऊजली, लोकांते भगवंत।
वसिया तिण कारण भवि, शिरशिखा पूजंत ॥ ५ ॥

मस्तक पर पूजा करे।

तीर्थंकर पद पुण्य थी, त्रिभुवन जन सेवंत ।
त्रिभुवन तिलक समा प्रभु, भाल तिलक जयवंत ॥ ६ ॥
ललाट में पूजा करे ।

सोल पहर प्रभुदेशना, कंठ विवर वर्तुल ।
मधुर ध्वनि सुर नर सुणे, तेणे गले तिलक अमूल ॥७॥
कंठ भाग में पूजा करे ।

हृदय कमल उपशम बले, बाल्या रागने रोष ।
हिम दहे वन खंडने, हृदय तिलक संतोष ॥ ८ ॥
हृदय भाग में पूजा करे ।

रत्नत्रयी गुण ऊजली, सकल सुगुण विश्राम ।
नाभिकमलनी पूजना, करतां अविचल धाम ॥ ९ ॥
नाभिस्थान में पूजा करे ।

इस तरह मूलनायक की नव अंगे पूजा करने के बाद आस पास के बिंबोंकी तथा इनसे और अधिक बिंब हों तो उनकी भी पीछे (उतावल न हों तो) पूजा कर लेवे ।

पूजा में मूलनायक की मुख्यता—

यहां पर शंका पैदा हो सकती है कि पहिले मूलनायक की पूजा और पीछे आसपास की पूजा करने पर स्वामी सेवक भाव (छोटे बडे का हिसाब) हो जाता है, एक तीर्थंकर की विशेष पूजा करना और दूसरों की साधारण, यह भेद तीर्थंकरो में क्यों होना चाहिये ? । इसका समाधान यह है कि बेशक तीर्थंकर भगवान् सब समान हैं, उनमें स्वामी सेवक

भाव नहीं हो सकता,तो भी यह व्यवहार है कि जिस बिंबकी पहले स्थापना की गई हो वह मुख्य बिंब है इस लिये उसका पूजन पहले किया जाता है। ऐसा करने पर शेष तीर्थंकरों के नायकभाव में कमी नहीं होती। संघाचार भाष्य में भी मूलनायक की पूजा विशेष प्रकार से करने के लिये कहा है—

"उचिअत्तं पूआए, विसेसकरणं तु मूलबिंबस्स।
जं पडइ तत्थ पढमं, जणस्स दिट्ठी सह मणेणं ॥१॥"

अर्थात्—"उचित रीति से सर्व बिंबो की पूजा करनी चाहिये परंतु खास कर मूल बिंबकी, क्यों कि अंदर जाते ही लोगों की दृष्टि और मन पहले उसी पर (मूल नायक पर) ठहरते हैं।"

पुष्पपूजा में विवेक—

केशर चंदन से पूजा कर चुकने पर भगवान को पुष्प चढाये जाते हैं। पुष्प गुलाब, चंपेली, जाई, जुइ, मरुआ, मोगरा आदि के सुगंधी होने चाहिये। देखिये इस विषय में जिनहर्षसूरि अपने 'विंशतिस्थानकविचारामृतसंग्रह' ग्रंथ में क्या फरमाते हैं—

"न शुष्कैः पूजयेद्देवं, कुसुमैर्न महीगतैः।
न विशीर्णदलैः स्पृष्टै-र्नाशुभैर्नाऽविकाशिभिः ॥१॥
कीटकेनापविद्धानि, शीर्णपर्युषितानि च।
वर्जयेदूर्णनाभेन, वासितं यदशोभनम् ॥२॥
पूतिगन्धीन्यगन्धीनि, आम्लगन्धीनि वर्जयेत्।

मलमूत्रादिनिर्माणा-दुत्सृष्टानि कृतानि च ॥३॥
ग्रंथिमादिचतुर्भेदैः, पुष्पैः सद्यस्कसौरभैः।
निजान्यहृदयानन्द-दायिनीं कुरुतेऽर्चनाम् ॥४॥"

तात्पर्य—"जो सूखे हों, जमीन पर गिरे हुए हों, जिनकी पंखडियां खंडित हों, खराब चीज के स्पर्शवाले हों, पूरे तौर से न खिले हों, कीडों से काटे हुए हों, छिले हुए हों, वासी हों, जिन पर मकडी का जाला लगा हो, खराब बास वाले हों, सुगंध रहित हों, खट्टी बास वाले हों, मलमूत्र करते समय पास रहने से छोड दिये गये हों ऐसे फूलों से देव की पूजा न करे। इनके विपरीत १ ग्रंथिम (गुंथे हुए माला आदि) २ वेष्टिम (किसी आकार में वींटे हुए) ३ पूरिम (नकसी के रूप में बने हुए), ४ संघातिम (ढगले के रूप में बने हुए) इन चार प्रकार में से किसी भी प्रकार के ताजे और खुशबूदार फूलों से पूजा करे। ये फूल सूर्य उदय होने के पहले नहीं लाने चाहिये। अंधेरे में जीवजंतु का उपयोग नहीं रहता। लाये हुए फूलों को सुई से छेदना नहीं चाहिये, और उनकी पांखडियां नहीं तोडना चाहिये। वे ज्यों के त्यों अखंड ही चढाने चाहिये जिससे जयणा धर्म का पालन होता रहे।

अङ्ग-अग्रपूजा विषयक भावना—

इस तरह-जयणा और विवेकपूर्वक लाये हुए फूलों से पूजा कर इस मुजब भावना करे—

"हे प्रभो ! ये उत्तम सुगंधी फूल जैसे सुगंध से भरे हुए हैं वैसेही मेरे विचार समकित रूप सुगंध से भरपूर हों"

यहां पर ध्यान रहना चाहिये कि जल चंदन पुष्प और अंगी विगैरह की पूजा को अंगपूजा कहते है, कारण कि उक्त जलादि पदार्थ भगवान् के शरीर पर चढाये जाते हैं ।

धूप दीप अक्षत नैवेद्य और फल पूजा अग्रपूजा कही जाती है ।

इस अग्रपूजा में प्रथम धूप अगरबत्ती या दशांग धूप का करे, उस वक्त मन में भावना करे—

"हे प्रभो ! इस धूपको अग्नि में डालने से जल कर इसका धूंआ ऊर्ध्व गमन करता है इसी तरह मेरी आत्मा के साथ लगे हुए कर्म जल कर मेरी आत्मा ऊर्ध्व गमन करो । अर्थात् मोक्षगति को प्राप्त हो"

धूप करने के बाद पवित्र घीका दीपक करे उस वक्त यह भावना होनी चाहिये—

"हे त्रिलोकीनाथ ! यह दीपक जैसे अन्धकार को दूर कर प्रकाश करता है इसी तरह मेरी आत्मा में रहा हुआ अज्ञान रूप अंधकार दूर हो और आत्मा केवलज्ञान से प्रकाशमान हो"

इसके बाद अक्षत (चावल) से बाजोठ पर अष्टमंगल (१ दर्पण २ भद्रासन (सिंहासन) ३ वर्धमान ४ कलश ५ श्रीवत्स ६ मीनयुगल ७ स्वस्तिक ८ नंद्यावर्त) इनका आले-

खन करे अथवा अकेला स्वस्तिक करे यहां पर ऐसी भावना होनी चाहिये—

"हे नाथ चार गति के भ्रमण को हठा कर मुझे अखंड-पद (मोक्षस्थान) दीजिये जिससे जन्म जरा मरण वाले संसार में मुझे फिर भ्रमण करना न पडे"

इसके बाद शक्कर, ताजी मिठाई विगैरह नैवेद्य चढावे और मनमें भावना करे—

"हे दीन दयाल! जैसे इस आहार का त्याग कर आपने अणाहारी पद प्राप्त किया वैसे मुझे भी यही पद प्राप्त हो"

इसके बाद श्रीफल सुपारी विगैरह फल चढा कर ऐसी भावना करे—

"हे कृपालु स्वामिन्! यह फल आपके चरणों में रख-कर मैं यही चाहता हूं कि मुझे उत्तम मोक्ष रूपी फल जल्द-ही प्राप्त हो"

इस तरह क्रमवार अष्टद्रव्य चढाने के बाद और भी बा-दाम, पिस्ता, इलायची, लवंग आदि मेवा चढाना, अशरफी रुप-या पैसा चढाना, आरती और मंगलदीप करना, बाजे बजवाना इत्यादि सब अग्रपूजा में गिना जाता है। भाष्य में भी कहा है—

"गंधव्व-नट्ट-वाइय-लवणजलारत्तिआइदीवाई।
जं किंचं सव्वंपि उ, ओअरई अग्गपूजाए ॥१॥"

अर्थात्—"गान, नाच, वादित्र, लवणजल, आरती और मङ्गलदीपक आदि जो कुछ पूजा कर्तव्य है उन सबका अग्रपू-

जामें समावेश होता है।"

स्वस्तिक—

द्रव्यपूजा कर रहे तब मंडपमें जाकर चोखा सुपारीकी डबिया खोल कर पाटले पर अक्षतका स्वस्तिक (साथिया) नीचे का दुहा बोलता हुआ करे।

"अक्षतपूजा करतां थकां, सफल करुं अवतार।
फल मागुं प्रभु आगले, तार तार मुझ तार ॥ १ ॥"

उसके बाद—

"दर्शन ज्ञान चारित्रना, आराधनथी सार।
सिद्धशिलानी उपरे, हो मुज वास श्रीकार ॥२॥"

इस तरह दुहा बोल कर चावलकी तीन ढगलियां तथा अर्ध चंद्राकार सिद्धशिलाका आकार बनावे।

इनका भावार्थ भी पढिये—

ऊपर दिये गये साथिये के चार पांखडियां हैं जिनसे देव मनुष्य तिर्यञ्च नरकरूप चार गतियों की सूचना होती है, साथिये के ऊपर चावल की तीन ढगलियां १ ज्ञान २ दर्शन और ३ चारित्र इन तीन रत्न की सूचना करती हैं, ३ ढगलि-

यों के ऊपर जो अर्ध चंद्राकार किया गया है वह सिद्धशिला-का सूचक है, इससे भावना यह होनी चाहिये—

हे त्रिलोकीनाथ ! चार गति के भ्रमण को हठा कर मुझे ज्ञान दर्शन और चारित्र दे कर मोक्षस्थान पहुंचनेको शक्तिमान् कर।

ऐसी भावना के साथ साथिया कर उसपर सुपारी विगैरह फल रक्खे।

भावपूजा—

भगवान् की दाहिनी तर्फ (जीमणी तर्फ) बैठ कर चैत्य-वंदन करना यह भावपूजा है।

चैत्यवंदन के तीन भेद हैं—जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट।

जघन्य चैत्यवंदन वह है जिसमें सामान्य नमस्काररूप कोई एक श्लोक या दुहा बोला जाता है।

मध्यम वह है कि जिसमें चैत्यवंदन नमुत्थुणं दोनों जावंति स्तवन जयवीयराय तथा अरिहंत चेइयाणं बोलकर एक नवकार का काउस्सग्ग कर ऊपर एक स्तुति बोली जाती है।

उत्कृष्ट वह है कि जिसमें चार अथवा आठ स्तुतियोंसे चैत्यवंदन किया जाता है।

इन तीनों भेदों के चैत्यवंदनमें स्तवन स्तुति आदि पाठ शुद्ध अर्थ विचारणापूर्वक बोलना चाहिये। अशुद्ध और उपयोग रहित बोलनेसे उसका यथार्थ फल नहीं मिलता। मिठाई बहुत मीठी होती है लेकिन् उसमें कङ्कर या धूल पडी

हुई हो अथवा खानेवाला खानेमें ध्यानहीन हो तो खाने का स्वाद बिगड जाता है अगर उसका पता ही नहीं लगता। इसी तरह अशुद्ध उच्चारणमें अथवा उपयोगशून्यतामें समझ लेना चाहिये।

अब चैत्यवंदन स्तवनादि मंदिरमें कैसे बोलने चाहिये यह बात भी समझने लायक है।

चैत्यवंदन स्तवनादि कितनेक सर्वत्र (मंदिरमें पडिकमणा या पोसहमें) बोलने लायक होते हैं, कितनेक अमुक स्थानमें कहने लायक। कितनेक पुरुषके कहने लायक होते हैं और कितनेक स्त्रीके कहने लायक।

जिस चैत्यवंदनमें स्तवनमें और स्तुतिमें सिर्फ भगवान् के गुणों का वर्णन हो अथवा अपनी आत्मनिन्दा हो वे मंदिर प्रतिक्रमणादिमें सर्वत्र बोले जाते हैं, परंतु जिनमें आठम ग्यारस आदि तिथियोंका वर्णन हो या दान शील तपस्या ध्यान पूजा विगैरहका उपदेश हो ऐसे स्तवनादि प्रतिक्रमण सामायिक या पौषध में ही बोलने चाहिये मन्दिरमें नहीं बोलने चाहिये।

स्तुतियोंके विषयमें भी यही बात है। पांचम आठम इग्यारस आदि तिथियोंकी स्तुतियां प्रतिक्रमणादिमें बोल सकते हैं परंतु भगवान् के सामने तो भगवान के गुणवर्णनवाली स्तुति ही बोलनी चाहिये।

चार स्तुतियोंमें पहली स्तुतिमें एक तीर्थङ्करका गुणवर्णन, दूसरीमें सब तीर्थङ्करोंका गुणवर्णन, तीसरीमें ज्ञान का

वर्णन और चौथीमें समकितदृष्टि शासन देवदेवियोंकी प्रशंसा आती है। ऐसे क्रमपूर्वक वर्णनवाली चारों स्तुतियां बोलनी चाहिये। कई ऐसी भी स्तुतियां होती हैं जिनमें उक्त क्रम नहीं पाया जाता, वे नहीं बोलनी चाहिये।

ऊपरकी सूचना मुजब स्तुति स्तवनादि भावपूजामें पढने चाहिये और वह भी बहुत शांतिपूर्वक एकाग्रचित्तसे। क्योंकि लाभ स्थिरतामें है उतावलमें नहीं। स्थिरतासे की गई यह भावपूजा द्रव्यपूजासे अधिक श्रेष्ठ है। भावमें वृद्धि करानेवाली होनेसे उत्कृष्ट फल इसीसे प्राप्त होता है। भावपूजा के समय इतना एकाग्र हो जाना चाहिये कि आसपास क्या हो रहा है उस तर्फ जरा भी खयाल न जावे। एक यूरोपीयन् Astrologer (खगोलशास्त्री) Sir Issac Newton सर आइजाक् न्युटन जो कि ई. सन् १६४२ में जन्मा था, जिसकी कुल उम्मर ८४ वर्षकी थी उसका मन इतना एकाग्र था कि जब कभी Philosophical (तत्त्वज्ञान) और Arithmetical (गणित) विद्या संबन्धी विचारोमें मग्न होता था उस वक्त खाना पीना भी भूल जाता, यहां तक कि रात है या दिन है इसकी भी उसको खबर न रहती थी।

इसके सिवाय और भी एक आर्किमिडीज् नामका मशहूर गणितशास्त्री अपना अभ्यास इतनी एकाग्रतासे करता था

कि बाहर क्या हो रहा है उस तर्फ उसका तनिक भी ध्यान न जाता था। एक रोज किसी परदेशी दुश्मनने उसके गांव-पर हमला किया और बंदूक तथा तोपों के धडाकोंसे वहांके मनुष्यों को भगाने लगा उस वक्त यह विद्वान् Geometry (भूमिति) संबन्धी जटिल प्रश्नके सुलझानेमें मशगुल था, फोज के सिपाइयोंने उस के बंद कमरे की दिवार तोड-कर भीतर जाकर कहा—'हमारे ताबे हो जा अन्यथा तेरी जानको खतरा है' यह सुन न तो वह डरा और न गभराया, शांतिसे जवाब दिया—

"Please wait some time till I finish this my knotty ridle."

"कृपाकर थोडी देर ठहरिये मेरा यह कठिन कोयडा पूर्ण करने दीजिये।"

अहा देखिये उसकी एकाग्रता और मन की स्थिरता! यह तो आधुनिक दृष्टांत है परन्तु शास्त्रमें भी सुना जाता है—

एक रोज लङ्कापति रावण अपनी रानी मन्दोदरी के साथ अष्टापद तीर्थ पर गया और चोईस भगवान् की प्रथम अष्ट द्रव्य से पूजा की बाद भावपूजामें लगा। जिस वक्त मंदोदरी नाच करती थी और रावण वीणा बजाते हुए गाते थे उस वक्त उनकी भावना इतनी बढ गई थी कि वहां उन्होंने तीर्थङ्कर गोत्र कर्म बांध लिया।

देखिये कितना है भावपूजा का प्रभाव ? इसी लिये शास्त्रकारोने द्रव्यपूजाका उत्कृष्ट फळ बारवां अच्युत देवलोक तक गमन बताया है और भावपूजा का फल एक अन्तर्मुहूर्तमें मोक्षप्राप्ति तक बताया है। दोनों पूजाओंका लाभ श्रावक को उठाना चाहिये।

उक्त अष्टप्रकारी पूजा के उपरांत सतराभेदी और इक्कीस प्रकारी पूजा भी शास्त्र में बताई हैं जिन का दिग्दर्शन नीचे मुजब है।

सतरा भेदी पूजा

१ स्नात्र करना, विलेपन करना।
२ चक्षु चढाना।
३ सुगंधी फूल चढाना।
४ पुष्पमाला पहनाना।
५ पंचरंगी फूल चढाना।
६ बरास कपूर आदिका चूर्ण चढाना।
७ अलंकार (अंगी आदि) चढाना।
८ फूलों का घर बनाना।
९ फूलों का ढेर करना।
१० आरती तथा मंगलदीवा करना।
११ बत्तियों का दीपक धरना।
१२ धूप करना।

१३ नैवेद्य चढाना।

१४ उत्तम फल चढाना ।

१५ गीत गान करना ।

१६ नाटक करना।

१७ बाजे बजवाना।

इक्कीस प्रकारी पूजा

१ स्नात्र अभिषेक करना।

२ विलेपन करना।

३ अलंकार चढाना ।

४ फूल चढाना।

५ वास खेप चढाना ।

६ धूप करना।

७ दीपक धरना।

८ फल चढाना ।

९ अक्षत चढाना ।

१० पत्र चढाना (नागर वेल के पान चढाना) ।

११ सुपारी बादाम चढाना।

१२ नैवेद्य चढाना ।

१३ जलाभिषेक करना ।

१४ वस्त्र चढाना ।

१५ चामर वींजना।

१६ चांदी के छत्र बांधना।
१७ बाजे बजवाना ।
१८ गीत गान करना ।
१९ नाटक करना ।
२० स्तुति बोलना ।
२१ भंडार वृद्धि करना (चढावा बोल कर देवद्रव्य में वृद्धि करना) ।

इस मुजब यथाशक्ति अष्टप्रकारी सतरा भेदी और इक्कीस प्रकारी पूजा कर श्रावक को भगवान् के आगे अपना भक्ति-भाव प्रकट करना चाहिये ।

दर्शन और पूजन सबन्धी कुछ सूचनायें—

(१) जिनमंदिरमें दर्शन करने का टाइम सूर्य उदय होने के बाद समझना चाहिये अंधेरे में दर्शन करना नहीं कल्प सकता, कई जगह देखा जाता है कि पिंछली रात करीब घडीभर रहती है तब जैन श्राविका दर्शन करने को चली जाती हैं, राजपूताना के कई बडे बडे शहेरों में तो पर्दा वाली श्राविकायें हमेशा पिछली रात में ही दर्शन करने को जाती हैं, इस के सिवाय किसी जगह ऐसा भी देखा गया है कि पजूसण या नवपद ओली के पर्व दिनो में पिछली एक पहर जितनी रात रहती है उस वक्त दर्शनकी उतावल करने लग जाती हैं, मगर तत्त्व-दृष्टि से देखा जाय तो यह प्रवृत्ति बगैर उपयोग की है, जय-

णा धर्म मानने वाले जैन गृहस्थों कों ऐसी प्रवृत्ति बंद करने में ही लाभ है ।

(२) मंदिर में भगवान् का प्रक्षालन (पखाल) सूर्य उदय होने के बाद करना चाहिये जहां तक अंधेरा हो नहीं हो सकता, कारण कि अंधेरे में जीवजंतु का उपयोग नहीं रहता । प्रक्षालन के लिये जल अबोट सींच कर लाना चाहिये वह भी अंधेरे में नहीं बल्के प्रकाश होने पर लाना ठीक है । साथ में यह भी ध्यान रहना चाहिये कि जल का कलश लाने वाला पूजारी जहां तक बन सके खुद स्नान कर शुद्ध कपडे पहन कर जलका कलश लावे ।

(३) भगवान् के प्रक्षालन अंगलुणे करना तथा केशर पूजा करना इत्यादि सब अंगपूजा का कार्य स्वयं श्रावक ही करे, रावल सेवक आदि पूजारी के पास कराना ठीक नहीं, कारण वे नोकर हैं, उन में भक्तिभाव नहीं होता, पूजारी का काम तो जल का कलश लाना,केशर घोंटना, झाडू निकालना, मंदिर के बरतन साफ सूफ करना इत्यादि है, मगर आज कल श्रावको में प्रमाद बहुत बढ जाने से प्रक्षालन अंगलूणा आदि सब कारोबार पूजारी को सुपुर्द कर देते हैं, जिस से पूजारी जी चाहे जैसा कार्य करे, श्रावक लोग तो जब पूजारी प्रक्षालन विगैरा कुल कार्य कर चुके तब सिर्फ भगवान् के बिंदका लगाने को आ जाते हैं,मगर यह प्रवृत्ति अनुचित है,पूंजाभक्ति करना श्रावक का ही फर्ज है, हां अगर कोइ श्रावक ही पूजारी के

अधिकार पर रखा हुआ हो तो बात ओर है, कारण कि वह जैन-श्रावक होने से विवेक और भक्तिपूर्वक ही कार्य करेगा।

यहां कोई सवाल करेगा कि श्रावक पगारदार पूजारी कैसे हो सके ?, इसका उत्तर यह है कि कोई श्रावक गरीब हालत में हो तो वह साधारण खाते से मासिक पगार ले कर पूजारी बन सकता है। साधारण खाते से पगार लेने पर देव-द्रव्य का दोष नहीं लगता। मंदिर में चावल सुपारी फल नैवेद्य विगैरह जो पूजापा आवे वह देवका निर्माल्य होने से श्रावक पूजारी को न देकर मंदिर में झाड़ू निकालने वाला या कोई नोकर हो उसको दे दिया जावे और सिर्फ साधारण खाते से पगार देकर पूजारी रखा जाय तो श्रावक को कोई दोष नहीं।

(४) मंदिर में खुले दीवों की रोशनी न होनी चाहिये। कई जगह देखा है कि जिस दिन मंदिर में अंगी बनाई जाती है उस दिन शामको (संध्या समय में) खूब रोशनी करते हैं वहां खुले गिलासो में तैल भर कर बत्ती लगा देते हैं जिससे पतंगिया विगैरह अनेक जीवों का विनाश होता है। बताइये ऐसी रोशनी किस काम की। अगर रोशनी की इच्छा हो तो काच के बंद फाणस लगावे जिससे जीवों की हिंसा रुक जावे। दीवा रोशनी में पूरा विवेक रखना चाहिये।

(५) अन्त में कहना यह है कि श्रावक लोग अगर बुद्धि-मान् हैं और उन में विचारशक्ति हैं तो अपने यहां प्रतिमाओं का संग्रह न करके जहां खास जरूरत हो वहां भेजे दें, और

ले जाने वाले अपनी खुशी से जो नकरा दें उसी से संतोष करें, क्यों कि मंदिर में ज्यों थोडी प्रतिमा रहेंगी त्यों उनकी पूजा भक्ति विशेष होगी और विशेष लाभ प्राप्त होगा।

३ श्रावक-द्वादशव्रत।

सम्यक्त्व अथवा समकित स्वरूप—

निश्चय दृष्टि से वस्तु के यथार्थ स्वरूप पर श्रद्धा होना उसका नाम 'सम्यक्त्व' है और व्यवहार से १ सुदेव २ सुगुरु और ३ सुधर्म इन तीन तत्त्वों पर श्रद्धा करना सो सम्यक्त्व अथवा समकित कहलाता है।

(१) सुदेव—जो अठारा दोष रहित, बारह गुण सहित चौतीस अतिशय युक्त और पेंतीस गुणयुक्तवाणी से देशना देने वाले, जिनका ज्ञान सर्वव्यापक हैं, जिनको पुनर्जन्म लेना नहीं है और जो नाम स्थापना द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपों से पूजनीय हैं ऐसे प्रभावशाली अरिहंत देव 'सुदेव' हैं।

(२) सुगुरु—पंच महाव्रतधारी, सतरा भेद से संयम को पालने वाले, नवगुप्तिगुप्त ब्रह्मचर्य पालक, पांच समिति और तीन गुप्ति रूप आठ प्रवचन माता के आराधक, बयालीस दोष रहित शुद्ध अहार लेने वाले, तीर्थंकर भगवान् के आगमानुसार शुद्ध प्ररूपणा करने वाले ऐसे निस्पृही त्यागी मुनि 'सुगुरु' हैं।

(३) सुधर्म—तीर्थंकर भगवान् ने समवसरण में बैठ कर बार पर्षदा के सामने द्वादशांगी की परूपणा कर उसमें शुद्ध

स्याद्वादमय नय निक्षेपों सहित साधुधर्म और श्रावक धर्म का जो स्वरूप बताया वही 'सुधर्म' है।

सम्यक्त्वधारीको को इन तीन तत्त्वों का श्रद्धापूर्वक आदर और इनसे विपरीत कुदेव कुगुरु और कुधर्म का त्याग करना चाहिये।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक मिथ्यात्व का त्याग कर सम्यक्त्व स्वीकार करता हूं। आज से जीवित पर्यन्त जिनदेव, महाव्रत-धारी साधु और दयामय जैनधर्म पर ही श्रद्धाविश्वास रक्खूंगा"

सम्यक्त्वधारी को निम्न लिखित सम्यक्त्व संबंधी पांच अ-तिचार, छः अपवाद और चार आगार ध्यान में रखना चाहिये—

अतिचार—

(१) शंका—तीर्थंकर भगवान् के वचनों में संशय करना उसका नाम 'शंकातिचार'।

(२) कांक्षा—अन्य धर्म वालों में कुछ चमत्कार अथवा आडंबर देख कर उस तर्फ झुकने की इच्छा करना।

(३) विचिकित्सा—यह धर्म क्रिया करता हूं परन्तु इस-का फल मिलेगा या नहीं इस तरह शंकाशील होना।

(४) मिथ्यात्विप्रशंसा—अज्ञान कष्ट करने वाले तापस संन्यासियों की प्रशंसा करना उनके तप की महिमा करना।

(५) कुलिंगिसंस्तव—मिथ्यामतावलंबी साधु अथवा गुणहीन वेशधारी का परिचय करना।

अपवाद—

(१) रायाभियोगेणं—राजा के हुकम से कभी समकितधारी को अपने नियमविरुद्ध कार्य करना पडे तो उसमें समकित का भंग नहीं होता।

(२) गणाभियोगेणं—न्याति जाति के समुदाय के कहने से कोइ कार्य करना पडे तो उस में समकित का भंग नहीं होता।

(३) बलाभियोगेणं—बलवान् चोर म्लेच्छादिक के पंजे में फंसा हुआ नियमविरुद्ध कार्य करे तो सम्यक्त्व भंग नहीं होता।

(४) देवाभियोगेणं—भूत प्रेतादिक की परवशता से वर्जित कार्य करे तो भंग नहीं होता।

(५) गुरुनिग्गहेणं—माता पिता अथवा गुरु के कहने से वर्जित कार्य करना पडे तो भंग नहीं होता।

(६) वित्तिकंतारेणं—आजीविका के लिये कोई वर्जित काम धंधा करना पडे तो भंग नहीं होता।

आगार—

(१) अन्नत्थणाभोगेगं—उपयोग विना कोई वर्जित कार्य हो जाय तो भंग नहीं।

(२) सहसागारेणं—अकस्मात् यकायक वर्जित कार्य हो जाय तो भंग नहीं।

(३) महत्तरागारेणं—घर के बडेरे पुरुष के कहने से मिथ्यात्व प्रवृत्ति करनी पडे तो भंग नहीं ।

(४) सव्वसमाहिवत्तियागारेणं–शरीर में सन्निपात अदि भयंकर रोग के आक्रमणसमय में कोई विरुद्ध आचरण हो जाय तो भंग नहीं होता ।

नियम—

१ प्रति दिन——वार देवदर्शन करूंगा ।
२ ,, नौकारसी या मास में——करूंगा ।
३ ,, नौकारमंत्र की माला——गिनूंगा ।
४ महीने में——वार या——तिथि पूजा करूंगा ।
५ प्रति वर्ष छोटी बडी तीर्थयात्रा——करूंगा ।
६ ,, सप्तक्षेत्र में——खर्च करूंगा ।
७ ,, साधारण में——खर्च करूंगा ।
८ ,, ज्ञान खाते में——खर्च करूंगा ।
९ ,, साधर्मिक की भक्ति——वार करूंगा ।

ऊपर के नियम जीवन पर्यन्त पालूंगा । आगाढ कारण विशेष की जयणा है । मन शरीर अथवा आत्मा की परवश दशा में भी जयणा है ।

सम्यक्त्व सब व्रत और नियमों का मूल और आधार कहा गया है इस वास्ते पहले धर्मश्रद्धारूप सम्यक्त्व दृढ करना चाहिये फिर गृहस्थ योग्य दूसरे व्रत नियमों को अंगीकार करें ।

जैन श्रावक के लेने योग्य अनेक नियम अभिग्रहों में स्थूल प्राणातिपातविरमण आदि बारह व्रत मुख्य हैं जिनका संक्षिप्त स्वरूप नीचे दिया जाता है।

स्थूलप्राणातिपातविरमण।

स्वरूप—

स्थूल यानी बेइंद्रिय आदि बडे जीवों के प्राणों के अतिपात (विनाश) से विरमण—रुकना उसका नाम 'स्थूल प्राणातिपात विरमण' है। अर्थात् जीव हिंसा न करने की प्रतिज्ञा।

जीवहिंसा के विषय में द्रव्य और भाव आदि से चतुर्भंगी बनती है जैसे—

(१) द्रव्य और भाव से हिंसा।
(२) द्रव्य से हिंसा भाव से नहीं।
(३) भाव से हिंसा द्रव्य से नहीं।
(४) द्रव्य से नहीं और भाव से भी नहीं।

(१) पहेले भंग की द्रव्य और भावसे हिंसा, जैसे कोई शिकारी 'मैं मारूं ऐसा शोचता हुआ मारने के इरादे से तीर फेंक कर जंगल में हिरण आदि का शिकार करता है, यहां पर द्रव्य जीव मारा जाता है और भाव मारने का इरादा होता है।

(२) भंग में द्रव्य से हिंसा है लेकिन भाव से नहीं, जैसे ध्यान पूर्वक चलते हुए मुनि के पैर नीचे कोई कीडी मर गई, यहां पर द्रव्य—कीडी की हिंसा हुई, मगर भाव से नही, क्यों कि भाव मारने का नहीं था।

(३) भंग में भाव से हिंसा है, द्रव्य से नहीं, जीव मारने का उपाय किया मगर वह मरा नहीं, जैसे अंगारमर्दकाचार्य ने रात को जीव जान कर कोलसे पांवसे दबाये, यहां पर मारने का भाव था मगर द्रव्य से जीव नहीं मरा ।

(४) भंग में न द्रव्य से हिंसा है, न भाव से । जैसे मन वचन और काय इन तीन योगों को स्थिर कर काउस्सग्ग ध्यान में खडे मुनि में न द्रव्य से हिंसा है, न भावसे ।

बीस विश्वा और सवा विश्वा दया—

त्रस—चलते फिरते जीव और स्थावर—पृथिवी—जल—अग्नि—वायु और वनस्पति, ये पांच प्रकार के स्थिर जीव । इन त्रस और स्थावर जीवों की हिंसा का त्याग करने से वीस विश्वा दया होती है, ऐसी दया मुनि मार्ग में पाली जा सकती है। श्रावक सिर्फ सवा विश्वा ही दया पाल सकता है ।
यह हकीकत नीचे के विवेचन से समझ में आयगी ।

"जीवा सुहुमा थूला, संकप्पारंभओ भवे दुविहा।
सावराहनिरवराहा, साविक्खा चेव निरविक्खा ॥१॥"

अर्थात्—जीव के दो भेद हैं—सूक्ष्म और स्थावर, अर्थात् स्थावर और त्रस इन दो भेदों में तमाम जीव आ जाते हैं,उन सब की रक्षा करना उस का नाम वीस विश्वा दया है। इस प्रकार की दया त्यागी मुनि रख सकते हैं, इस लिये मुनि की दया वीस विश्वा मानी जाती है । श्रावक थावर जीवों की

हिंसा का त्याग नहीं कर सकता, कारण कि सचित्त अनाज जल अग्नि आदि काम में लाता है इस वास्ते वीस विश्वा में से थावर संबन्धी दश विश्वा कम किये तब त्रस संबन्धी दश विश्वा शेष रहे।

हिंसा दो तरह से होती है, संकल्प (इरादे) से और आरंभ से। गृहस्थ इरादे से त्रसहिंसा नहीं करेगा मगर आरंभ में अर्थात् घर बार संबन्धी कामों के करने में वह होही जायगी, इस कारण दश में से भी आरंभ के पांच विश्वा निकाल देने से शेष पांच विश्वा रहे।

गृहस्थ संकल्प से भी निरपराध त्रसजीव की हिंसा टाल सकता है, अपराधी की नहीं, इस लिये सापराध के २॥ ढाई विश्वा कम करने पर शेष २॥ विश्वा रहे।

निरपराध त्रस जीवों की संकल्प हिंसा भी अपेक्षा विशेष से हो जाती है इस वास्ते सापेक्षता का १। सवा विश्वा कम करने पर शेष १। विश्वा दया रहती है, बस इतनी ही दया व्रतधारी श्रावक से पल सकती है।

उपयोग रखना चाहिये—

श्रावकों को अपने घर कामों में बहुत उपयोग रखना चाहिये जिस से कि निरर्थक किसी भी जीव की हिंसा न हो। उपले (छाणे) इंधन विगैरह जलाने को लेवे उन-को देख भाल कर लेवे ता कि उन में फिजूल जीव हिंसा न हो। घी, तैल, गुड,

नमक, आटा विगैरह के बरतन खुले मुंह न रक्खें। चूले, पनेहरे पर, खाने तथा सोने की जगह पर, और घरटी तथा ऊखल पर कपडा कंतान या चंद्रोआ बांधना चाहिये जिस से किसी जीव का विनाश न हो। जीव जंतु की उत्पत्ति न हो वैसी हिफाजत से अनाज रक्खें। जल छानने के लिये उमदा खद्दर का गलना रक्खें और उस से जल छान कर जीवानी जैसा जल हो वैसे स्थान में डाले। अर्थात् मीठे जल का जीवानी मीठे जलाशय में और खारे का खारे में डाले, अन्यथा एक दूसरे में रद्दोबदल करने से उन जीवों का विनाश हो जाता है।

सोने के मांचे पलंग या पाट में खटमल पैदा न होने देना चाहिये और किसी हालत में पैदा हो गये हों तो उन को धूप में न रखना चाहिये, क्यों कि ऐसा करने से जीव मर जाते हैं।

भोजन या जल जूठा नहीं रखना चाहिये, क्यों कि उन में संमूर्च्छिम जीवों की उत्पत्ति और हिंसा होती है। मुख से लगा हुआ लोटा गिलास आदि मटकी में न डाले, क्यों कि ऐसा करने से मटकी का जल भी जूठा हो जाने के कारण वहां जीव उत्पन्न होते हैं।

सूखे साक भाजी को देख भाल कर काम में लाना चाहियें। मीठाई पक्वान्न विगैरह सीआले (ठंडी) में एक महीना उन्हाले (गर्मी) में वीस दिन और चोमासे (वर्षाकाल) में १५ पंद्रह दिन के उपरांत न खाने चाहिये, क्यों कि उक्त काल

के उपरांत उन में जीव उत्पन्न हो जाने का अधिक संभव है। कहां तक लिखें, चूला जलाने में मवेशी को घास चारा डालने में दलने में खांडने में चीज वस्तु लेने रखने आदि हर एक काम में पूरा खयाल रख कर कार्य करे, ताकि जीवदया का निरंतर पालन होता रहे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक स्थूल-हिंसा का त्याग करता हूँ। जीवन पर्यन्त निरपराध त्रस (स्थूल) जीवों की संकल्प हिंसा (सविचारहिंसा) न स्वयं करूंगा न दूसरे से कराऊंगा।"

अतिचार—

१ वध—क्रोध या अभिमान के वश हो कर मनुष्य अथवा गाय, भेंस, बैल, घोडा, ऊंट आदि पशु पक्षियों को निर्दयपनेसे मारे प्रहार करे इसका नाम 'वध' अतिचार है।

(२) बन्ध—घोडा बैल गाय भेंस आदिको सख्त बंधन से बांधे अथवा गुन्हेगार मनुष्य को भी बुरी हालत से मजबूत बांधे जिस से उन का नाकों दम आ जावे इस को 'बन्ध अ-तिचार' कहते हैं।

(३) छविच्छेद—बैल ऊंट आदि का कान आदि शरीर के अवयव का छेद करना कराना सो 'छविच्छेद' नामा अतिचार है।

(४) अतिभारारोपण—बैल ऊंट आदि के ऊपर उनकी

शक्ति के अनुसार जितना भार बोझा लादना चाहिये उस से ज्यादह लादना उसका नाम 'अतिभारारोपण' अतिचार है।

(५) भक्तपान व्यवच्छेद—गाय भेंस बैल ऊंट आदिको खुराक देना बंध कर दे अथवा खुराक में से कुछ निकाल ले या खाने का समय व्यतीत कर खिलावे तो अतिचार होता है, अपने नोकर दास दासी की रोजी में खलल पहुंचावे या बगैर कारण पगार में कमी करे तो भी दोष है। किसी पर कामण टूमण मारण मोहन उच्चाटण मूठ चलाना विगैरह भी इसी व्रत के अतिचारों में गिना जाता है।

स्थूलमृषावादविरमण।

स्वरूप—

'स्थूल' का अर्थ है बडा, 'मृषावाद' का अर्थ है झूठ बोलना और 'विरमण' का अर्थ है रुकना, इस कारण 'स्थूलमृषावाद विरमण' का शब्दार्थ 'बडे झूठ बोलने से रुकना' यह होगा, गृहस्थसे छोटे झूठ वचन का तो त्याग नहीं हो सकता मगर बडे झूठ वचन का त्याग अवश्य करना चाहिये।

मृषावाद दो प्रकार का है—१ द्रव्य मृषावाद और २ भाव मृषावाद। लेन देन में जो झूठ वचन बोला जाता है वह 'द्रव्य मृषावाद' है और शास्त्र विरुद्ध भाषण करना–उत्सूत्र वचन बोलना यह 'भाव मृषावाद'।

द्रव्य मृषावाद में १ कन्यालीक, २ गवालीक, ३ भूम्य-

लिक, ४ स्थापनामृषा और ५ कूटसाक्षी, इन पांच बडे असत्यों का त्याग अवश्य करना चाहिये।

इन असत्योंका विवरण नीचे मुजब है।

(१) कन्यालीक–कन्या संबंधी झूठ, कन्या के विषय में किसी के पूछने पर अथवा वगैर पूछे गुणवती को निर्गुणा बतावे और निर्गुणा को गुणवती अथवा उसकी उमर कमी बेशी बतावे, लक्षणों में विपरीत बात कहे उस का नाम 'कन्यालीक' है।

जहां तक हो सके कन्या के लेन देन की झंझट में व्रतधारी श्रावक को पड़ना ही ठीक नही, पर वैसी मध्यस्थ वृत्ति न रह सके और कन्या संबंधी व्यवहार में पड़ना ही पड़े तो जो सही हकीकत हो वही कहे, किसी तरह झूठ न बोले।

कन्यालीक की ही तरह अन्य किसी भी मनुष्य संबन्धी असत्य नहीं बोलना चाहिये।

(२) गवालीक–गाय भेंस बैल हाथी घोडा विगैरह की उमर के बारे में उन के गुण दोष बताने में उन की कीमत करने में जैसा हो वैसा कहे कभी झूठ न बोले।

(३) भूम्यलीक–जमीन संबंधी झूठ दूसरे की जमीन को अपनी कहना, थोडी जमीन हो और ज्यादह बताना, घर दुकान बंगला हवेली वाडी बाग विगैरह के बारे में झूठ बोलना, दूसरे के कबजे का मकान जूठी गवाही खडी कर राज के हुकम से अपने कबजे कर लेना इत्यादि असत्य का

नाम भूम्यलीक है। श्रावक को चाहिये कि ऐसे झूठ से दूर रहे।

(४) **स्थापना मृषा**—विश्वास पात्र जान कर अपने घर विना साक्षी विना लिखत—दस्तावेज के रखी हुई अमानत को दबा लेने की नीयत से 'मेरे पास नहीं है, मैं इस विषय में कुछ भी नही जानता' इस प्रकार अपने यहां रखी हुई चीज के विषय में नाकबूल होना इसको 'थापणमोसा'—स्थापना मृषा कहते हैं।

(५) **कूट साक्ष्य**—झूठी शहादत। दो आदमी आपस में झगडते हों उस वक्त पक्षपात से या लोभ के वश हो कर झूठी गवाही देना 'कूट साक्ष्य' कहलाता है। व्रतधारी को झूठी गवाही कभी नहीं देना चाहिये।

प्रतिज्ञा—"मैं देवगुरु—साक्षिक स्थूल असत्य भाषणका त्याग करता हूं। आजीवन कन्यालीकादि पांच प्रकार का असत्य न स्वयं बोलूंगा न दूसरे से बोलाऊंगा।"

अतिचार—१ सहसाभ्याख्यान—विना विचारे किसी पर झूठा इलजाम लगाना, जैसे—'तू चौर है, तू लोफर है' इत्यादि। व्रतधारी ऐसा किसी पर दोष न लगावे, अगर किसी में अवगुण हो तो भी उस की निंदा करना तक मना है तो झूठा इलजाम लगाना तो बडा ही अपराध है।

(२) **रहस्याभ्याख्यान**—खानगी बात करनेवालों पर झूठा इलजाम लगा कर कहना 'तुम अमुक बात करते हो'

इस का नाम ' रहस्याभ्याख्यान ' है।

(३) स्वदारमंत्रभेद-अपनी स्त्री की गुप्त वात किसी के आगे जाहिर करना, खानगी मर्म प्रकट करना इसका नाम ' स्वदार-मंत्र-भेद ' अतिचार है।

(४) मृषा उपदेश-किसी को दुःख में डालने के लिये झूठी राय देवे, झूठी दलीलें सिखावे, टंटे फिसाद उत्पन्न करने वाली तरकीबें बतावे इस को मृषाउपदेशनामक अतिचार कहते हैं।

(५) कूट लेख-किसी के नाम पर झूठा खतपत्र लिखना असल आंक को तोड कर दूसरा जाली अंक लिखना या अक्षर रद्दोबदल करना झूठी मुहर छाप लगाना ये सब काम 'कूटलेख' अतिचार में शामिल हैं।

स्थूलअदत्तादानविरमण.

स्वरूप-

जिस चोरी से राजदरबार में सजा मिले या दुनिया में बदनामी हो ऐसी बडी चोरी नहीं करनी चाहिये।

अदत्तादान के दो भेद हैं १ द्रव्य अदत्तादान २ भाव अदत्तादान।

किसी का घर फाडना जबरन किसी के पास से चीज छीन लेना किसी की रखी हुई चीज के देने में इनकार करना तथा हीरा मोती पन्ना विगैरह में झूठे सच्चेका अदल वदल करना यह तमाम द्रव्य अदत्तादान है।

२ भाव अदत्तादान-वर्ण गंध रस स्पर्श आदि तेईस विषय तथा आठ कर्म की वर्गणा यह आत्मा से पर वस्तु हैं इन को ग्रहण करना यह भाव अदत्तादान।

प्रकारान्तरसे अदत्तादान के ४ भेद ह–१ स्वामि अदत्त २ जीव अदत्त ३ तीर्थंकर अदत्त ४ गुरु अदत्त।

(१) किसी भी चीज को उस के मालिक की आज्ञा सिवाय लेना उस को 'स्वामि अदत्त' कहते हैं।

(२) अपने दास या दासी अथवा अन्य किसी भी जीव को उस की इच्छा बगैर दूसरे के सुपुर्द करना लेना 'जीव अदत्त' कहा जाता है, क्यों कि उस में उस के जीव की आज्ञा नहीं होती।

(३) जिस चीज के लिये तीर्थंकर भगवान्ने निषेध किया हो वह नही लेना चाहिये, लेवे तो तीर्थंकर अदत्त-चोरी कही जाती है। जैसे मुनि के वास्ते भगवान् ने अशुद्ध आहार लेने का निषेध किया है तथा श्रावक के लिये अभक्ष्य वस्तुका निषेध किया है अगर मुनि और श्रावक इन निषिद्ध चीजों को ग्रहण करें तो 'तीर्थंकर अदत्त' लगता है।

(४) गुरु की आज्ञा सिवाय जो चीज ग्रहण करे उस को 'गुरु अदत्त' कहते हैं।

इस के सिवाय किसी की कुछ भी चीज रास्ते में गिरी हुई मिले तो उस के मालिक का पता लगा कर उस के हवाले कर दे, यदि मालिक का पता न लगे तो उस को धर्मादे कर

दे, अगर वह चीज ज्यादह कीमती हो और सब धर्म मार्ग में खर्च करने को जी न चले तो जितना जी चले उतना तो अवश्य खर्च करे।

अपनी जमीन में से धन निकला हो तो वह स्वयं रख सकता है, उस में चोरी नहीं लगती।

किसी दूसरे का मकान किराये लिया हो और उस में से कभी खोद काम करते धन निकले तो उस का हकदार मकान का मालिक होता है उस को वह धन दे देना चाहिये, अगर ऐसा करने में अपना दिल अनाकानी करता हो तो धन में से आधा हिस्सा खुद रक्खे और आधा धर्म मार्ग में खर्च करे।

अपने पास किसी की रकम हो और उसका मालिक गुजर गया हो और उस का कोई वारस भी न हो तो वह रकम खुद न रख कर गांव के पंचों के सुपुर्द करे अथवा पंच कहे वहां खर्च कर दे।

अपने घर की मिलकत के मालिक जब तक माता पिता या और कोई बडेरा हो तब तक व्रतधारी उन की आज्ञा ले कर चीज उठावे, हां, अगर माता पिता अपना पुत्र जान कर कोई एतराज न करें तो वह उनकी आज्ञा के सिवाय भी चीज उठा सकता है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक स्थूल अदत्तादान का त्याग करता

हूँ। आजीवन न स्वयं बड़ी चोरी करूंगा, न अन्य से कराऊंगा।"

अतिचार—

(१) स्तेनाहृत—चोरी का माल खरीदना यह स्तेनाहृत अतिचार है। चोरी का माल लेने वाला भी एक तरह का चोर ही है। हेमचंद्राचार्य ने योगशास्त्र में सात प्रकार के चोर बताये हैं देखो—

"चौरश्चौरापको मंत्री, भेदज्ञः काणकक्रयी।
अन्नदः स्थानदश्चैव, चौरः सप्तविधः स्मृतः ॥१॥"

तात्पर्य—चोरी करने वाला १, चोरी कराने वाला २, चोरी की राय देने वाला ३, चोरी का भेद जाननेवाला ४, चोरी का माल खरीदने वाला ५, चोर के खान पान की व्यवस्था करने वाला ६, तथा चोर को रहने की जगह देनेवाला ७, ये सात प्रकार के चोर होते हैं।

(२) स्तेनप्रयोग—चोरी करने वाले को चोरी की प्रेरणा करना 'तुम आजकल चुपचाप क्यों बैठे हो?, तुम्हारे पास खर्चा न हो तो मैं दूं, तुम्हारी लाई हुई चीज मैं बेच डालूंगा' इस तरह प्रेरणा करना इसका नाम 'स्तेनप्रयोग' अतिचार है।

(३) तत्प्रतिरूपक व्यवहार—अच्छी चीज में खराब चीज मिला कर बेचे, जैसे दूध में जल, केशर में कसुंबा, घी में वेजिटेबल घी मिला कर बेचे। पुराने कपडे को रंग कर नये कपडे के भाव में बेचे। यह तीसरा अतिचार है।

(४) विरुद्ध गमन—अपने देश के राजाने जहां जाने को मना किया हो वहां जावे तो चोथा ' विरुद्ध गमन ' नाम का अतिचार।

(५) कूटतुला कूटमान—खोटे तोल माप रक्खे, कमती तोल से देवे और अधिक तोल से लेवे यह पांचवाँ अतिचार।

स्वदारसंतोष—परस्त्रीविरमण

स्वरूप—

इस व्रत के दो भाग हैं—' स्वस्त्रीसंतोष ' और ' परस्त्री विरमण। ' अपनी स्त्री से संतोष कर दूसरी स्त्री का त्याग करना इसका नाम है ' स्वदार संतोष ' और दूसरे की स्त्री का त्याग करना उसका नाम ' परस्त्री विरमण'।

मैथुन दो प्रकार का होता है, १ द्रव्य मैथुन और २ भाव मैथुन।

द्रव्य मैथुन का अर्थ है स्त्री पुरुष का शारीरिक संबंध, और भाव मैथुन है शरीर से संबंध न होते हुए दिल में स्त्री विषयक ध्यान करना अर्थात् दिल में विषयों की चाहना करना।

भाव मैथुन संसारी से कतई बंद होना कठिन है परंतु द्रव्य मैथुन में परस्त्री का त्याग कर अपनी स्त्री से संतुष्ट रहना गृहस्थ से हो सकता है। अपनी स्त्री से भी दिन को कभी संबंध न करना चाहिये, धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि वैद्यक दृष्टि से भी दिन में स्त्रीसंग का निषेध है, क्यों

कि वैसा करने से संतान कम जोर होती है और उस की उमर भी थोडी होती है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक परस्त्री विषयक स्थूल मैथुन का त्याग करता हूँ। अपनी कायासे आजीवन परस्त्री गमन नहीं करूंगा।"

अतिचार--

(१) अपरिगृहीता गमन—जिस के स्वामी नहीं है ऐसी कुंवारी विधवा वेश्या आदि से 'यह दूसरे की स्त्री नहीं है' इस कल्पना से संबन्ध करे तो 'परस्त्री त्यागी' को अतिचार लगे और 'स्वस्त्री-संतोष-व्रतधारी' का व्रतभंग हो।

(२) इत्वरपरिगृहीता गमन—थोडे समय के लिये वेश्या आदि को अपनी कर रख ले और अपनी समझ उस से समागम करे तो 'स्वस्त्री संतोषव्रत' वाले को अतिचार लगे।

(३) अनंगक्रीडा—काम व्रासना जगाने की चेष्टा को अनंगक्रीडा कहते हैं। चतुर्थव्रतधारी को जिनसे काम विकार हो ऐसे वचन नहीं बोलने चाहिये और कामोत्तेजक चेष्टा न करनी चाहिये. करे तो अतिचार लगे।

(४) परविवाहकरण—अपने पुत्र पुत्री आदि के सिवाय बडाई के खातिर अथवा पुण्य मार्ग समझ कर दूसरों के विवाह शादी करावे तो अतिचार लगता है, जहां तक बन सके व्रतधारी विवाह जैसे कार्यों में अगुआ न बने, कहीं

अपने बगैर न चले तो सांसारिक रूढि समझ कर वह कार्य करे, दिल में हर्ष या खुशी न मनावे।

(५) तीव्र अनुराग—पुरुष का स्त्री पर और स्त्री का पुरुष पर हद से ज्यादह प्रेम 'तीव्रानुराग' कहलाता है। व्रतधारी को इस प्रकार के अमर्यादित विषय राग में लीन न होना चाहिये। क्यों कि इस प्रकार का विषयानुराग चोथे व्रत का पांचवाँ अतिचार है। व्रतधारी को विकारों को रोकना चाहिये। ऐसा न करने से इच्छा अत्यंत बढती जाती है और परिणाम स्वरूप अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचार और अनाचार तक हो जाते हैं।

अति स्त्री प्रसंग से धर्म हानि ही नहीं शरीर हानि भी होती है इस लिये उक्त अतिचार टाल कर श्रावक इस व्रत पर साबित कदम रहे।

नियम—

कृष्णपक्षकी———इन तिथिओं में ब्रह्मचर्य रक्खूंगा।
शुक्लपक्षकी———इन तिथिओं में ब्रह्मचर्य रक्खूंगा।
प्रतिमास———दिन ब्रह्मचर्य पालूंगा।
अथवा सर्वथा ब्रह्मचर्य पालूंगा।

स्थूल परिग्रहपरिमाण

स्वरूप—

अपनी हकदारी के माल मिलकतका परिमाण कर इच्छा को काबूमें लाना इसका नाम 'परिग्रहपरिमाण' है।

यह जीव अनादि काल से परिग्रहमें आसक्त है । इसकी इच्छा कभी पूरी नहीं होती, उत्तराध्ययन सूत्र में इच्छा को आकाश की उपमा दी है इसका भी यही कारण है कि जीव की 'इच्छा' का कहीं अंत ही नहीं आता। इस अमर्यादित इच्छा को मर्यादित करने के लिये इस को परिमित करना चाहिये।

परिग्रह के दो भेद हैं—१ द्रव्यपरिग्रह और २ भावपरिग्रह।

धन धान्यादि नौ प्रकार के परिग्रह को 'द्रव्यपरिग्रह' कहते हैं और लोभ ममता मूर्च्छा को 'भावपरिग्रह'। द्रव्यपरिग्रह के १ धन २ धान्य ३ क्षेत्र ४ वास्तु ५ रुप्य ६ सुवर्ण ७ कुप्य ८ द्विपद और ९ चतुष्पद ये नव भेद हैं।

(१) धन—दोआनी, पावली, घेली, रुपया, विगैरह रोकड और हुंडी, नोट विगेरह, अथवा गणिम—(नालियर विगैरह जो गिनती से बेचा जाय) धरिम—(गुड प्रमुख जो तोल कर बेचा जाय) परिच्छेद्य—(सोना चांदी रत्न जवाहरात आदि जो परीक्षा से बेचा जाय) मेय—(घी दूध आदि वस्तु जो माप कर बेची जायँ) भेद से धन ४ प्रकार का है। इसका परिमाण करना इस को 'धन परिमाण' कहते हैं।

(२) धान्य—१ चावल, २ गेहूं, ३ जुआर, ४ बाजरी, ५ जव, ६ मुंग, ७ मोठ, ८ उडद, ९ छूंठ, १० बोडा, ११ मटर, १२ तुअर, १३ किसारी, १४ कोद्रवा, १५ कंगणी, १६ चणा, १७ वाल, १८ मेथी, १९ कुलथ, २० मसूर, २१ तिल, २२ मंडवा, २३ कूरी, २४ बरटी, २५ मक्की इन में से जिस

धान की जितनी जरूरत हो उसका वर्षभर के लीये सेर या कलसी में परिमाण कर लेना। व्यापार के लिये अधिक रखना पडे उसकी जयणा रखना।

(३) क्षेत्र–धान बोने के खेत तथा बाग बगीचे इनका परिमाण करना।

(४) वास्तु–घर हवेली नोहरा तथा दूकान बिल्डींग विगैरह, इनका परिमाण करना। घर के दूसरी खिडकी खोलने तथा दूकान, तबेला, गोदाम, वखारी आदि किराये रखनेकी जयणा। किराये के मकानकी, अपनें कुटुम्बी संबंधी और मित्र के मकानकी, मालिक के मकान की मरम्मत कराने अथवा कमठा करानेकी जयणा।

(५) रुप्य–नाणे के रूप में चलते हुए सिक्कों को छोड कर चांदी, चांदी के गहने आदि, इनका तोल में परिमाण करना।

(६) सुवर्ण–सिक्कों को छोड कर शेष सोना तथा भूषणगत सोना इस का परिमाण करना।

(७) कुप्य–तांबा, पीतल, सीसा, लोह आदि धातु के बरतन आदिका नाम कुप्य है। इनकी संख्या कर अथवा मणों या सेरों में तोल कर कुल इतने या इतने मण धातु रखनेका नियम कर लेना। कारण वश दूसरों के वास्ते परिमाण के उपरान्त बरतन लाने पडे तो जयणा।

(८) द्विपद–द्विपद का अर्थ यहां मनुष्य है। अपने आश्रित

दास दासी आदि रखने हों उन की गिनती कर नियम लेना। नोकर, चाकर, मजदूर आदि रखनेकी जयणा।

(९) चतुष्पद-गाय भैंस घोडा ऊंट बैल आदि जानवर चतुष्पद कहलाते हैं, इन की आवश्यकतानुसार गिनती कर नियम लेना। कभी कारण वश किसी अन्य की मवेशी थोडे समय के लिये रखनी पडे अथवा आसीवाले घाली हुई मवेशी कभी आ जाय तो बेचे वहां तक रखनेकी जयणा।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक अपरिमित परिग्रह का त्याग करता हूं और जीवन पर्यन्त के लिये धन धान्यादि वस्तु विषयक इच्छाका परिमाण करता हूँ।"

अतिचार—

(१) धन-धान्यपरिमाणातिक्रम-परिमाण से अधिक धनके बढ जाने पर लोभ के वश कुछ रकम पुत्र स्त्री आदि के नाम पर चढा दे तथा अनाज अपने नियम मुजब घर में रख कर बाकी दूसरे के घर पर रख छोडे और जब चाहे तब ले आवे, इस के सिवाय व्रत लेने के समय में कच्चे मण के हिसाब से अनाज रक्खा हो और परदेश जाने पर वहां पक्के मण का तोल जान कर पक्के मण के हिसाब से रक्खे, इत्यादि करतब करने वालें को पहला अतिचार लगता है।

(२) क्षेत्र-वास्तुपरिमाणातिक्रम-घर, दूकान आदि के परिमाण से अधिक हो जाने पर बिचली दिवार तोड कर दो

का एक घर बना देवे, हद तोड कर दो तीन खेतों का एक खेत कर लेवे और दिलमें ख्याल करे 'नियम के उपरान्त मैं ने कुछ नहीं रक्खा, ऐसी करतूत करने वालों को दूसरा अतिचार लगता है।

(३) रूप्यसुवर्णप्रमाणातिक्रम—अपने लिये या अपनी स्त्री आदि के लिये सोना चांदी के जेवर भारी तोल के बनवा कर संख्या कायम रख कर सोना चांदी अधिक प्रमाण में रखे तो तीसरा अतिचार लगता है।

(४) कुप्यपरिमाणातिक्रम—तांबा पीतल आदि के बासणों बरतनों की संख्या करने के बाद संपत्ति बढ जाने पर वे वासण वजन में भारी तोल के बनवावे। मन में सोचे 'मैंने वासणों की जो गिनती की है वह टूटती तो नहीं है, फिर वजन में अधिक होने में क्या हर्ज है' इसी तरह पहले कच्चे तोल के परिमाण में रख कर फिर पक्के तोल के परिमाण से रख लेवे तो चोथा अतिचार लगता है।

(५) द्विपद—चतुष्पदअतिक्रम—दास दासी गाय भैंस परिमाण से अधिक हो जावें तब बेच कर फिर गर्भ धारण करावे, तथा अपने भाई बहनों के नाम के कर रख देवे तो पांचवा अतिचार लगता है।

नियम—

१ रोकड धन रु.———	लाख या	हजार
२ कुल धान्य कलसी	अथवा	मण

३ खेतीबारीकी जमीन	एकड या		बीघा
४ कुल मकानात			
५ चांदी	मण या	सेर या	तोला
६ सोना	सेर अथवा		तोला
७ धातु के वर्तन	नंग अथवा	मण	के
८ दास—दासियां कुल			
९ चतुपष्द—जानवर कुल			
१० सर्व परिग्रह मिल कर रु.	लाख या		हजार

परिग्रह परिमाण व्रत धारियों को चाहिये कि अपने व्रत धन, धान्यादिका जो परिमाण किया हो उसके ऊपर परिग्रह बढ जाय तो उस को धर्म मार्ग में खर्च कर डागें।

व्यापार के निमित्त तेजी मंदी के समय में सोना, चांदी, धातु, धान्य आदि बेच खरीद कर परिग्रह की जातियोंमें कमी बेशी करना पडे उस की जयणा रखना चाहिये परन्तु कुल परिग्रह का अंक नियम के उपर जाते ही उसे धर्म मार्ग में खर्च कर देना चाहिये।

इस प्रकार पांच अणुव्रतोंका दिग्दर्शन कराया, अणुव्रतों के आगे तीन गुणव्रत आते हैं जिन के नाम नीचे मुजब हैं—

१ दिक्परिमाण गुणव्रत २ भोगोपभोगपरिमाण गुणव्रत और ३ अनर्थदंडविरमण गुणव्रत।

इन का गुणव्रत नाम पडने का कारण यह है कि इन

व्रतों के पालन से पूर्वोक्त पांच अणुव्रतों की पुष्टि अर्थात् उत्तरोत्तर गुणवृद्धि होती है जैसे दिशिपरिमाण व्रत धारण करने से परिमाण के ऊपर की तमाम दिशाओं के जीवों को अभयदान मिलता है और प्राणातिपातविरमण व्रत की पुष्टि होती है। बाहर के तमाम जीवों के साथ झूठ बोलना बंद होने से दूसरे व्रत की पुष्टि होती है। बाहर के क्षेत्र में रही हुई वस्तु की चोरी का त्याग होने से तीसरे व्रत की पुष्टि होती है। बाहरी क्षेत्र की सर्वस्त्रियों से मैथुन चेष्टा का त्याग होने से चोथे व्रत की पुष्टि होती है और बाहरी सभी चीज वस्तुओं का क्रय विक्रय बंद होने से पांचवें व्रत की पुष्टि होती है।

दिक्परिमाण व्रत.

स्वरूप—

पूर्व पश्चिम उत्तर और दक्षिण ये चार दिशा और आग्नेयी (अग्नि कोण) नैर्ऋत कोण, वायव्य कोण और ईशान कोण ये चार विदिशा कहलाती हैं। ऊर्ध्व (ऊपर) और अधो दिशा (निचली दिशा) मिलाने से कुल १० दिशाएं होती हैं। इन दश दिशाओं में जाने आने का नियम करना ' दिक्परिमाण व्रत ' है। दिशाओं में जाना आना तीन तरह से होता है जलमार्ग से स्थलमार्ग से और आकाश मार्ग से।

जलमार्गसे नाव, आगबोट, स्टीमर आदिमें, स्थलमार्ग से

गाडी, एका, रेलगाडी, मोटर, साईकल आदि पर और आकाश मार्ग से विमान, हवाई जहाज एरोप्लेन विगैरह पर बैठ कर दशों दिशाओं में जाने आनेका योजनों में, कोशों में, मीलों में, गजों में अगर कदमों में नियम करना चाहिये। चार विदिशाओं का ठीक पता न रहने के कारण आज कल पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊर्ध्व और अधो इन छः दिशाओं का ही नियम किया जाता है।

कूप, बावडी, टांका, भूमिगृह सुरंग आदिमें उतरना अथवा पहाडसे नीचे उतरना 'अधो दिशा गमन' है और नीचेवालों को पहाड पर चढना 'उर्ध्व दिशागमन'। व्रत लेनेवालों को अपनी स्थिति का विचार कर के इस विषय में नियम करना चाहिये। नियम किये हुए क्षेत्र के बाहर सांसारिक कार्य के लिये अथवा मौज शोक और हवा खोरी के निमित्त नहीं जाना चाहिये, तीर्थयात्रा के निमित्त जाने की जयणा। पवन के तूफान से नाव आगबोट विगैरह घसीट कर हद के आगे ले जाय, भूल से हद के आगे चला जाय, चौर विगैरह पकड कर दूर ले जाय तो व्रत भंग नहीं होता। नियत क्षेत्र के बाहर कागज–पत्र तार टेलीफोन भेजने मंगाने की जयणा।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक दिशा गमन को नियमित करता हूं। भिन्न भिन्न दिशाओं में जाने के लिये रक्खे हुए अव-

कोश के उपरान्त न मैं स्वयं जाऊंगा न दूसरे को भेजूंगा।"

अतिचार—

(१) ऊर्ध्वदिशातिक्रम–प्रमाद से या भूलसे ऊर्ध्व दिशा में परिमाण से अधिक ऊपर चढे तो 'ऊर्ध्वदिगतिक्रम' नामातिचार।

(२) अधोदिशातिक्रम—भूल प्रमाद से परिमाण से ज्यादा नीचे जाने से 'अधोदिगतिक्रम' नामातिचार।

(३) तिर्यग्दिशाअतिक्रम—पूर्व पश्चिमादि तिरछी दिशा विदिशा में परिमाण से अधिक भूल से खुद जावे या अपने नौकर को भेजे तो तीसरा अतिचार।

(४) परस्पर परिमाण परावर्तन–एक दिशा में कम कोश रक्खें है और दूसरी में अधिक, कालान्तर में कम परिमाण वाली दिशा में अधिक दूर जाने के संयोग उपस्थित हो जाय तब जिस दिशामें अधिक दूर जानेकी छूट है उस को कम कर दे और कम परिमाण को अधिक बढा दे, और यह सोचे कि मैं अपने नियमित योजनों से अधिक आगे नहीं गया। इस प्रकार दिशाविपरिणाम करने से चौथा अतिचार लगता है।

(४) स्मृतिअंतर्धान—अपने नियम को भूल जावे, न मालूम पूर्व दिशा में १०० कोश रक्खे हैं या ५०। इस तरह संशय में पडा हुआ १०० कोश का परिमाण होते हुए भी ५० कोश से अधिक चला जाय तो पांचवाँ अतिचार

लगता है।

नियम—

१ पूर्व में	______	योजन जाऊंगा।
२ दक्षिण में	______	योजन जाऊंगा।
३ पश्चिम में	______	योजन जाऊंगा।
४ उत्तर में	______	योजन जाऊंगा।
५ ऊंचा	______	योजन चढूंगा।
६ नीचा	______	योजन उतरूंगा।

छोटे बड़े पहाडों के ऊपर चढना, टीलो-टेकरों वृक्षों मकानों पर चढना भी ऊर्ध्व दिशा गमन में शुमार है। इसी प्रकार ऊपरवालों को नीचे उतरना अधोदिशागमन में।

भोगोपभोगपरिमाण.

स्वरूप—

इस व्रत में खाने पीने की वस्तु का परिमाण होता है, तथा जिन में ज्यादह हिंसा होती है ऐसे व्यापार धंधों का त्याग किया जाता है, बाईस अभक्ष्य और बत्तीस अनंतकाय का त्याग किया जाता है। चौदह नियम भी इसी के अंतर्गत है।

आहार, फल, पुष्प, तैल अत्तर विगैरह जो एक वार काम में आवे उस को 'भोग' और घर मकान कपडे जेवर स्त्री विगैरह जो वार वार उपयोग में आवे उस को 'उपभोग' कहते हैं, दोनों तरह की वस्तुओंका नियम करना सो 'भोगो-

पभोगपरिमाण ' व्रत कहलाता है ।

इस व्रत के अनुसार श्रावक को निर्दोष आहार और निर्दोष व्यवहार करना चाहिये। कमसे कम वह २२ अभक्ष्य और ३२ अनंतकाय का त्याग तो अवश्य करे।

२२ अभक्ष्य.

१ वड का फल
२ पीपले का फल
३ पिलखण (पार्श्व पीपले) का फल
४ कठंबर का फल
५ उदुंबर (गूलर) का फल।

ये पांच फल अभक्ष्य याने खाने लायक नहीं हैं, कारण कि इन में बहुत से सूक्ष्म जीव होते हैं।

६ मदिरा (दारु)
७ मांस
८ मधु (शहद)
९ मक्खन

ये चार ' महाविगई ' कहलाते हैं। इन में उसी वर्ण के सूक्ष्म जीव उत्पन्न होते हैं, वे तद्वर्णवाले और अतिसूक्ष्म होने से देखने में नहीं आते, ये महाविगइयां चारों अभक्ष्य गिनी जाती हैं।

१० हिम (बरफ) यह असंख्यात अप्काय जीवों का बना हुआ पिंड है, इस के खाने से जल के जीवों की हिंसा

के अतिरिक्त चेतना शक्ति कमजोर होती है, तत्काल शरदी करता है बल को क्षीण करता है इस लिये यह भी अभक्ष्य है।

११ सर्व प्रकार का जहर (विष)—अफीम विगैरह जहरी पदार्थ प्राणघातक होने से अभक्ष्य हैं। अफीम सोमल भांग गांजा चरस तमाखू विगैरह जहरी पदार्थों का सेवन करने वालों की जो दशा होती है उसका वर्णन करने की जरूरत नहीं। इन के खाने पीने की जिन को आदत पड जाती है उन की परवशता का क्या वर्णन किया जाय?, भोजन के बगैर वे रह सकते हैं लेकिन् इन पदार्थों के बगैर नहीं, उन की शारीरिक और मानसिक प्रकृति भी पराधीन बन जाती है। अभ्यस्त व्यसन की प्राप्ति होने पर ही उन का शरीर और मन किसी भी काम के योग्य हो सकता है, अन्यथा नहीं। इस प्रकार के बुरे परिणामों से बचने के लिये उक्त सभी प्रकार के विषों का त्याग करना चाहिये।

१२ करहा—करहे जो आकाश से जल के साथ बर्फ के टुकडे गिरते हैं जिनको 'ओला' कहते हैं वे भी अभक्ष्य हैं।

१३ कच्ची मिट्टी—सर्व प्रकार की कच्ची मिट्टी अभक्ष्य है। कच्ची मिट्टी सचित्त है इस के खाने से दो तरह के नुकसान होते हैं। एक तो यह कि मिट्टी के भक्षण से पेट में कई एक जंतु उत्पन्न होते हैं और पांडुरोग आमवात पित्त पथरी आदि अनेक दर्द भी खडे होते हैं। दूसरा—व्यर्थ एकेंद्रिय

जीवों की हिंसा होती है। इस लिये इस को अभक्ष्य समझना चाहिये।

१४ रात्रिभोजन—रात में खाना भी अभक्ष्य में गिना गया है। दिन का भोजन सात्विक है और रात्रिभोजन तामसिक—राक्षसी है। इस लिये यह छोडने लायक है। खास कर व्रतधारी को तो रात्रिभोजन का अवश्य त्याग करना चाहिये।

१५ बहुबीजफल—जिस में गूदा (गिर) कम और बीज बहुत हों जैसे वेंगण (वृंताक) पंपोटा खसखस विगैरह, फलों में जो बीज होते हैं वे सब सजीव होते हैं इस वास्ते इन के भक्षण में अधिक जीवों की हिंसा होने से ये 'बहु-बीज फल' अभक्ष्य हैं।

१६. संधान (अथाणा—अचार) यह अथाणा याने अचार केरी का नींबु का करमदे का आदे का इत्यादि कई किसम का होता है, यह खटाई वाला होने से तीन दिन तक खाने योग्य होता है। जिसमें खटाई न हो वह एक दिन के बाद ही अभक्ष्य हो जाता है, कारण कि उसमें सूक्ष्म त्रस जीव उत्पन्न होने का संभव है। गुजरात में नींबु अमचूर या नीं-बु मिली मिर्ची के अथाणे को तीन दिन के बाद सूरज के धूप में अच्छी तरह सुखा देते हैं फिर उसको गर्म किये तैल में डाल देते हैं। तेल अचार के ऊपर ऊपर ३-४ उङ्गल तक रहता है। इस हालत में वह अथाणा अभक्ष्य नहीं होता। म-

साला डाल कर योंही महीनों और वर्षों तक रखा हुआ अचार (अथाणा) अभक्ष्य होने से त्याज्य है।

१७ द्विदल (कठोल)—जिन धान्यों की दो दाल (फाड) होती है और उनमें तेल की चिकनाहट न हो उनको द्विदल कहते हैं। मुंग चणा चौला उडद वटाना वाल मटर मेथी दाना आदि सब द्विदल हैं। कच्चे दूध दहीं या छास के साथ मिलने से द्विदल अभक्ष्य बन जाता है। क्योंकि उसमें तत्काल जीवोत्पत्ति होजाती है। परंतु गर्म किये हुए दूध दही विगैरह में द्विदल मिलने से वह अभक्ष्य नहीं होता, इस वास्ते खान पान के समय द्विदल का पूरा ख्याल रहना चाहिये। मुंग चणे जैसे द्विदल का शाक खाते समय अगर हाथ शाक में डाला हुआ हो तो धोकर तथा मुंह में कुल्ला कर फिर कच्चा दहीं या छास खाने का उपयोग रक्खे। इसके सिवाय वेसण गटा पतोल आदि कोई भी द्विदल का शाक छास या दही मिलाकर करना हो तो पहले दहीं छास को गरम कर ले पीछे उस में द्विदल का चून दाल आदि डालकर शाक बनावे ताकि उसमें अभक्ष्य का दोष प्राप्त न हो।

१८ घोलवडा—दहिका घोल कर उसमें डाले गये बड़े। घोल को गर्म कर उसमें डाले गये बडे अभक्ष्य नहीं होते।

१९ तुच्छफल—टींबरु, केरडा के पीचू, पीलुं, बोर आदि फल जिसमें खाना थोडा और छोडना बहुत ये सब तुच्छ

फल हैं और ये अभक्ष्य माने जाते हैं व्रतधारी इनका त्याग करे।

२० अनजाना फल—जिस फल का नाम स्वभाव मालूम न हो वह भी अभक्ष्य है।

२१ चलित रस—जिस भक्ष्य पदार्थ का वर्ण गंध रस स्पर्श बदल गया हो, सडने की वजह से जिसमें से खराब बू आती हो, जिसमें से तार निकलते हों वह सब 'चलित रस' नामक अभक्ष्य है। रोटी, शाक, खिचडी, वडा, नरम पूरी, लापसी, सीरा, मालपुआ विगैरह चार पहर के बाद प्रायः चलित रस हो अभक्ष्य हो जाते हैं। दाल के बडों भजियों में जल का भाग मिला हुआ होने से वे भी दूसरे दिन बासी गिने जाते हैं।

दही में बना हुआ चावल का करंबा तथा छास में बनी हुई मक्का बाजरा आदि की पहले दिन की घेंस दूसरे दिन काम में आ सकती है। कई लोग दूध में आटा बांधकर पुडियां बनाते हैं परंतु दूध में जल का भाग अधिक और खटाई का भाग बहुत कम होने से वे पुडियां वासी—चलित रस हो जाती हैं इस लिये रात निकलने के बाद अभक्ष्य हैं। जो जो चीज घी में या तैल में बनाई जाती हैं वे अमुक काल तक वासी नहीं होती। शीयाले की मोसम में मिठाई का उत्कृष्ट काल एक महीने का, उन्हाले में २० दिन का और चोमासे में १५ दिन का है। बाद में अभक्ष्य हो जाती है। मीठाई का

यह आखिरी समय है, अगर इस मुद्दत के भीतर खराब हो जावे तो उसी समय अभक्ष्य समझ कर नहीं खाना चाहिये। समझ कर सब चीजो में भक्ष्य अभक्ष्यपन का खयाल रखकर काम में ले। दहीं तथा छास १६ पहर के बाद अभक्ष्य समझनी चाहिये।

२२ अनंतकाय—एक शरीर में अनंत जीव हो वह वनस्पति अनंतकाय कही जाती है। शास्त्र में बत्तीस प्रकार के अनन्तकाय अभक्ष्य कहे हैं, जो नीचे मुजब हैं—

(१) भूमिकंद (जमीन में जो कंद पैदा हों वे सब)।
(२) सूरण कंद
(३) वज्रकंद
(४) लीली हलदी (हरी हल्दी)
(५) आदा लीला (हरा अदरक)
(६) हरिया कचुरा (हरा कचूरा)
(७) वरीयाली की जड (दूसरा नाम बिराली कंद)।
(८) शतावरी (शतावर)
(९) कुंआर पाठा (घीग्वार)
(१०) थूअर
(११) गिलोय (गुरच)
(१२) लहसून (लसण)
(१३) करेला वांस का
(१४) गाजर

(१५) लाणा (जिसकी सज्जी बनती है)

(१६) लोढा कंद

(१७) गिरिकरणी (गिरमिर) कच्छ देश में प्रसिद्ध है।

(१८) कोमल पत्र (वनस्पति के नये उगते अंकुरे अनंत-काय होते हैं, बढने के बाद वेही प्रत्येक वनस्पति कहलाते हैं)

(१९) खरसूयाकंद (कसेरु)

(२०) थेग (जुवार के दाने की तरह का कन्द)

(२१) हरामोथ (नागर मोथा)

(२२) लूणी वृक्ष की छाल

(२३) खिलोडा

(२४) अमृतवेल (अमरवेल)

(२५) मूला (मूली)

(२६) भूमिस्फोट—(जो सफेद छत्र के आकार में चोमासे में जमीन में से निकलते हैं)

(२७) बथुए की भाजी (प्रथम उगती हुई)

(२८) करुहार

(२९) सूवर वेल

(३०) पलंक की भाजी

(३१) कोमल इमली–(जहां तक बीज न पडे वहां तक अनंतकाय)

(३२) आलु रतालु पिंडालु। इसके सिवाय और भी हैं

यहां पर खास-खास नाम दिखलाये हैं। सब अनतकाय अभक्ष्य हैं।

अनंतकाय का लक्षण यह है कि पत्ते, फूल, फल आदि में नसो का गुप्त होना, सांधे गुप्त होना, तोडने से बराबर टूट जाना, और जड से काटे जाने पर भी अर्से तक हरा रहना और बोने पर फिर से लग जाना ये सब अनंतकाय के लक्षण हैं।

इन अभक्ष्य वस्तुओ में से भांग अफीण आदि जिनके खाने की आदत पहले पड गई हो और न छूटती हो तो उसके खाने की छूट रक्खे। तथा रात्रिभोजन में चउविहार तिविहार अथवा दुविहार जो भी बने पच्चक्खाण रखने का नियम करे। रोगादिक के कारण अभक्ष्य खानी पडे तो जयणा रक्खे। इसके सिवाय अनजान में किसी वस्तु में अभक्ष्य चीज खाने में आ जावे तो उसकी जयणा है।

चौदह नियम—

"सचित्त-दव्व-विगइ-वाणह-तंबोल-वत्थ कुसुमेसु।
वाहण-सयण-विलेवण-बंभ-दिसि-न्हाण-भत्तेसु॥"

१ सचित्त—सजीव पदार्थ सचित्त कहलाता है, अनाज जो बोने से उगता है, कच्चा पानी, हरा शाक, फल पान, कच्चा निमक विगैरह सब सचित्त हैं। इन सब में शस्त्र प्रयोग होने पर ये अचित्त हो जाते हैं। कितनीक चीजें ऐसी भी होती हैं

जो बीज निकालने के बाद कच्ची दो घडी समय के उपरान्त अचित्त होती हैं, जैसे पके खरबूजे पके आम (केरी) इनमें से बीज निकालने पर दो घडी के बाद उसका गूदा रस या टुकडे अचित्त बनते हैं। खान पान में सचित्त का त्याग, संख्या या परिमाण किया जाता है।

२ द्रव्य—जितने प्रकार की चीजें मुख में डालने की हों वे सब अलग अलग द्रव्य गिने जाते हैं, रोटी पूरी दाल चावल कढी शाक मिठाई पापड आदि, इनमें से जिन जिन द्रव्यों की दिन भर के लिये जरूरत समझे गितनी या वजन कायम कर रखना चाहिये।

३ विगई—कुल विगई १० हैं जिनमें १ मधु (शहद) २ मांस ३ मक्खन ४ मदिरा ये चार महाविगई अभक्ष्य हैं। श्रावक को इनका अवश्य त्याग करना चाहिये। भक्ष्य (खाने लायक) विगई ६ हैं–१ दूध, २ दहि, ३ घी, ४ तेल, ५ गुड–खांड और ६ कडाह विगई (घी या तैल में बनाई जानेवाली मिठाई विगैरह)।

हर एक विगई के निवियाते के पांच पांच भेद हैं जिनका विस्तार सहित वर्णन पच्चखाणभाष्य में दिया हुआ है, वहां से देख सकते हैं।

छः विगई में से कम से कम एक एक विगई का त्याग सदा रखना चाहिये।

विगई का त्याग तीन तरह से होता है—

१ कच्ची का त्याग (२) निवियाती का त्याग (३) मूल से त्याग।

कच्ची दूध विगई का त्याग किया हो तो खीर, मावा (खौवा) विगैरह दूधकी बनी चीज अथवा दूध मिली चीज खाई पी जा सकती है, निवियाती का त्याग करने पर दूध विगई के खीर आदि निवियाते भी नहीं खा सकते और मूल से ही दूध का त्याग करने वाला तो जिसमें दूध का या उसके पदार्थों का थोडा भी भाग मिला हो उन चीजों को भी नहीं खा सकता। कच्ची दहि विगई का त्याग करने वाला दहि के बने रायता, मठा आदि का उपयोग कर सकता है परंतु निवियाते दहि का त्यागी उक्त पदार्थ नहीं खा सकता। मूल से दहि का त्यागी दहि जिसमें डाला गया हो एसा कोई भी पदार्थ नहीं खा सकता। कच्चे घी, तैल का त्याग करने वाला जला हुआ घी या तैल खा सकता है। निवियाते का त्यागी नहीं खा सकता और मूल से त्याग करने वाला जिनमें घी तेल पडे हों ऐसी कुछ भी चीज नहीं खा सकता।

कच्ची कडाह विगई का त्याग हो तो तीन घाण के बाद बनी हुई चीज पूरी भजिया आदि खा सकते हैं। निवियाते का त्याग हो तो तीन घाण के बाद के घाण का भी नहीं खा-सकते। शीरा लापसी आदि कडाह विगई के निवियाते होने से

वे भी नहीं खाये जा सकते। भूंजे बघारे शाक आदि कडाह विगई नहीं हैं।

४ वाणह—(उपानह) जूता, बूट, चंपल, खडाउ, मोजा जोडी आदि की संख्या कर लेवे। भूल से पहनने में आ जाय तो उसकी जयणा।

५ तंबोल—पान, सुपारी, इलायची, लोंग आदि मुख-वास की चीजों का अंदाज करना (नवटांक पाव सेर आदि)

६ वस्त्र—पगड़ी, टोपी, शाफा, अंगरखा, कुरता, कमीस, कोट, धोती, पायजामा, दुपट्टा, अंगोछा, रूमाल आदि मरदाना और जनाना कपडा जो ओढने पहिनने में आवें उनकी संख्या तथा गहने की संख्या कर लेना चाहिये। धर्मकार्य में जयणा। भूल से पहना जाय उसकी जयणा।

७ कुसुम—फूल, गजरा, तुर्रा, अत्तर, तमाखु, आदि जो सुंघने की चीजें हों उनका परिमाण करना।

८ वाहन—सवारी का साधन-फिरता, चरता और तिरता यह तीन प्रकार का है। गाडी, मोटर, साइकल, ट्राम, रथ, पालखी, रेलवे, सिगराम, उडता एरोप्लाइन आदि फिरता, घोडा, ऊंट, हाथी, खच्चर, बैल आदि सवारी के वाहन पशु चरता, और नाव-आगबोट-स्टीमर आदि जल मार्ग के वाहन तिरता वाहन कहलाते हैं। अपने काम के लिये इनकी प्रतिदिन संख्या करनी चाहिये।

९ शयन—सोने बैठने का साधन कुरसी, टेबल, पट्टा,

पलंग, चारपाई, (मांचा), कोच, गादी, तकिया, चटाई, दरी (सेत्रंजी), बिस्तरा आदि की संख्या करना।

१० विलेपन—शरीर में लगाने की चीज तेल, केशर, चंदन, सेंट, सुरमा, काजल, उबटना, साबुन, हजामत, बुरश, कंघा, काच, मलम पट्टी का लेप आदि। इनका वजन कर-लेना चाहिये।

११ ब्रह्मचर्य—परस्त्री का त्याग और स्वदार संतोष रखवें। उसका भी रात्रि में परिमाण करें। काया से पालन करे। मन वचन की जयणा।

१२ दिशि—(१० दिशा) ४ दिशा ४ विदिशा ऊर्ध्व और अधो इन दश दिशाओं में जाने आने का (अमुक कोश तक का) नियम करना। धार्मिक कार्य की जयणा, तार चिट्ठी भेजना माल भेजना मंगवाना आदमी भेजना विगैरह इसी में समझना चाहिये।

१३ स्नान—दिन में इतनी वार स्नान करना ऐसी धारणा करना। धार्मिक कार्य के लिये जयणा।

१४ भत्त—(भक्त) अशन-पान-खादिम-स्वादिम इन चार प्रकार के आहारों में से, जितना खाने पीने में आवे उतने का सेरों में परिमाण रखना चाहिये।

इन १४ नियम के उपरांत ६ काय और ३ कर्म की मर्यादा भी करनी चाहिये।

छः जीवनिकाय—

पृथिवीकाय-मिट्टी, निमक आदि (खाने में या उपभोग में आवे) उसका पावसेर, आधसेर, सेर मण आदि वजन कायम करना।

२ अप्काय-जो पानी पीने में वा दूसरे उपयोग में आवे उसको मग दोमण या चाहिये उतना नियत करना।

३ तेउकाय-चूल्हा, अंगीठी, भट्ठी, प्राइमस, दीवा विगैरह से तेउकाय का आरंभ होता है इस वास्ते इन की संख्या नियत करना, एक दो या तीन घर के चूल्हे रखे, हलवाई के चूल्हे की छूट रक्खी हो तो वहां की मिठाई खा सके अन्यथा नहीं।

४ वायुकाय-हिंडोले और पंखे (अपने हाथसे या हुकम से) जितने चलते हों उनकी संख्या नियत करना, रुमाल से वा कागज से हवा लेना यह भी पंखे में शामिल है उसकी जयणा।

५ वनस्पतिकाय-हरा शाक, फलादि इतनी जातके खाने, घर संबंधी मंगावे उसकी गिनती तथा दो सेर तीन सेर का वजन करना।

६ त्रसकाय-चलते फिरते तमाम त्रस जीवों को मारने की बुद्धि से मारूं नहीं ऐसा नियम करना हर एक प्रवृत्ति में उपयोग रखना कारण 'उपयोगे धर्म' है।

तीन कर्म—

असि कर्म-तलवार, बंदूक, तमंचा, चाकू, छुरी, केंची,

सूडी, सुई आदि जो उपयोग में आवे उसकी संख्या करना।

२ मसिकर्म—लिखने के उपयोगी साधन स्याही, कलम, होल्डर, पेन्सील, दवात आदि की संख्या रखना।

३ कसिकर्म—खेती के उपयोगी हल, कुदाला, हलवाणी, फावडा, (पावडा) आदि की संख्या करना।

पंद्रह कर्मादान—

१ इंगालकर्म—कोयले बनाकर बेचना इंटे बनाकर बेंचना लुहार का सुनार का कलाल का हलवाई का धंधा जो अग्नि आरंभ से होता है इसमें आरंभ ज्यादह है इस लिये जहां तक हो सके यह कर्म श्रावक न करे। लकडी के कोलसे बना कर बेचने का तो अवश्य ही त्याग करे। सूखी लकडी कटाने की जयणा।

२ वनकर्म—लीले लकडे कटाना, फल, फूल, कंदमूल हरि वनस्पति विगैरह बेचना इत्यादि काम श्रावक को न करना चाहिये, जंगल कटाने का तो अवश्य ही त्याग करे। सूखी लकडी कटाने की जयणा।

३ साडीकर्म—गाडी रथ नाव हल चरखा धूंसरा चक्की मूसल विगैरह बनाकर बेचना यह 'साडी कर्म' श्रावक को छोडने लायक है।

४ भाडीकर्म—ऊंट बैल खचर घोडा गाडा आदि किराये देकर गुजरान करना यह भाडीकर्म कहलाता है।

फोडीकर्म—आजीविका के लिये कूआ तालाव खुदावे, हल

चलावे, खान, खुदावे, सुरंग खुदावे यह 'फोडीकर्म' है।

६ दंतवाणिज्य-(दांतका व्यापार)-हाथी का दांत, विगैरह बेचने का व्यापार 'दंतवाणिज्य' है। इसका ठेका लेना अत्यंत आरंभ-हिंसा का कारण है। श्रावक ऐसा व्यापार न करे। दांत की बनी बनाई चीजें ले कर तंग हालत में व्यापार करे उसकी जयणा है।

७ लाखवाणिज्य (लाख आदि का व्यापार)-लाख, साजीखारा, साबुन, सुहागा, मनसील, हरताल विगैरह का व्यापार न करे। खास कर लाखका व्यापार अवश्य वर्जनीय है।

८ रसवाणिज्य-मदिरा मांस तथा घी तैल गुड खांड आदि में चोमासे के दिनो में मक्खी मंकोडा कीडी विगैरह जीवों की बहुत हिंसा होती है इस लिये रसव्यापार न करे। खास कर मद्य मांस का व्यापार श्रावक को वर्जित है।

९ केशवाणिज्य-घेटों बकरा की ऊन, जाट, पक्षियों के रोम, चंवरी गाय के बाल विगैर का बेचना 'केशवाणिज्य' है जो न करना चाहिये।

१० विषवाणिज्य-संखिया, वछनाग, अफीम आदि जहरिली चीजों का व्यापार न करना।

११ यंत्रपीलनकर्म-घाणी कोल्हू विगैरह चला कर तैल रस विगैरह निकालने का काम न करना।

१२ निर्लांछनकर्म-बैल, ऊंट विगैरह के नाक फडवाना वछडों को बधिया (खसी-सोई समार) करवाना या इन को

जलाना, कोटवाल की नोकरी, जेलखाने की नोकरी विगैरह निर्दयपने का काम करना यह सब निर्लांछनकर्म के शामिल है।

१३ दावाग्निकर्म–जंगल में आग लगा कर जलाना यह दावाग्निदान कर्म है।

१४ शोषणकर्म–तालाव, बंधा, वाव आदि के जलको नहर द्वारा निकलवा कर खेत पिलाना, इस से जल खाली हो जाता है और लाखों जीव जल विना तडफ कर मरते हैं इस लिये यह 'जलशोषणकर्म' पाप का कारण है।

१५ असतीपोषण–कुलटा–व्यभिचारिणी स्त्री का पोषण कर उससे धन पैदा करना या उस आशयसे उस का पालन करना, कुत्ता बिल्ली आदि शिकारी जानवरों का पालन करना यह सब 'असतीपोषण' कहा जाता है।

यह १५ कर्मादान हैं, याने ज्यादह पापबन्ध के कारण हैं, व्रतधारी इन व्यापारो में न पडे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक उपभोग–परिभोग व्रत ग्रहण करता हूं। आजीवन अनन्तकाय बहुबीजादि भोजन और कर्मादानादि व्यापारों का यथाशक्ति त्याग करता हूं।"

अतिचार—

(१) सचित्त आहार–सचित्त का त्याग कर बगैर उपयोग के सचित्त को अचित्त समझ कर खावे पीवे, जल पूरा गरम न हुआ हो और उस को पीवे तो यह पहला अतिचार लगता है।

(२) सचित्तप्रतिबद्धाहार–जिस के सचित्त का नियम है वह बबूल (बावलिये) पर लगा हुआ गोंद अथवा इसी प्रकार सचित्त के साथ लगे हुए अचित्त पदार्थ उखाड कर एक मुहूर्त समय होने के पहले खावे तो यह दूसरा अतिचार लगता है।

(३) अपक्वौषधिभक्षण–सचित्त का त्यागी फली पुंखडा भाजी विगैरह कच्चे खावे तो यह तीसरा अतिचार लगता है।

४ दुःपक्वौषधिभक्षण–गेहुं के होले मकाइ के मकिये चणों के सरपटिये विगैरह अध पके खावे तो चौथा अतिचार लगता है।

(५) तुच्छौषधि भक्षण– जिस में खाना थोडा और फेंकना ज्यादह ऐसी बेर, सहजने की फली, विगैरह तुच्छ चीज का खाना यह तुच्छ औषधि भक्षण है। नियम–व्रत वाला खावे तो पांचवाँ अतिचार लगता है।

नियम—

१ बाईस अभक्ष्यों में से नं.————को छोड शेष अभक्ष्य भक्षण का त्याग।

२ बत्तीस अनन्तकायों में से नं.————को छोड शेष अनन्तकाय भक्षण का त्याग।

३ पंद्रह कर्मादानों में से नं.————को छोड शेष कर्मादान करनेका त्याग।

४ महीने में————वार रात्रिभोजनकी छूट कृष्णपक्ष

की———————और शुक्ल पक्ष की———————
इन तिथियों में रात्रिभोजन का सर्वथा त्याग।

आगे दी हुई सूचीमें रक्खी हुई वनस्पतियों को छोड शेष हरि वनस्पति भक्षणका का त्याग। रोगादि कारण अथवा अनजानपन में कभी छोडी हुई चीज खाने में आ जाय उस की जयणा। बाह्य उपभोग में लेने की जयणा।

हरि वनस्पति (लीलोतरी) की टीप—

अजमापत्र	खरबूजा	तुलसी	बेरी (पंचाग)
अडवीपत्र	गलका	दूधिया	भींडी
अदरक	गवारफली	द्राख	मक्रिया
अननस	गिलोय	धनियां	मतिरा
अनार	गुलाब	नारंगी	मिरची
अंजीर	गुंदा (छोटा)	नालेर	मिरच
आम (केरी)	गुंदा (बडा)	नीम	मूला (भाजी)
आलडी	गूलर	नीम (मीठा)	मेथी(पंचांग)
आंवला	गोयली	नींमू	मोगरी
इमली	घीग्वार	पपनस	मोगरी (गु-
ईख (शेलडी)	चक्की	पपीता	जराती)
उंबी	चणा(पंचांग)	(पोपैया)	रजगा
ककडी	चवलेरी	परवल	रामफल
कणजरा	चीकू	पर्जण	रायडोडी

करेला	चीभडा	पान	रायण
करेला (बडा)	चीभडिया	पीलु	वटाणा
करमदा	चील (भाजी)	पोंक	वरियाली
कंकोडा	जंबीरी	पोस्तडोडा	वालोल
कालिंगा	जामफल	फणस	सफरजन
कुंमटिया	जामून	पुदीना	सरसव (भाजी)
केर	टमेटा	बथुआ	संतरा
केला	टींबरु	बदाम	सांगरी
कैथ	तडबूज	बावल	सींघोडा
कोबी (पत्ता)	तंदुलिया	बीजोरा	सोआभाजी
कोबी (फूल)	तींडसी	बेर (बडे)	
कोहला	तुरई	बेर (पेमजी)	

ऊपर की वनस्पतियों में से जिन जिन का त्याग करना हो उन के नामके पहले ० इस प्रकार शून्य लगा देना चाहिये।

अनर्थदंडविरमण

स्वरूप—

विना मतलब अपराध लेना उसका नाम 'अनर्थदंड' है, वह ४ प्रकारका है—१ अपध्यान, २ पापोपदेश, ३ हिंस्रप्रदान, और ४ प्रमादाचरित।

१ अपध्यान—अपने सुख में विघ्नडालने वाले संयोग प्राप्त न हो इसके लिये फिकर करना अथवा इष्टवस्तु—स्त्री

पुत्र धन विगैरह का वियोग न हों ऐसी चिंता करना इस को 'अपध्यान' अनर्थदंड कहते हैं।

२ पापोपदेश—पाप का उपदेश करे, जैसे खेती वाले को कहे 'तुम हल क्यों नही जोतते ? हलवाई की भठी ठंडी पडी देख कर कहे—' आज भठी क्यों नहीं जलाते ? इस प्रकार विना प्रयोजन पाप की राय देना इस को 'पापोपदेश' अनर्थदंड कहते हैं।

३ हिंस्रप्रदान—कुदाला, हलवाणी, कुल्हाडी, बंदूक विगैरह हिंसा के उपकरण किसी को मांगे बगैर मांगे दे उसका नाम 'हिंस्रप्रदान' हैं।

४ प्रमादाचरित—विना मतलब कामशास्त्र सीखना, जुगार में पडना, दरखतों में हिंचोला बांधकर हींचना, कुत्ते बिल्ली घेटे भेंसे विगैरह को आपस में लडना चार प्रकार की विकथा करना, मंदिर में हांसी ठठे करना इत्यादि सब 'प्रमादाचरित' अनर्थदंड कहा जाता हैं, इन चारोंका श्रावक त्याग करे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक हिंस्रप्रदानादि चतुर्विध अनर्थदण्ड का जीवनपर्यन्त के लिये यथाशक्ति त्याग करता हूं।"

अतिचार—

(१) कंदर्पचेष्टा—हाथ पांव, आंख आदि की चेष्टा से

किसी को हसावे या क़िसी को क्रोध उत्पन्न करावे यह पहला अतिचार।

(२) असंबद्ध वचन–वाहियात वचन निकाले, दूसरों के मर्म खोले, वैर बढाने वाले चुगलीखोर वचन निकाल कर फ़िज़ूल बकवाट करे यह दूसरा अतिचार।

(३) भोगोपभोगातिरेक–अपने शरीर के लिये जितने की जरूरत हो उससे अधिक पदार्थ उपयोग में ले यह तीसरा अतिचार।

(४) कौकुच्य वा मर्म कथन–जिसके बोलने से दूसरों के दिल में काम या क्रोध का जोश उत्पन्न हो या वियोग की वार्तायुक्त कथा तथा शृंगार से भरी हुई कविता सुनाकर काम भाव जागृत करना यह चौथा अतिचार।

(५) संयुक्ताधिकरण—ऊखल के साथ मुसल रखना, धनुष के साथ तीर रखना इत्यादि हिंसा के उपकरणों को तय्यार कर रखना यह पांचवा अतिचार है, कारण कि शस्त्र हाजर रखने से हर कोई इसका गेर उपयोग कर सकता है उस आरंभ का भागी शस्त्र रखने वाला श्रावक बनता है, वास्ते पापोपकरणों को जोड कर न रक्खे।

सामायिकव्रत.

स्वरूप—

रागद्वेषादि विषमताओं को दूर हटा कर दो घडी (४८ मिनट) तक समभाव में रहना इसको सामायिक कहते हैं।

सामायिक का अर्थ आवश्यक सूत्र में इस मुजब किया है—

"समानां—ज्ञानदर्शनचारित्राणां आयः—समायः समाय एव सामायिकम् ।"

अर्थात्—सम याने ज्ञान दर्शन और चारित्र इनका जो 'आय' अर्थात् लाभ उसका नाम 'समाय' समाय ही सामायिक है।

अनुयोगद्वारटीका में भी कहा है—

"सामायिकं गुणाना—माधारः खमिव सर्वभावानाम्।
नहि सामायिकहीना—श्चरणादिगुणान्विता येन ॥१॥"

तात्पर्य—सामायिक तमाम गुणों का आधार है जैसा कि सर्व पदार्थों का आधार आकाश, सामायिक रहित मनुष्य चारित्रादि गुण युक्त नहीं होते।

यह सामायिक व्रत ३२ दोष रहित होना चाहिये। ३२ दोष नीचे लिखे मुजब हैं—

मन के १० दोष—१ अविवेक, २ यश की इच्छा, ३ लाभ की इच्छा, ४ अहंकार, ५, भय, ६ नियाणा बांधना, ७ फल में संशय लाना, ८ क्रोध करना, ९ अविनय, १० भक्तिशून्यता।

वचन के १० दोष—१ कुवचन बोले, २ अविचारा बोले, ३ प्रतिघातवचन (अगले के दिल में प्रहार करे ऐसा वचन), ४ बडबड बोलना, ५ प्रशंसा वचन बोले, ६ कलह करे, ७

विकथा करे, ८ हांसी करे, ९ गरम वाक्य निकाले, १० किसी को 'आओ' 'जाओ' कहे।

काया के १२ दोष—१ आलस (प्रमाद) रखना, २ नींद लेना, ३ घुटने ओंधे करना, ४ अस्थिर आसन, ५ नजर फिराना, ६ अन्य कार्य में प्रवर्तन, ७ भीत का सहारा लेना, ८ शरीर के अवयव छिपाना, ९ मेल उतारना, १० खाज खनना, ११ काटके पाडना और १२ लंबे पांव करना।

ऊपर कहे ३२ दोषों से रहित कम से कम एक सामायिक श्रावक हमेशा करे। शुद्ध सामायिक से ही आत्मा में गुण प्रकट होता है, पूर्व काल में केशरीचोर ने मन वचन और काया की एकाग्रता से शुद्ध सामायिक करने से केवल ज्ञान प्राप्त किया था यह बात शास्त्र में प्रसिद्ध है।

शुद्ध सामायिक का फल उपदेशसप्तति ग्रंथ में यों बताया है—

"बाणवइ कोडीओ, लक्खा गुणसट्ठि सहस पणवीसं।
नवसय पणवीसाए, सतिहा अडभाग पलियस्स॥१॥"

अर्थात्—९२ क्रोड ५९ लाख २५ हजार ९२५ नौ सौ पच्चीस पल्योपम के ऊपर १ पल्योपम के ८ भाग में से ३ भाग अधिक, इतने पल्योपम का स्वर्ग गतिका आयु बांधता है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक सामायिक व्रत स्वीकार करता हूं। आजीवन धारणा मुजब यथाशक्ति सामायिक करूंगा।"

अतिचार—

(१) काय दुष्प्रणिधान-शरीर को या उसके किसी अंश को विना पूंजे इधर उधर हिलाना।

(२) मनोदुष्प्रणिधान—दिल में खराब विचार करना।

(३) वचन दुष्प्रणिधान—आरंभ के वचन बोलना या सामायिक सूत्र ज्यादा कमती बोलना।

(४) अनवस्था—सामायिक का वकत पर न करना, अथवा करके शांति न रखना।

(५) स्मृतिविहीन—सामायिक सूत्र पाठ बोला या नहीं अथवा सामायिक का काल पूरा हुआ या नहीं इस प्रकार स्मृति विहीन होकर शंकाशील बनना।

नियम—

प्रतिदिन——सामायिक करूंगा।

अथवा महीने में——और वर्ष में————सामायिक करूंगा।

देशावकाशिक व्रत—

स्वरूप—

पहले के व्रतों में जो नियम किया है उनमें संक्षेप करना अथवा छट्ठे व्रत में जाने आने का परिमाण किया है उसको उस दिन के लिये कम करके दो पांच कोश रखना, अथवा 'आज गांव के दरवाजे तक जाऊंगा; आगे नहीं' ऐसी धारणा करना उसको देशावकाशिक कहते हैं। यह देशावकाशिक १

दिन का १० सामायिक का और १ सामायिक का भी होता है, जैसा समय हो वैसा करे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक देशावकाशिक व्रत स्वीकार करता हूं। आजीवन धारणा मुजब यथाशक्ति देशावकाशिक व्रत करूंगा।"

अतिचार—

(१) आनयन प्रयोग—अपनी धारी हुई भूमिका से बाहर की किसी चीज की जरूरत पडने पर मन में खयाल करे कि मेरे तो बाहर जाने का नियम है, चीज मंगवाऊं तो क्या हर्ज है ऐसी कल्पना से नियत भूमि से बाहर से कोई चीज मंगवावे तो पहला अतिचार।

(२) प्रेषण प्रयोग—अपनी नियमित (मुकरर की हुई) भूमि से कुछ चीज बाहर भेजे तो दूसरा अतिचार।

(३) शब्दानुपाती—अपनी नियमित भूमि से बाहर कोई जाता हो उसको शब्द द्वारा अथवा खुंखार कर बुलावे और अपने लिये कोई चीज मंगवाने का हुक्म करे तो तीसरा अतिचार।

(४) रूपानुपाती—नियम की भूमि से बाहर जाते किसी को देखकर हवेली विगैरह ऊंचे स्थान पर चढ कर अपना रूप बतावे, इस इरादे से कि वह मनुष्य अपने पास आ जाय,

इस प्रकार बुलाये हुए मनुष्य को काम भलावे तो चोथा अतिचार ।

(५) पुद्गलप्रक्षेप—नियम की भूमि से कोई बाहर जाता हो उस पर कंकर विगैरह फेंक कर अपनी तर्फ बुलावे और उससे बात चीत करे तो पांचवाँ अतिचार लगता है ।

नियम—

मैं प्रतिवर्ष देशावकाशिक व्रत——करूंगा ।

पौषधोपवास व्रत—

स्वरूप—

आत्मा के गुणों की अथवा धर्म की पुष्टि करने वाला जो उपवास युक्त व्रत हो उसको 'पौषधोपवास' कहते हैं । इसके ४ भेद हैं-१ आहार पौषध, २ शरीरसत्कार पौषध, ३ ब्रह्मचर्य पौषध और ४ अव्यापार पौषध । ये प्रत्येक देश और सर्व भेद से दो दो प्रकार के होते हैं ।

१ तिविहार उपवास आयंबिल या एकासना करके जो पौषध किया जाता है उसको देश से आहार पौषध कहते हैं, और चउविहार उपवास के साथ किया जावे वह सर्व से आहार पौषध कहाता है ।

२ हाथ पांव धोने की छूट रखना देश शरीर सत्कार पौषध और सर्वथा शरीर संबन्धी शणगार का त्याग करना सर्वशरीरसत्कार पौषध कहा जाता है ।

३ वचन या दृष्टिका दोष जिसमें न टले उसको देशब्रह्मचर्य पौषध कहते हैं और सर्वथा ब्रह्मचर्य रखना उसको सर्व ब्रह्मचर्य पौषध कहते हैं।

४ सर्वथा व्यापार का त्याग करना यह सर्वअव्यापार पौषध और एकाद व्यापार खुला रहे वह देश अव्यापार पौषध है।

प्रतिज्ञा

"मैं देवगुरुसाक्षिक पौषधोपवास व्रत स्वीकार करता हूं। धारणा मुजब यथाशक्ति पौषधोपवास करूंगा।"

अतिचार—

(१) अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहिय—सिज्जासंथारक—जिस पर शयन करे उस पथारी की पडिलेहणा न करे तो पहला अतिचार।

(२) अपमज्जियसंथारक—संथारा बराबर न पूंजे जीवजयणा न रक्खे तो दूसरा अतिचार।

(३) अप्पडिलेहिय स्थंडिलभूमि—लघुनीति या बडी नीति की जगह बराबर दृष्टि से न देखे जीवरक्षा न करे तो तीसरा अतिचार।

(४) अपमज्जियपासवणपत्त—लघुनीति का कुंडा या पाला ठीक न पूंजे तो चौथा अतिचार।

(५) पोसहविहिविवरीय—पोषध में भूख लगने पर खाने की चिंता करे याने पोसह पारने के बाद अमुक चीज तयार

कर खाऊंगा, स्नान करूंगा, तैल लगाऊंगा ऐसी कल्पना करे, तथा पौषध में विकथा करे और दोष न टाले तो पांचवा अतिचार लगता है।

नियम—

प्रतिवर्ष आठ पहर के——पोसह करूंगा।

प्रति वर्ष चार पहर के——पोसह करूंगा।

अतिथि संविभागव्रत—

स्वरूप—

पौषधोपवासव्रत के पारणे साधु मुनिराज को दान देकर पीछे खाना उसका नाम 'अतिथि संविभाग' व्रत है। पहले दिन जहां तक बन सके उपवास पूर्वक ८ पहर का पौषध करे, दूसरे दिन पारणा में एकासना कर मुनिराज को वहरावे और जितनी चीजें मुनि लेवे उतनी ही आप खावे यह अतिथिसंविभाग का तात्पर्य हुआ।

दान देते वक्त दाता में ५ गुण होने चाहिये—१ हर्षाश्रु-इष्ट मनुष्य के मिलने पर जैसा हर्ष होता है वैसा हर्ष दान देते वक्त श्रावक को होवे, हर्ष के आंसु आवें। २ रोमांच-दान देते वक्त शरीर के रोम खडे हो जावें। ३ बहुमान-मुनि को देख कर उनका बहुमान करे। (४) प्रियवचन-दान देता हुआ मधुर और विनय युक्त वचन बोले और ५ अनुमोदना-दान की वार वार प्रशंसा करे। 'फिर कब ऐसा दान दूंगा' ऐसी भावना रक्खे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देव गुरु साक्षिक अतिथि संविभाग व्रत स्वीकार करता हूं। धारणा मुजब यथाशक्ति अतिथि संविभाग करूंगा।"

अतिचार—

(१) सचित्तनिक्षेप-आहार पर सचित्त वस्तु रख छोडे, मन में सोचे 'यह आहार मुनि लेवेंगे नहीं लेकिन् निमंत्रण से मेरा व्रत पल जायगा, यह पहला अतिचार। (२) सचित्त पीहण-न देने की बुद्धि से आहार को सचित्त वस्तु से ढांक दे यह दूसरा अतिचार। (३) कालातिक्रम-गोचरी का समय टाल कर मुनि को आहार के लिये निमंत्रणा करे यह तीसरा अतिचार। (४) पर व्यपदेशमत्सर-दूसरा कोई निमित्त निकाल कर आहार जल्दी न देवे अथवा दूसरे की ईर्ष्या से दान देवे यह चोथा अतिचार (५) परवस्तुकथन-दान के वक्त अपनी वस्तु होने पर भी यह चीज दूसरे की है ऐसा कहकर न देवे यह पांचवां अतिचार है।

नियम—

प्रतिवर्ष———अतिथि संविभाग करूंगा।

इस तरह श्रावकों के सम्यक्त्वमूल बारह व्रतों का संक्षिप्त वर्णन ऊपर मुजब है। इसमें दिया हुआ व्रतों का स्वरूप समझ कर उस मुजब चलने की प्रतिज्ञा करनी चाहिये। प्रत्येक

व्रतके अतिचारों को समझ कर उनका त्याग करना चाहिये और धारण किये हुए नियमों को पालना चाहिये ।

आशा है, इसे पढ कर श्रावकगण अपना कर्तव्य धर्म समझेंगे और उसे अंगीकार कर अपने मनुष्यजन्म की सफलता करेंगे ।

४ तपस्या विधि—

वीशथानक तप विधि—

१ ॐ ह्रीँ नमो अरिहंताणं। इस पद की नोकर वाली २०, खमासमण साथिया काउस्सग लोगस्स १२ ।

२ ॐ ह्रीँ नमो सिद्धाणं। नो० २०, ख० सा० का० लो० ८ ।

३ ॐ ह्रीँ नमो पवयणस्स। नो० २०, ख० सा० का० लो० ४५ ।

४ ॐ ह्रीँ नमो आयरियाणं। नो० २०, ख० सा० का० लो० ३६ ।

५ ॐ ह्रीँ नमो थेराणं। नो० २०, ख० सा० का० का० लो० १० ।

६ ॐ ह्रीँ नमो उवज्झायाणं। नो० २०, ख० सा० का० लो० २५ ।

७ ॐ ह्रीँ नमो लोए सव्वसाहूणं। नो० २०, ख० सा० का० लो० २७ ।

८ ॐ ह्रीँ नमो नाणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ५१।

९ ॐ ह्रीँ नमो दंसणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ६७।

१० ॐ ह्रीँ नमो विनयसंपन्नाणं। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

११ ॐ ह्रीँ नमो चारित्तस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ७०।

१२ ॐ ह्रीँ नमो बंभवयधारीणं। नो० २०, ख० सा० लो० ९।

१३ ॐ ह्रीँ नमो किरियाणं। नो० २०, ख० सा० लो० २५।

१४ ॐ ह्रीँ नमो तवस्सीणं। नो० २०, ख० सा० लो० ५०।

१५ ॐ ह्रीँ नमो गोयमस्स। नो० २०, ख० सा० लो० २८।

१६ ॐ ह्रीँ नमो जिणाणं। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१७ ॐ ह्रीँ नमो चरणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० १७।

१८ ॐ ह्रीँ नमो अपुव्वनाणस्स। नो २०, ख० सा० लो० ५।

१९ ॐ ह्रीँ नमो सुयनाणस्स। नो० २०, ख० सा० का० लो० ४५।

२० ॐ ह्रीँ नमो तित्थस्स । नो० २०, ख० सा० का० लो० ५।

यह तप वैशाख-आषाढ-मागसिर-फागुण इन चार महीनों में ग्रहण करना चाहिये, हर एक ओली दो महीने में और ज्यादा से ज्यादा ६ महीने में संपूर्ण करनी चाहिये, जिससे १० वर्ष में यह वीश थानक तप समाप्त हो जावे।

अष्टकर्म ओली विधि

(कर्म सूदन तप)

१ ज्ञानावरणीय-उपवास। खमासमण, काउस्सग्ग लोगस्स ५, 'ॐ ह्रीँ अनंतज्ञानगुणेभ्यो नमः' इसकी २० नोकरवाली गिने।

२ दर्शनावरणीय—एकासणा। खमासमण, काउस्सग्ग लोगस्स ९, 'ॐ ह्रीँ अनंतदर्शनगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

३ वेदनीय—एकलसिथुं (एक दाणा खाना)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स २, 'ॐ ह्रीँ अव्याबाधगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

४ मोहनीय—एकलठाणुं (एकही साथ आहार और जल लेना)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स २८, 'ॐ ह्रीँ यथाख्यातगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

५ आयु—एकदत्ति (एक वार दिया हुआ खाना)। खमासमण काउसग्ग लोगस्स ४, 'ॐ ह्रीँ अक्षयनिधिगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

६ नामकर्म—निवी। खमासमण काउसग्ग लोगस्स १०३, 'ॐ ह्रीँ अरूपिगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

७ गोत्रकर्म—आयंबिल। खमासमण काउसग्ग लोगस्स २, 'ॐ ह्रीँ अगुरुलघुगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

८ अंतराय—अष्ट कवल (सिर्फ आठ कवले खाने)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स ५, 'ॐ ह्रीँ अनंतवीर्यगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

इसके उजमणे में चांदी का वृक्ष और सोने का कुठार (कुहाडा) भगवान् के आगे चढावे तथा पुस्तक पूजा कर मुनिराज को दान देवे।

रोहिणी तप विधि

सत्ताईस नक्षत्रों में चौथा नक्षत्र रोहिणी है। यह नक्षत्र जिस दिन हो उस दिन उपवास कर वासुपूज्य स्वामी की पूजा करे, तीनों वक्त प्रभात मध्यान्ह और संध्या समय देव वंदन करे, दोनों टंक प्रतिक्रमण करे, 'ॐ ह्रीँ श्रीवासुपूज्यजिनाय नमः' इस प्रकार वासुपूज्य स्वामी के नाम की २० नोकरवाली गिने। इस रीति से ७ वर्ष और ७ महीने तक

यह तप किया जाता है। अंत में उजमणे के समय अशोक वृक्ष युक्त श्रीवासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा करा कर प्रतिष्ठापूर्वक मंदिर में स्थापन करावे, उसके आगे नैवेद्य १०८लड्डू चढावे।

वर्धमान ओली की विधि

(वर्धमान आयंबिल तप)

प्रथम १ आयंबिल कर ऊपर १ उपवास, पीछे २ आयंबिल ऊपर १ उपवास, फिर त्रण आयंबिल ऊपर एक उपवास, इस क्रम से बढते बढते १०० आयंबिल ऊपर १ उपवास करने पर कुल तपस्या का हिसाब १०० उपवास और पांच हजार पचास आयंबिल होते हैं। पहली ५ ओलियाँ एक साथ की जाती हैं। इस तप की समाप्ति १४ वर्ष ३ महीने और २० दिनों में होती है। इस तप में 'ॐ ह्रीं नमो जिणाणं। इस पद की २० नोकरवाली गिने। साथिया, काउस्सग्ग लोगस्स १२ करे।

लघुपंचमी तप

पौष और चैत्रमास छोड कर अन्य किसी एक महीने में लघु पंचमी तप ग्रहण किया जाता है और शुदि तथा वदि पंचमी के दिन उपवास करते १ वर्ष में २४ पंचमियां होती हैं, इनके ऊपर १ पंचमी करने पर २५ पंचमियों का यह तप संपूर्ण होता है। अंत में उजमणा ज्ञानपंचमी के मुताबिक करें।

ज्ञानपंचमी तप

कार्तिक शुदि पंचमी से यह तप शुरू किया जाता है। हर एक महीने की शुदि पंचमी को उपवास करते पांच वर्ष और पांच मास में ६५ उपवास होते हैं और इस तप की समाप्ति होती है।

इस तप में 'ॐ ह्रीँ नमो नाणस्स' इस पद की २० माला गिने तथा साथिया काउसग्ग लोगस्स ५१ का करे। तप संपूर्ण होने पर इसके उजमणे में ज्ञान दर्शन और चारित्र के सर्व ५-५ उपकरण लावे और पेंतालीस आगमकी पूजा पढावे। साथ में यथा शक्ति साहमीवच्छल भी करे।

पेंतालीस आगम का तप

यह तप ४५ दिन का होता है। हमेशा एकासणा किया जाता है। तप संपूर्ण होने पर उजमणा वरघोडा तथा पूजाप्रभावनादिक करें और नंदीसूत्र तथा भगवती सूत्र का रुपये और सोना महोर से पूजन करे। दूसरे सूत्रों का पूजन वासखेप तथा पैसे से करे। इसकी विधि नीचे मुजब है—

१ श्रीनंदीसूत्रायनमः। नोकरवाली २०, खमासमण साथिया काउस्सग्ग लोगस्स ५१।

२ श्रीअनुयोगद्वारसूत्राय नमः। नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स ६२।

३ श्रीदशवैकालिकसूत्राय नमः। नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स १४।

४ श्रीउत्तराध्ययनसूत्राय नमः । नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स ३६ ।

५ श्रीओघनिर्युक्तिसूत्राय नमः । नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स १० ।

६ श्रीआवश्यकसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० ३२.

७ श्रीनिशीथछेदसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० १६ ।

८ श्रीव्यवहारकल्पसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० २० ।

९ श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० १९ ।

१० श्रीपंचकल्पछेदसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० १९ ।

११ श्रीजीतकल्पछेदसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० ३५ ।

१२ श्रीमहानिशीथछेदसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० ४२ ।

१३ श्रीचउसरणपइन्नयसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

१४ श्रीआउरपच्चक्खाणसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

१५ श्रीभत्तपरिज्ञासूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१६ श्रीसंथारापइन्नयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१७ श्रीतंदुलवेयालियसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१८ श्रीचंदाविजयपइन्नयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१९ श्रीदेविन्दथुइपइन्नयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२० श्रीमरणसमाधिसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२१ श्रीमहापच्चक्खाणसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२२ श्रीगणिविज्जापइन्नयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२३ श्रीआचारांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० २५।

२४ श्रीसूयगडांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० २३।

२५ श्रीठाणांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२६ श्रीसमवायांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०४।

२७ श्रीभगवतीसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ४२।

२८ श्रीज्ञाताकथांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १९।

२९ श्रीउपासकदशांगसूत्रायनमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

३० श्रीअंतगडदशांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १९।

३१ श्रीअणुत्तरोववाइयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ३३।

३२ श्रीप्रश्नव्याकरणसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

३३ श्रीविपाकांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० २०।

३४ श्रीउववाइयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० २३।

३५ श्रीरायपसेणीयसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ४२।

३६ श्रीजीवाभिगमसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

३७ श्रीपन्नवणाउपांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ३६।

३८ श्रीसूर्यपन्नत्तिसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ५७।

३९ श्रीजंबूद्वीपपन्नत्तिसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ५०।

४० श्रीचन्द्पन्नत्तिसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० ५०।

४१ श्रीकप्पवडंसियासूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

४२ श्रीनिरयावलीसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

४३ श्रीपुप्फचूलियासूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

४४ श्रीवन्हिदशोपांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

४५ श्रीपुप्फियाउपांगसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

पखवाडा तप विधि

शुदि एकम से पूनम तक एक ही साथ १५ उपवास करे, अगर ऐसा न बन सके तो प्रथम शुक्ल पक्ष की एकम का,

दूसरे शुक्ल पक्ष की दूज का तथा तीसरे शुक्ल पक्ष की तीज का एक एक उपवास कर अनुक्रम से पंद्रह शुक्ल पक्ष में तप संपूर्ण करे। त्रिकाल देववंदन करे। मुनिसुव्रत भगवान् का स्तवन कहे। 'श्री मुनिसुव्रतसर्वज्ञाय नमः' इस पद की २० नोकरवाली गिने। तप की समाप्ति के दिन चांदी का पालणा सुवर्ण पुतली तथा लड्डु का थाल जिन मंदिर में चढावे स्नात्र पूजा भी पढावे।

पौष दशमी तप की विधि

पौष दशमी के पहले दिन याने नवमी के दिन शक्कर के पानी का एकासणा करे, उस दिन सिर्फ गरम जल में शक्कर डाल कर पी लेवे, बाद दशमी को ठाण एकासणा याने भोजन और जल एक ही साथ लेवे, ऊपर चउविहार कर लेवे, तथा उस दिन जिनमंदिर में पंच कल्याणक की पूजा भणावे और 'पार्श्वनाथ अर्हते नमः' इस पद की वीस नवकरवाली गिने, फिर एकादशी को हमेशा के मुआफिक एकासणा करे। तीनों दिन सुबह शाम प्रतिक्रमण करे, तीनों टङ्क देव वंदन करे, ब्रह्मचर्य पाले, जमीन पर सोवे।

इस रीति से यह तप दशवर्ष में पूर्ण होता है। तप की समाप्ति में ज्ञान दर्शन और चारित्र के दश दश उपकरण चढा कर उजमणा करे, अठाई महोच्छव कर साधर्मी वात्सल्य भी करें।

पंचरंगी तप विधि

इस तप में २५ पुरुष अथवा २५ स्त्रियां होती हैं।

पहले दिन—पांच जणा पांच उपवास करें, उस दिन 'मतिज्ञानाय नमः' इस पद की वीस नोकरवाली गिने और खमासमण साथिया काउस्सग्ग लोगस्स २८, तथा प्रदक्षिणा २८, और २८ श्रीफल चढावे।

दूसरे दिन—दूसरे पांच जणा चार उपवास का पच्चक्खाण करे, उस दिन 'श्रुतज्ञानाय नमः' इस पद की २० माला गिने, खमासमण साथिया काउसग्ग लो० १४ का करे। तथा प्रदक्षिणा १४ देवे, १४ श्रीफल चढावे।

तीसरे दिन—पांच जणा तीन उपवासका पच्चक्खाण करे, 'अवधिज्ञानाय नमः' इस पद की २० नोकरवाली गिने, खमासमण साथिया काउसग्ग लोगस्स ६ करे तथा प्रदक्षिणा ६ देवे, श्रीफल ६ चढावे।

चोथे दिन—पांच जणा दो उपवासका पच्चक्खाण करे, 'मनःपर्यवज्ञानाय नमः' इस पद की २० माला गिने खमासमण साथिया काउसग्ग लोगस्स २ करे प्रदक्षिणा २ तथा श्रीफल २ चढावे।

पांचवे दिन—पांच जणा एक उपवास करे, 'केवलज्ञानाय नमः' की २० माला गिने, खमासमण साथिया लोगस्स १ प्रदक्षिणा १ श्रीफल १ चढावे। इन पांचों दिनों में ज्ञानपद

की पूजा पढावे, रूपानाणे से पुस्तक की पूजा करे, पारणा के दिन ४५ आगम की पूजा भणावे।

दशपच्चक्खाण विधि

१ उपवास—'श्रीअक्षयसम्यक्त्वाय नमः' नोकरवाली २०, साथिया लोगस्स खमासमण ६७।

२ एकासणा—'श्रीसम्यक्त्वाय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० १७।

३ एकसिक्थ—(एक चावल खावे) 'श्रीकेवलनाणीनाथाय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० ८।

४ नीवि—'श्री एकत्वगताय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० २१।

५ एकदत्ती—(अनजान मनुष्य भोजन थाल में पीरस कर कपडे से ढक कर रक्खे उतना ही खावे) 'श्रीसर्वगताय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० ३१।

६ परघरिया एकासणा। 'श्री गौतमस्वामिने नमः' नो० २०, ख० सा० लो० ४५।

७ एकलठाणा (हृदय पर्यंत थाली रखे सारा हाथ हिलाये विना भोजन करे) 'अक्षयस्थितये नमः' नो० २०, ख० सा० लो० २८।

८ एकासणा (एक कवल खावे) 'श्रीप्रव्रताय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० ९०।

९ एक घीका दूसरा जलका दो बरतन कपडे से ढंक कर बालक के पास कपडा दूर करवावे, याने दो बरतनों में से एक बरतन खुला करवावे, घी आवे तो एकासणा और जल आवे तो आंबिल करे। 'श्रीमुनीश्वराय नमः' नो०, २०, ख० सा० लो० १३।

१० आंबिल[1] (सिर्फ खाखरे खाना) 'श्रीअक्षयनिधिनाथाय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० १२।

चोईस तीर्थंकरों के कल्यांणक देखने का कोष्ठक

कार्तिक वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
३	वदि ५	केवलज्ञान	
२२	वदि १२	च्यवन्	
६	,, १२	जन्म	
६	,, १३	दीक्षा	(१२)
२४	,, ३०	मोक्ष	
९	शुदि ३	केवल	(२)
१८	,, १२	केवल	

मगसिर वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
९	वदि ५	जन्म

---

१ दूसरी विधिमें ५वां एक कवल, ६ठा एकलठाणा ७वां एकदत्ती, ८वां आयंबिल, ९वां एकघरा और १०वां लूखीनिवी, इस प्रकारसे तप लिखे हैं।

९	वदि ६	दीक्षा
२४	,, १०	दीक्षा
६	,, ११	मोक्ष
१८	शुदि १०	जन्म
१८	शुदि १०	मोक्ष
१८	शुदि ११	दीक्षा
१९	,, ११	जन्म
१९	,, ११	दीक्षा
१९	,, ११	केवल
२१	,, ११	केवल
३	,, १४	जन्म
३	,, १५	दीक्षा

पौष वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
२३	वदि १०	जन्म
२३	वदि ११	दीक्षा
८	वदि १२	जन्म
८	वदि १३	दीक्षा
१०	वदि १४	केवल
१३	शुदि ६	केवल
१६	शुदि ९	केवल
२	शुदि ११	केवल

४	शुदि १४	केवल
१६	शुदि १६	केवल

माघ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
६	वदि ६	च्यवन
१०	वदि १२	जन्म
१०	वदि १२	दीक्षा
१	वदि १३	मोक्ष
११	वदि ३०	केवल
४	शुदि २	जन्म
१२	शुदि २	केवल
१५	शुदि ३	जन्म
१३	शुदि ३	जन्म
१३	शुदि ४	दीक्षा
२	शुदि ८	जन्म
२	शुदि ९	दीक्षा
४	शुदि १२	दीक्षा
१५	शुदि १३	दीक्षा

फागुण वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण
७	वदि ६	केवल	
७	वदि ७	मोक्ष	

८	वदि ७	केवल	
९	वदि ९	च्यवन	
१	वदि ११	केवल	
२०	वदि १२	केवल	
११	वदि १२	जन्म	
११	वदि १३	दीक्षा	(३०)
१२	वदि १४	जन्म	
१२	वदि ३०	दीक्षा	
१८	शुदि २	च्यवन	(१)
१९	शुदि ४	च्यवन	
३	शुदि ८	च्यवन	
२०	शुदि १२	दीक्षा	
१९	शुदि १२	मोक्ष	

चैत्र वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
२३	वदि ४	च्यवन
२३	वदि ४	केवल
८	वदि ५	च्यवन
१	वदि ८	जन्म
१	वदि ८	दीक्षा
१७	शुदि ३	केवल
१४	शुदि ५	मोक्ष

२	शुदि ५	मोक्ष
३	शुदि ५	मोक्ष
५	शुदि ९	मोक्ष
५	शुदि ११	केवल
२४	शुदि १३	जन्म
६	शुदि १५	केवल

वैशाख वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
१७	वदि १	मोक्ष
१०	वदि २	मोक्ष
१७	वदि ५	दीक्षा
१०	वदि ६	च्यवन
२१	वदि १०	मोक्ष
१४	वदि १३	जन्म
१४	वदि १४	दीक्षा
१४	वदि १४	केवल
१७	वदि १४	जन्म
४	शुदि ४	च्यवन
१५	शुदि ७	च्यवन
४	शुदि ८	मोक्ष
५	शुदि ८	जन्म
५	शुदि ९	दीक्षा

२४	शुदि १०	केवल
१३	शुदि १२	च्यवन
२	शुदि १३	च्यवन

जेठ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
११	वदि ६	च्यवन
२०	वदि ८	जन्म
२०	वदि ९	मोक्ष
१६	वदि १३	जन्म
१६	वदि १३	मोक्ष
१६	वदि १४	दीक्षा
१५	शुदि ५	मोक्ष
१२	शुदि ९	च्यवन
७	शुदि १२	जन्म
७	शुदि १३	दीक्षा

आषाढ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
१	वदि ४	च्यवन
१३	वदि ७	मोक्ष
२१	वदि ९	दीक्षा
२४	शुदि ६	च्यवन
२२	शुदि ८	मोक्ष
१२	शुदि १४	मोक्ष

श्रावण वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
११	वदि ३	मोक्ष
१४	वदि ७	च्यवन
२१	वदि ८	जन्म
१७	वदि ९	च्यवन
५	शुदि २	च्यवन
२२	शुदि ५	जन्म
२२	शुदि ६	दीक्षा
२३	शुदि ८	मोक्ष
२०	शुदि १५	च्यवन

भाद्रवा वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
१६	वदि ७	च्यवन
८	वदि ७	मोक्ष
७	वदि ८	च्यवन
९	शुदि ९	मोक्ष

आसोज वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
२२	वदि ३०	केवल
२१	शुदि १५	च्यवन

ऊपर दिये हुए कल्याणको में जाप नीचे मुजब करना चाहिये ।

च्यवन कल्याणक के दिन कल्याणक वाले तीर्थंकर के नाम के साथ 'परमेष्ठिने नमः' जपना चाहिये । जन्म कल्याण के दिन 'अर्हते नमः' दीक्षा कल्याणक के दिन 'नाथाय नमः' केवलज्ञान के दिन 'सर्वज्ञाय नमः' और मोक्षकल्याणक के दिन 'पारंगताय नमः' का जाप करना चाहिये ।

९ विविध विचार

(१) वर्तमान जैनागम–परिचय

विद्यमान पैंतालीस सूत्रों के नाम तथा उनकी मूल श्लोक-संख्या और हरएक सूत्र पर भिन्न भिन्न आचार्यों की बनाई हुई बृहद्वृत्ति, लघुवृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति और भाष्य विगैरह के श्लोकों की संख्या का प्रमाण नीचे मुजब दिया जाता है ।

११ ग्यारह अंग सूत्र

१ आचारांग सूत्र–इस में साधुओं के आचार का वर्णन है । इस के अध्ययन २५, मूलश्लोक २५००, शीलांगाचार्य की टीका १२०००, चूर्णि ८३०० तथा भद्रबाहु स्वामिकृत निर्युक्ति की गाथा ३६८, श्लोक ४५०, भाष्य तथा लघुवृत्ति नहीं है, सर्वसंख्या २३२५० है ।

२ सूयगडांग सूत्र–इस में पाखंडियों का वर्णन जुदे जुदे सांख्य बौद्ध आदि दर्शनों की चर्चा और उपदेश है । इस के

अध्ययन २३, मूलश्लोक २१००, शीलांगाचार्यकृत टीका १२८५० तथा चूर्णि १०००० श्लोक हैं, भद्रबाहुकृत निर्युक्ति की गाथा २०८ श्लोक २५० । इस पर भाष्य नहीं है, सर्व-श्लोक २५२०० हैं ।

३ ठाणांगसूत्र–इस में अनेक तात्त्विक बातों की गिनती और उनकी व्याख्या दी है ।

इस के अध्ययन १० हैं, मूलश्लोक ३७७० हैं, सं ११२० में अभयदेवसूरि की बनाई हुई टीका १५२५० श्लोक[1] प्रमाण है । सर्वश्लोक १९०२० हैं ।

४ समवायांग सूत्र–इस में भी ठाणांग का सा ही वर्णन है, परंतु इसमें दश के ऊपरकी संख्यावाली बातोंका भी वर्णन है। इस के मूलश्लोक १६६७, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ३७७६ प्रमाण है । चूर्णि पूर्वाचार्य की ४०० श्लोक प्रमाण। सर्वश्लोक ५८४३ हैं ।

५ विवाहपन्नत्ति (भगवती)–इसमें गौतमस्वामी के भिन्न २ विषयक ३६००० प्रश्न और महावीर के दिये हुए उत्तरों का वर्णन है। इसके ४१ शतक हैं। मूल श्लोक १५७५२, टीका सं० ११२८ में अभयदेवसूरि की की हुई द्रोणाचार्य संशोधित १८६१६ श्लोक की है। चूर्णि ४००० श्लोक की पूर्वाचार्यकृत है। कुल संख्या ३८३६८ है। तथा इसकी

---

१ ताडपत्रकी प्राचीन सूचीमें टीका का प्रमाण १५२४० और सर्वसंख्या १९०१० श्लोक बतायी है ।

लघुवृत्ति सं० १५६८ में उपाध्याय दानशेखर की की हुई १२००० श्लोक प्रमाण है।

६ ज्ञाता धर्मकथांग—इसमें जुदे जुदे पुरुषों और स्त्रियों की कथायें हैं। इसके अध्ययन १९, श्लोक ५५००, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ४२५२ प्रमाण है। सर्व संख्या इस की ९७५२ श्लोक हैं।

७ उपासकदशांग–इसमें आनन्द कामदेव आदि १० श्रावकों के चरित्र हैं। अध्ययन १०, मूल श्लोक ८१२, टीका अभयदेवसूरि की ९०० श्लोक प्रमाण, और कुल संख्या १७१२ है।

८ अंतगडदशांग–इसमें महावीर भगवान् के जो खास खास मुनि मोक्ष गये हैं उनका वर्णन है। इसके अध्ययन ९०, मूल श्लोक[1] ९००, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ३०० की है। कुल श्लोक १२००।

९ अणुत्तरोववाई–इसमें जो मुनि अनुत्तर विमान में गये हैं उनका वर्णन है। इसके अध्ययन ३३, श्लोक १९२, टीका अभयदेव सूरि की श्लोक १००। कुल श्लोक २९२।

१० प्रश्न व्याकरण–इसमें आश्रव और संवर का वर्णन है। अध्ययन १०, श्लोक १२५०, टीका अभयदेवकी श्लोक ४६००। कुल संख्या ५८५०।

---

१ ताडपत्रीय सूची में मूल श्लोक ७९० बताये हैं।

११ विपाकसूत्र–इसमें सुख दुःख या कर्मफल भुगतने संबंधी अधिकार है, इसके अध्ययन २०, श्लोक १२१६, अभयदेवसूरि टीका श्लोक ९००, सर्व श्लोक २११६, हैं।

कुल ग्यारह अंग की मूल संख्या ३५६५९ तथा टीका ७३५४४, चूर्णि २२७००, निर्युक्ति ७००, मिल कर १३२६०३ श्लोक हैं[1], इसमें आचारांग और सुयगडांग की टीका शीलांगाचार्य कृत है, बाकी नव अंग की टीकायें अभयदेवसूरि कृत हैं। इसी लिये इनका नाम 'नवांगवृत्तिकार अभयदेवसूरि' जैनसंघ में मशहूर है।

१२ बारह उपांग सूत्र.

१ उववाइ सूत्र–इसमें कोणिक राजा महावीर स्वामी के दर्शनार्थ गया उसका वर्णन है, तथा स्वर्ग में कौन कहां उत्पन्न हो सकता है उसका निरूपण है। यह आचारांग प्रतिबद्ध उपांग है। मूल संख्या[2] १२००, अभयदेव टीका श्लोक ३१२५, और कुल संख्या ४३२५ श्लोक हैं।

२ रायप्पसेणीय–पार्श्वनाथ संतानीय केशीकुमार श्रमण ने प्रदेशी राजा को नास्तिक मत छुडाकर आस्तिक धर्म में लाया उसका तथा वही प्रदेशी गुजर कर सूर्याभ देव होकर वापस

---

१ ताडपत्रीय सूची में अंगों की श्लोक संख्या १३२४८६ लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में सूत्र श्लोक संख्या ११६७ और सर्व संख्या ४२९२ लिखी है।

महावीर प्रभु के पास वंदन को आया उसका वर्णन है। यह सुयगडांगप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २०७८, मलयगिरि टीका श्लोक ३७०० कुल संख्या ५७७८ है।

३ जीवाभिगम—इसमें जीव अजीव संबंधी वर्णन है। यह ठाणांगप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक ४७००, मलयगिरि टीका १४०००, लघुवृत्ति ११०००, चूर्णि १५०० और सर्व संख्या ३१२०० है।

४ पन्नवणा—इसमें जैन मान्य अनेक विषयों का वर्णन है। यह समवायांगप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक[1] ७७८७, मलयगिरि-टीका १६०००, हरिभद्रकृत लघुवृत्ति ३७२८ और सर्व संख्या २७५१५।

५ जंबूद्वीप पन्नत्ति—इसमें जंबूद्वीप का भूगोल वर्णन है। यह भगवतीप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक ४१४६, मलयगिरि-टीका १२०००, चूर्णि १८६०, कुल संख्या १८००६। ताडपत्रीय सूची में टीका का उल्लेख नहीं है।

६ चंदपन्नत्ति—इसमें चंद्र की गति तथा ग्रह नक्षत्रों का वर्णन है, यह ज्ञाताप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २२००, मलयगिरि टीका ९४११, लघुवृत्ति १०००, कुल संख्या १२६११।

७ सूर्य पन्नत्ति[2]—इसमें सूर्य आदि ग्रहों का ही वर्णन है।

---

१ ताडपत्रीय सूचीमें मूल ७००० और वृत्ति (टीका) १५००० श्लोकप्रमाण लिखी है। सर्व संख्या २५७२८ लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में चंद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति का मूल ४४००, वृत्ति ९००० और सर्व संख्या १३४०० श्लोक बताया है।

यह भी ज्ञाताप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २२००, मलयगिरि-टीका ९०००, चूर्णि १०००, कुल संख्या १२२०० ।

८ कप्पिया–इसमें १० राजकुमार अपने ओरमान भाई राजा कोणिक के साथ मिलकर अपने नाना वैशाली नगरी के राजा चेटक (चेडा) के सामने युद्ध में उतरे, वहां दशों मारे गये, मर कर नरक में गये इत्यादि वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

९ कप्पवडंसिया–इसमें राजा श्रेणिक के पोते राजकुमारों ने दीक्षा ली और जुदे जुदे स्वर्गों में गये उसका वर्णन है। इसके अध्ययन १२ हैं।

१० पुप्फिया–इसमें जिन देवताओं ने महावीर की पूजा की उनके पूर्व जन्म का वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

११ पुप्फचूलिया–इसमें भी ऊपर जैसी ही कथायें हैं। इसके अध्ययन १० हैं।

१२ वन्हिदसा–इसमें नेमिनाथ ने १० यदुवंशी राजाओं को प्रतिबोध देकर जैन बनाया उसका वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

उपर्युक्त पांचों उपांगों का समुदित नाम 'निरयावली' है। इनकी अध्ययन संख्या ५२ है। वे यथाक्रम उपासकदशांगादिक पांच अंगप्रतिबद्ध हैं। इन पांचों की मिल कर श्लोक संख्या ११०९ है इन पांचों की वृत्ति चंद्रसूरि कृत ७०० श्लोक कुल संख्या १८०९ है। इन १२ उपांगों की मूल सं-

ख्या २५४२०; टीका ६७९३६, लघुटीका ६८२८, चूर्णि ३३६० कुल संख्या १०३५४४ है[1]।

१० पयन्ना

१ चउसरण पयन्नो-अरिहंत, सिद्ध, साधु, केवली भाषित धर्म, इन चार शरणों का अधिकार है। गाथा ६३ हैं।

२ आउरपच्चक्खाण-अंत समय में अभिग्रह पच्चक्खाण आदि कराने का अधिकार है। गाथा ८४।

३ भक्तपरिज्ञा-इसमें आहार पानी त्याग करने संबंधी अभिग्रह की विधि है। गाथा १७२ हैं[2]।

४ संथारगपयन्नो-इसमें अंत समये संथारा लेने का अधिकार या जिन्होंने संथारा लिया है उनका वर्णन है। गाथा १२२ हैं[3]।

५ तंदुलवेयाली पयन्नो-गाथा ४००, इसमें गर्भ में जीवकी उत्पत्ति कैसे होती है इत्यादि वर्णन है।

६ चंदाविज्जगपइन्नो-गाथा ३१०, इसमें गुरुशिष्य के गुण प्रयत्न विगैरह का वर्णन है।

७ देविंदत्थओ पइन्नय—इस में स्वर्ग के इंद्रों की गिनती है। गाथा २०० हैं।

---

१ ताडपत्रीय सूची में बारह उपांगों की सर्व श्लोक संख्या केवल ९००१३ निनानवे हजार तेरह लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में गाथा १७० बताई है।

३ ताडपत्रीय सूची में गाथा ११० बताई है।

८ गणिविज्जा पइन्नय—इस में ज्योतिष की चर्चा है। गाथा १०० हैं।

९ महापच्चक्खाण—इस में आराधना का अधिकार है। गाथा १३४।

१० मरणसमाधि—अंत समय में शांतिपूर्वक मरण होना चाहिये, उस का वर्णन है। गाथा ७२०।

इन १० पइन्नों की गाथायें २३०५ हुई हर एक को एक एक अध्ययन समझना चाहिये।

६ छेद सूत्र

'छेद सूत्रों' का मतलब है 'दंडनीति शास्त्र'। जैसे राज्य व्यवस्था के लिये कानून ग्रंथ होते हैं उसी तरह साधुओं को कोई दोष अपराध लगे उस का दंड प्रायश्चित्त विधान करने वाले 'छेदसूत्र' हैं। साधु समाज की व्यवस्था के लिये ये ही धर्मकानून ग्रंथ हैं। इन के मुताबिक चलने से साधुओं का संघ शासन व्यवस्थित रीति से चलता रहता है।

१ निशीथ—उद्देशक २०, मूल पुरानी सूची में ८१५ श्लोक हैं। इस का लघुभाष्य ७४०० श्लोक, चूर्णि २८००० श्लोक और बड़ा भाष्य १२००० श्लोक हैं[1]। कुल संख्या ४८२१५ है।

२ महानिशीथ—अध्ययन १३, मूल श्लोक ४५०० हैं मतांतरे इस की तीन वाचनायें हैं—१ लघुवाचना श्लोक

---

१ ताड़पत्रीय सूची में इस भाष्य का उल्लेख नहीं है।

४२००, २ मध्यम वाचना श्लोक ४५००, ३ बडी वाचना श्लोक ११८०० हैं[1]।

३ बृहत्कल्प--उद्देशक २४, मूल श्लोक ४७३, इस की वृत्ति संख्या १३३२ की साल में बृहच्छाखीय श्रीक्षेमकीर्ति सूरिकृत ४२००० श्लोक हैं, भाष्य १२०००, लघुभाष्य ८०००, चूर्णि १४३२५, कुल संख्या ७६७९८ हैं[2]।

४ व्यवहार--उद्देशक १०, मूल श्लोक ६००, मलयगिरि टीका श्लोक ३३६२५, चूर्णि १०३६१; भाष्य ६०००, कुल संख्या ५०५८६ हैं[3]।

पंचकल्प—अधिकार १६, मूल श्लोक ११३३, चूर्णि २१३०, भाष्य ३१२५, कुल ६३८८ और इस में गाथा संग्रह २०० हैं[4]।

---

१ ताडपत्रीय सूची में महानिशीथ की तीन वाचनाओं के श्लोक क्रमशः ३४००, ४२०० और ४५०० लिखे हैं।

२ ताडपत्रीय सूची में मूल ४७३, भाष्य ८०००, सामान्य चूर्णि १४०००, विशेष चूर्णि १००००, बृहद्भाष्य १३००० और सर्वसंख्या ४५४७३ श्लोक की लिखी है।

३ ताडपत्रीय सूची में सूत्र ३७३, भाष्य ६०००, चूर्णि १०३६१, वृत्ति ३३००० और सर्वसंख्या ४९७३४ श्लोक लिखा है।

४ ताडपत्रीय सूची में मूल के स्थान निर्युक्ति शब्द है। चूर्णि की ३१३१, भाष्यकी ३१३० और सर्व संख्या ७३९४ श्लोक प्रमाण लिखी है।

५ दशाश्रुतस्कंध—जिस का ८ वां अध्ययन कल्पसूत्र है, मूल श्लोक १८३५, चूर्णि २२४५, निर्युक्ति १६८ श्लोक, कुल ४२४८।

६ जीतकल्प (१)—मूल १०८, टीका १२०००, तथा सेनकृत चूर्णि १००० श्लोक, भाष्य ३१२४, कुल १६२३२ श्लोक हैं[२]। इस की चूर्णि का व्याख्यान ११२० है। लघु वृत्ति श्री साधुरत्नकृत श्लोक ५७००, तथा तिलकाचार्यकृत वृत्ति १५०० श्लोक हैं।

६ साधु जीतकल्प (२)—मूल श्लोक ३७५, वृत्ति धर्मघोषसूरि कृत २६५०।

४ मूल सूत्र

१ आवश्यक सूत्र (१)—मूल १२५ गाथाँ, टीका हरिभद्रसूरि कृत २२०००, निर्युक्ति भद्रबाहुकृत ३१००, चूर्णि १८०००, तथा दूसरी आवश्यकवृत्ति(चतुर्विंशति स्तव) २२००० है, इस की लघुवृत्ति तिलकाचार्य कृत १२३२१ श्लोक, अश्वलगच्छाचार्य कृत दीपिका १२०००, भाष्य ४०००, आवश्यक टिप्पण मलधारी हेमचंद्रसूरि कृत ४६००, सर्व मिलाते ९८१४६

२ ताडपत्रीय सूची में मूल १८३० चूर्णि २२२५ और सर्वसंख्या ४२२३ श्लोक लिखी है।

३ ताडपत्रीय सूची में जीतकल्प मूल के १०८ श्लोकों का उल्लेख नहीं है। वहां सर्व संख्या १६१२४ है।

३ ताडपत्रीय सूची में मूल के १०० एक सौ श्लोक कहे है।

श्लोक, तथा निर्युक्ति की टीका २२५०० हरिभद्रकृत है। ताडपत्रीय सूची में विशेषावश्यकभाष्य पाक्षिक सूत्र और इन की टीका आदि मिला कर आवश्यकसूत्र का श्लोक प्रमाण १२८६५० लिखा है।

विशेषावश्यक भाष्य (२)—यह सूत्र आवश्यक का विशेष भाष्य है। मूल भाष्य ५००० जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणकृत है। लघुवृत्ति १४००० श्लोक की ग्रंथ के अंत में कोटयाचार्यकृत लिखी है और सूची में द्रोणाचार्य का नाम लिखा है। बडी वृत्ति मल्लधारी हेमचंद्र कृत २८००० श्लोक प्रमाण है।

पक्खीसूत्र (३)—मूल श्लोक[१] ३६०, टीका संख्या ११८० में यशोदेवसूरिने की है जिस के श्लोक २७०० हैं, चूर्णि ४०० श्लोक हैं।

यतिप्रतिक्रमणसूत्रवृत्ति (४)—श्लोक ६०० है।

२ दशवैकालिक-इस में साधु जीवन के नियम लिखे हैं। यह शय्यंभवसूरिकृत है। मूल श्लोक ७०० (७५०)। अध्ययन १०। वृत्ति तिलकाचार्यकृत श्लोक ७०००। दूसरी वृत्ति हरिभद्रसूरिकृत श्लोक ६८१०, तथा मलयगिरिकृत वृत्ति श्लोक ७७००। चूर्णि ७५००। लघुवृत्ति ३७००। निर्युक्ति गाथा ४५०। लघुटीका सोमसुंदरसूरि कृत ४२००। दूसरी टीका उपाध्याय

१ ताडपत्रीय सूची में पाक्षिक सूत्र श्लोक ३०० और वृत्ति ३००० श्लोक की लिखी है।

समयसुंदरकृत श्लोक २६००।[1]

३ पिंडनिर्युक्ति (१)—भद्रबाहुकृत। इस में साधुओं के लिये शुद्ध आहार पानी लेने का अधिकार बताया हैं। मूल श्लोक ७००, टीका मलयगिरिकृत श्लोक ७०००, किसी जगह ६६०० भी है, टीका सं. ११६० वीरगणिकृत श्लोक ७५००, लघुवृत्ति महासूरिकृत श्लोक ४००, कुल संख्या १५६०० है।[2]

३ ओघनिर्युक्ति (२)—इस में साधुसंबन्धी उपकरणोंका परिमाण विगैरहका अधिकार है। यह भद्रबाहुकृत है। मूल गाथा ११७०, श्लोक १४५०, टीका द्रोणाचार्यकृत श्लोक ७०००, भाष्य श्लोक ३०० चूर्णि ७०००, कुल १८४५० है।[3]

४ उत्तराध्ययन—अध्ययन ३६। इस में साधुओं को संयम मार्ग में दृढ रखने के लिये उपदेश के रूप में अनेक दृष्टांत संवाद आदि दिये गये हैं। मूल २०००, बडी वृत्ति वादिवेताल शांतिसूरिकृत १८००० तथा अन्यत्र १७६४५ भी है। लघुवृत्ति सं. ११२९ में श्रीनेमिचंद्रसूरि कृत श्लोक

---

१ ताडपत्रीय सूची में दशवैकालिक मूल ७०० निर्युक्ति ४०० लघुवृत्ति २५०० बृहद्वृत्ति ७००० चूर्णि ७००० और सर्व संख्या १७६०० श्लोकप्रमाण लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूचीमें पिंडनिर्युक्ति मूल ७००, लघुवृत्ति २८००, बृहद्वृत्ति ७०००, मलयगिरिवृत्ति ७००० और सर्व संख्या १७५०० श्लोक लिखा है।

३ ताडपत्रीय सूचीमें ओघनिर्युक्ति मूल १०००, वृत्ति ७०००, चूर्णि ७००० श्लोक प्रमाण लिखा है।

१३६००, निर्युक्ति भद्रबाहुकृत गाथा ६०७ श्लोक ७०० चूर्णि ६०००, कुल ४०३०० है।[1]

२ चूलिकासूत्र

१ नंदीसूत्र—इस में पंचज्ञानका पूरे तौर से वर्णन किया है। देवर्धिगणिक्षमाश्रमणकृत है। मूल श्लोक ७००, वृत्ति मलयगिरिकृत श्लोक ७७३५, चूर्णि सं. ७३३ में की हुई २००० श्लोक, लघुटीका हरिभद्रकी श्लोक २३१२, कुल १२७४७। तथा टिप्पण श्रीचंद्रसूरिकृत ३००० श्लोक प्रमाण है।[2]

२ अनुयोगद्वार—इस में नय निक्षेपोंकी चर्चा और सिद्धि की गई है। यह द्रव्यानुयोग का ही ग्रंथ है। मूलगाथा १६०० श्लोक १८००, वृत्ति मलधारी हेमचंद्रसूरिकृत ६००० है। चूर्णि जिनदासगणि महत्तर की श्लोक ३०००, हरिभद्रकृत लघुवृत्ति ३५००, कुल संख्या १४३०० है।[3]

इस मुजब ११ अंग, १२ उपांग, १० पइन्ना, ६ छेदसूत्र ४ मूलग्रन्थ, १ नंदी और २ अनुयोगद्वार ये सब मिलकर ४५ आगम सूत्र हाल में मौजूद हैं।

---

१ ताडपत्रीय सूचीमें उत्तराध्ययनसूत्र २०००, निर्युक्ति ५००, चूर्णि ६०००, लघुबृत्ति ६०००, द्वितीयलघुवृत्ति १२००० बृहद्वृत्ति १७६४५ सर्वसंख्या ४४१४५ श्लोक बताये है।

२ ताडपत्रीय सूचीमें नंदीसूत्र ७००, चूर्णि २०४२, लघुवृत्ति २३१२, बृहद्वृत्ति ७००० सर्व १२०५४ श्लोक कहे हैं।

३ ताडपत्रीय सूचीमें अनुयोगद्वार सूत्र १८९९, चूर्णि ६०००, लघुवृत्ति ३००५, बृहद्वृत्ति ७००० श्लोक प्रमाण लिखा है।

इन में आवश्यक, आचारांग, सुयगडांग, दशवैकालिक उत्तराध्ययन तथा कल्पसूत्र इन छ की निर्युक्ति भद्रबाहु की बनाई हुई मिलती हैं। निशीथभाष्य, बृहत्कल्पका लघुभाष्य तथा बडाभाष्य, व्यवहारभाष्य, जीतकल्पभाष्य, पंचकल्प-भाष्य और ओघनिर्युक्तिभाष्य ये ७ भाष्य पुराने आचार्यों के बनाये हुए हैं।

आचारांग, सुयगडांग, भगवती, जंबूद्वीपपन्नत्ति, आवश्यक, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, पक्खीसूत्र, अनुयोगद्वार, नंदी, निशीथ, बृहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कन्ध, पंचकल्प और जीतकल्प इन १३ सूत्रों की चूर्णियां प्राचीन आचार्योंने बनाई हैं।

(२) ६३ शलाका पुरुष विचार

२४ तीर्थंकर

तीर्थंकरनाम	शरीरमान	आयुर्मान
१ ऋषभदेव	५०० धनुष	८४ लाख पूर्व
२ अजितनाथ	४५० धनुष	७२ लाख पूर्व
३ संभवनाथ	४०० धनुष	६० लाख पूर्व
४ अभिनंदन	३५० धनुष	५० लाख पूर्व
५ सुमतिनाथ	३०० धनुष	४० लाख पूर्व
६ पद्मप्रभ	२५० धनुष	३० लाख पूर्व
७ सुपार्श्वनाथ	२०० धनुष	२० लाख पूर्व
८ चंद्रप्रभ	१५० धनुष	१० लाख पूर्व

९ सुविधिनाथ	१०० धनुष	२ लाख पूर्व
१० शीतलनाथ	९० धनुष	१ लाख पूर्व
११ श्रेयांसनाथ	८० धनुष	८४ लाख वर्ष
१२ वासुपूज्य	७० धनुष	७२ लाख वर्ष
१३ विमलनाथ	६० धनुष	६० लाख वर्ष
१४ अनंतनाथ	५० धनुष	३० लाख वर्ष
१५ धर्मनाथ	४५ धनुष	१० लाख वर्ष
१६ शांतिनाथ	४० धनुष	१ लाख वर्ष
१७ कुंथुनाथ	३५ धनुष	९५ हजार वर्ष
१८ अरनाथ	३० धनुष	८४ हजार वर्ष
१९ मल्लिनाथ	२५ धनुष	५५ हजार वर्ष
२० मुनिसुव्रत	२० धनुष	३० हजार वर्ष
२१ नमिनाथ	१५ धनुष	१० हजार वर्ष
२२ नेमिनाथ	१० धनुष	१ हजार वर्ष
२३ पार्श्वनाथ	९ हाथ	१०० वर्ष
२४ महावीर	७ हाथ	७२ वर्ष

१२ चक्रवर्ती

नाम	गति	होने का समय।
१ भरतचक्रवर्ती	मोक्ष	ऋषभदेव के समय में।
२ सगर	मोक्ष	अजितनाथ के समय में।
३ मघवा	तीसरा स्वर्ग	१५ वां जिनके पीछे।
४ सनत्कुमार	,, स्वर्ग	१६ वा जिन के आगे।

५ शांतिनाथ	मोक्ष	१६ वां खुद तीर्थंकर ही चक्री
६ कुंथुनाथ	मोक्ष	१७ वां जिन खुद चक्री
७ अरनाथ	मोक्ष	१८ वां जिन खुद ,,
८ सुभूम	नरक	१८ वां जिन पीछे १९ के पहले
९ महापद्म	मोक्ष	२० वां जिन के समय में।
१० हरिषेण	मोक्ष	नमिनाथ के समय में।
११ जयनामा	मोक्ष	२१ के और २२ के बीच में।
१२ ब्रह्मदत्त	नरक	२२ पीछे २३ के पहले।

९ वासुदेव

नाम	गति	होने का समय।
१ त्रिपृष्ठवासुदेव	नरक	११ वां जिन के समय में।
२ द्विपृष्ठवासुदेव	नरक	१२ वां जिनके समय में।
३ स्वयंभू	नरक	१३ वां जिन के समय में।
४ पुरुषोत्तम	नरक	१४ वां जिन के समय में।
५ पुरुषसिंह	नरक	१५ वां जिन के समय में।
६ पुरुषपुंडरीक	नरक	१८ पीछे १९ के पहले।
७ दत्त	नरक	१८ पीछे १९ पहले।
८ लक्ष्मण	नरक	२० पीछे २१ के पहले।
९ कृष्ण	नरक	२२ वां के समय में।

९ प्रतिवासुदेव

१ अश्वग्रीव। २ तारक। ३ मोरक। ४ मधु। ५ निशुंभ ६ बली। ७ प्रल्हाद। ८ रावण और ९ जरासंध। क्रमशः

ये नव प्रतिवासुदेव पूर्वोक्त नव वासुदेवों के समकालीन हैं। इन सभी की भी गति नरक है।

९ बलदेव

नाम	गति
१ अचल	मोक्ष
२ विजय	,,
३ भद्र	स्वर्ग
४ सुप्रभ	,,
५ सुदर्शन	मोक्ष
६ आनंद	मोक्ष
७ नंदन	,,
८ रामचंद्र	,,
९ बलराम	स्वर्ग

ये नव ही बलदेव नव वासुदेवों के भाई होने से वासुदेवों का समय ही इनका यथा क्रम समय है।

इन ६३ पुरुषों के पिता ५१ माता ६१ और जीव ५९ होते हैं इसका समन्वय यह है कि ९ वासुदेव और ९ बलदेव के पिता जुदे नहीं बल्के एक हैं जिस से ९ कम हुए, तथा शांतिनाथ कुंथुनाथ और अरनाथ ये तीनों तीर्थंकर हैं और चक्रवर्ती भी हैं इस से भी तीन कम हुए। पूर्वोक्त ९ और ३

मिलाने पर १२ हुए, ६३ में से १२ कम किये तो शेष ५१ पिता रहते हैं[1]।

माता के विषय में भी शांति कुंथु अर ये तीनों भगवान् हैं और चक्रवर्ती भी हैं जिससे इन की माता ३ हुईं तथा महावीर स्वामी की माता देवानंदा और त्रिशला दो हैं बाकी सब पुरुषों की मातायें भिन्न भिन्न हैं इस लिये सब को मिलाने पर मातायें ६१ होती हैं।

इसी तरह जीव के विषय में भी शांति कुंथु अर ये तीनों तीर्थंकर और चक्रवर्ती भी हैं इस लिये इन में से तीन जीव कम हुए, त्रिपृष्ट वासुदेव का और महावीर स्वामी का जीव एक है शेष सब पुरुषों के जीव भिन्न हैं उक्त ४ जीव ६३ में से कम करने पर जीव संख्या ५९ होती है।

---

१ यहां पर महावीर स्वामी के दो पिता (ऋषभदत्त और सिद्धार्थ) गिनने से पिताकी संख्या ५२ भी होती है।

५२ बोल का नकशा.

खुलासा.

जो कि २४ तीर्थंकर विषयक ५२ बोल का नकशा समझना कुछ भी मुश्किल नहीं है, तौ भी बिलकुल अनजान मनुष्यों के लिये कुछ खुलासा लिख देना जरूरी है।

५२बोलका अर्थ है तीर्थंकरके साथ संबन्ध रखनेवाली५२बातें

कोई जानना चाहे कि कौन तीर्थंकर किस तिथि में किस स्वर्ग से च्युत हो कर माता की कुख में आये ? किस नगरी में किस दिन उनका जन्म हुआ ? उनके पिता और माता के नाम क्या थे ? उनका जन्म नक्षत्र और जन्मराशि क्या है ? उनकी जांघ में चिह्न क्या था ? उनके शरीर की उंचाइ कितनी थी ? आयुष्य कितना था ? शरीर का वर्ण कैसा था ? गृहस्थाश्रम में किस पद पर थे ? विवाह किया था या नहीं ? कितने पुरुषों के साथ गृहत्याग किया ? किस नगरी में दीक्षा ली थी ? इत्यादि कुल ५२ बातों का खुलासा उनके नामके आगे के ५२ कोठों में देखने से मिलेगा। जिस तीर्थंकर के विषय में उक्त बातों का खुलासा देखना हो उसके आगे के कोठे देखने चाहिये।

उदाहरण—कोई यह जानना चाहे कि भगवान ऋषभदेवके 'गणधर' कितने थे ? तो उसे ऋषभदेव के नाम के आगे का २७वां कोठा देखना चाहिये, ता कि ज्ञात हो जायगा कि ऋषभदेव के 'गणधर' ८४ थे। इसी तरह सब बातें देखनी चाहिये।

तीर्थंकर	१ च्यवनतिथि	२ विमान
१ ऋषभदेव	आषाढ वदि ४	सर्वार्थ सिद्ध
२ अजितनाथ	वैशाख सुदि १३	विजय विमान
३ संभवनाथ	फागुण सुदि ८	सातवां ग्रैवेयक
४ अभिनंदन	वैशाख शु. ४	जयंत विमान
५ सुमतिनाथ	श्रावण शु. २	” ”
६ पद्मप्रभ	माघवदि ६	९ वां ग्रैवेयक
७ सुपार्श्वनाथ	भाद्रवा वदि ८	छट्ठा ग्रैवेयक
८ चंद्रप्रभ	चैत्र वदि ५	विजयंत
९ सुविधिनाथ	फागुण वदि ९	आनत देवलोक
१० शीतलनाथ	वैशाख व. ६	प्राणत देवलोक
११ श्रेयांसनाथ	जेठ व. ६	अच्युत
१२ वासुपूज्य	जेठ शु. ९	प्राणत
१३ विमलनाथ	वैशाख शु. १२	सहस्रार देवलोक
१४ अनंतनाथ	श्रावण व. ७	प्राणत देवलोक
१५ धर्मनाथ	वैशाख शु. ७	विजयविमान
१६ शांतिनाथ	भाद्रवा व. ७	सर्वार्थसिद्ध
१७ कुंथुनाथ	श्रावण व. ९	”
१८ अरनाथ	फागुण शु. २	”
१९ मल्लिनाथ	फागुण शु. ४	जयंत
२० मुनिसुव्रत	श्रावण शु. १५	अपराजित
२१ नमिनाथ	आसोज शु. १५	प्राणत स्वर्ग
२२ नेमिनाथ	कार्तिक व. १२	अपराजित
२३ पार्श्वनाथ	चैत्र व. ४	प्राणत स्वर्ग
२४ महावीर	आषाढ शु. ६	प्राणत स्वर्ग

३ जन्मनगरी	४ जन्मतिथि	५ पिता
इक्ष्वाकुभूमि	चैत्र वदि ८	नाभिकुलकर
अयोध्या	माघ सुदि ८	जितशत्रु
सावत्थी	मृगसिर शु. १४	जितारि
अयोध्या	माघ शु. २	संवर राजा
,,	वैशाख शु. ८	मेघराजा
कौशांबी	कार्तिक वदि १२	धर राजा
बनारस	जेठ शु. १२	प्रतिष्ठ राजा
चंद्रपुरी	पोष वदि १२	महासेन
काकंदी	मृगशिर वदि ५	सुग्रीव
भद्दिलपुर	माघ व. १२	दृढरथ
सिंहपुरी	फागुण व. १२	विष्णु
चंपापुरी	फागुण व. १४	वसुपूज्य
काम्पिल्यपुर	माघ शु. ३	कृतवर्मा
अयोध्या	वैशाख व. ३	सिंहसेन
रत्नपुरी	माघ शु. ३	भानुराजा
गजपुर	जेठ व. १३	विश्वसेन
,,	वैशाख व. १४	शूरराजा
,,	मृगशिर शु० १०	सुदर्शन
मिथिला	मृगशिर शु. ११	कुंभराजा
राजगृह	जेठ व. ८	सुमित्र
मिथिला	श्रावण व. ८	विजय राजा
सौरिपुर	श्रावण शु. ५	समुद्रविजय
बनारस	पोष व. १०	अश्वसेन
क्षत्रियकुंड	चैत्र शु. १३	सिद्धार्थराजा

तीर्थंकर	६ माता	७ जन्मनक्षत्र
१ ऋषभदेव	मरुदेवी	उत्तराषाढा
२ अजितनाथ	विजया	रोहिणी
३ संभवनाथ	सेना	मृगशिरा
४ अभिनंदन	सिद्धार्था	पुनर्वसु
५ सुमतिनाथ	मंगला	मघा
६ पद्मप्रभ	सुसीमा	चित्रा
७ सुपार्श्वनाथ	पृथिवी	विशाखा
८ चंद्रप्रभ	लक्ष्मणा	अनुराधा
९ सुविधिनाथ	रामाराणी	मूल
१० शीतलनाथ	नंदा	पूर्वाषाढा
११ श्रेयांसनाथ	विष्णु	श्रवण
१२ वासुपूज्य	जया	शतभिषा
१३ विमलनाथ	श्यामा	उत्तराभाद्रपद
१४ अनंतनाथ	सुयशा	रेवती
१५ धर्मनाथ	सुव्रता	पुष्य
१६ शांतिनाथ	अचिरा	भरणी
१७ कुंथुनाथ	श्रीराणी	कृत्तिका
१८ अरनाथ	देवी	रेवती
१९ मल्लिनाथ	प्रभावती	अश्विनी
२० मुनिसुव्रत	पद्मावती	श्रवण
२१ नमिनाथ	विप्रा	अश्विनी
२२ नेमिनाथ	शिवादेवी	चित्रा
२३ पार्श्वनाथ	वामा	विशाखा
२४ महावीर	त्रिशला	उत्तराषाढा

८ जन्मराशि	९ लांछन	१० शरीरमान
धन	वृषभ (बैल)	५०० धनुष
वृष	हाथी	४५० ,,
मिथुन	घोडा	४०० ,,
मिथुन	मर्कट (वानर)	३५० ,,
सिंह	क्रौंच (कुंकडा)	३०० ,,
कन्या	कमल	२५० ,,
तुला	स्वस्तिक	२०० ,,
वृश्चिक	चंद्रमा	१५० ,,
धन	मगरमच्छ	१०० ,,
धन	श्रीवत्स	९० ,,
मकर	गेंडा	८० ,,
कुंभ	भैंसा	७० ,,
मीन	वराह (सूअर)	६० ,,
मीन	सिंचाणा (बाज)	५० ,,
कर्क	वज्र	४५ ,,
मेष	हिरण	४० ,,
वृष	बकरा	३५ ,,
मीन	नंद्यावर्त	३० ,,
मेष	कलश	२५ ,,
मकर	काचबा (कच्छप)	२० ,,
मेष	नीलकमल	१५ ,,
कन्या	शंख	१० हाथ
तुला	सर्प	९ ,,
कन्या	सिंह	७ ,,

तीर्थंकर	११ आयुर्मान	१२ शरीरवर्ण
१ ऋषभदेव	८४ लाख पूर्व	पीलावर्ण
२ अजितनाथ	७२ ,,	पीला
३ संभवनाथ	६० ,,	,,
४ अभिनंदन	५० ,,	,,
५ सुमतिनाथ	४० ,,	,,
६ पद्मप्रभ	३० ,,	लाल
७ सुपार्श्वनाथ	२० ,,	पीला
८ चंद्रप्रभ	१० ,,	सफेद
९ सुविधिनाथ	२ ,,	,,
१० शीतलनाथ	१ ,,	पीला
११ श्रेयांसनाथ	८४ लाख वर्ष	,,
१२ वासुपूज्य	७२ ,,	,,
१३ विमलनाथ	६० ,,	,,
१४ अनंतनाथ	३० ,,	,,
१५ धर्मनाथ	१० ,,	,,
१६ शांतिनाथ	१ ,,	,,
१७ कुंथुनाथ	९५००० वर्ष	,,
१८ अरनाथ	८४००० वर्ष	,,
१९ मल्लिनाथ	५५००० वर्ष	नीला
२० मुनिसुव्रत	३०००० वर्ष	श्याम
२१ नमिनाथ	१०००० वर्ष	पीला
२२ नेमिनाथ	१००० वर्ष	श्याम
२३ पार्श्वनाथ	१०० वर्ष	नीला
२४ महावीर	७२ वर्ष	पीला

१३ पदवी	१४ विवाह	१५ साथ दीक्षा
राजपदवी	परणे	४००० साथ
,,	परणे	१००० ,,
,,	,,	,, ,,
राजा	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
कुमार	,,	६०० ,,
राजा	,,	१००० ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
चक्रवर्ती	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
,,	,,	,, ,,
कुमार	नहीं परणे	३०० ,,
राजा	परणे	१००० ,,
,,	,,	,, ,,
कुमार पदवी	नहीं परणे	,, ,,
कुमार पदवी	,,	३०० ,,
,,	परणे	अकेला ,,

तीर्थंकर	१६ दीक्षानगरी	१७ दीक्षातप
१ ऋषभदेव	अयोध्या	२ उपवास
२ अजितनाथ	,,	,, ,,
३ संभवनाथ	सावत्थी	,, ,,
४ अभिनंदन	अयोध्या	,, ,,
५ सुमतिनाथ	,,	एकाशन
६ पद्मप्रभ	कौशांबी	२ उपवास
७ सुपार्श्वनाथ	बनारस	,, ,,
८ चंद्रप्रभ	चंद्रपुरी	,, ,,
९ सुविधिनाथ	काकंदी	,, ,,
१० शीतलनाथ	भद्दिलपुर	,, ,,
११ श्रेयांसनाथ	सिंहपुरी	,, ,,
१२ वासुपूज्य	चंपापुरी	१ ,,
१३ विमलनाथ	कंपिलपुर	२ ,,
१४ अनंतनाथ	अयोध्या	,, ,,
१५ धर्मनाथ	रत्नपुरी	,, ,,
१६ शांतिनाथ	गजपुर	,, ,,
१७ कुंथुनाथ	,,	,, ,,
१८ अरनाथ	,,	,, ,,
१९ मल्लिनाथ	मिथिला	३ उपवास
२० मुनिसुव्रत	राजगृह	२ उपवास
२१ नमिनाथ	मिथिला	,, ,,
२२ नेमिनाथ	द्वारिका	,, ,,
२३ पार्श्वनाथ	बनारस	३ उपवास
२४ महावीर	क्षत्रियकुंड	२ उपवास

१८ प्रथमआहार	१९ पारणा स्थान	२० कितने दिनका पारणा
सेलडीरस	श्रेयांस के घर	१ वर्ष बाद
खीर	ब्रह्मदत्त के घर	२ दिन बाद
,,	सुरेन्द्रदत्त के घर	,, ,,
,,	इन्द्रदत्त के घर	,, ,,
,,	पद्म के घर	,, ,,
,,	सोमदेव के घर	,, ,,
,,	माहेन्द्र के घर	,, ,,
,,	सोमदत्त के घर	,, ,,
,,	पुष्य के घर	,, ,,
,,	पुनर्वसु के घर	,, ,,
,,	नंद के घर	,, ,,
,,	सुनंद के घर	,, ,,
,,	जय राजा के घर	,, ,,
,,	विजयराजा के घर	,, ,,
,,	धर्मसिंह के घर	,, ,,
,,	सुमित्र के घर	,, ,,
,,	व्याघ्रसिंह के घर	,, ,,
,,	अपराजित के घर	,, ,,
,,	विश्वसेन के घर	,, ,,
,,	ब्रह्मदत्त के घर	,, ,,
,,	दिन्नकुमार के घर	,, ,,
,,	वरदिन्न के घर	,, ,,
,,	धन्य के घर	,, ,,
,,	बहुल ब्राह्मण के घर	,, ,,

तीर्थंकर	२१ दीक्षातिथि	२२ छद्मस्थकाल
१ ऋषभदेव	चैत्र वदि ८	१००० वर्ष
२ अजितनाथ	माघ सुदि ९	१२ वर्ष
३ संभवनाथ	मृगशिर शु. १५	१४ वर्ष
४ अभिनंदन	माघ शु. १२	१८ वर्ष
५ सुमतिनाथ	वैशाख शु. ९	२० वर्ष
६ पद्मप्रभ	कार्तिक वदि १३	६ मास
७ सुपार्श्वनाथ	जेठ शु. १३	९ मास
८ चंद्रप्रभ	पोष वदि १३	३ मास
९ सुविधिनाथ	मृगशिर वदि ६	४ मास
१० शीतलनाथ	माघ व. १२	३ मास
११ श्रेयांसनाथ	माघ व, अमावस	२ मास
१२ वासुपूज्य	फा. व. अमावस	१ मास
१३ विमलनाथ	माघ शु. ४	२ मास
१४ अनंतनाथ	वैशाख व. १४	३ वर्ष
१५ धर्मनाथ	मा. शु. १३	२ वर्ष
१६ शांतिनाथ	जेठ व. १४	१ वर्ष
१७ कुंथुनाथ	वैशाख व. ५	१६ वर्ष
१८ अरनाथ	मृगशिर शु. ११	३ वर्ष
१९ मल्लिनाथ	,, ,, ११	१ अहोरात्र
२० मुनिसुव्रत	फागुण शु. १२	११ मास
२१ नमिनाथ	आषाढ व. ९	९ मास
२२ नेमिनाथ	श्रावण शु. ६	५४ दिन
२३ पार्श्वनाथ	पोष व. ११	८४ दिन
२४ महावीर	मृगशिर व. १०	१२॥ वर्ष १५ दिन

२३ केवलज्ञाननंगरी	२४ केवलज्ञानतप	२५ दीक्षावृक्ष
पुरिमताल	३ उपवास	वट[1]
अयोध्या	२ उपवास	साल
सावत्थी	,, ,,	प्रियाल
अयोध्या	,, ,,	प्रियंगु
,,	,, ,,	साल
कौशांबी	,, ,,	छत्र
बनारस	,, ,,	शिरीष
चंद्रपुरी	,, ,,	नाग
काकंदी	,, ,,	साल
भद्दिलपुर	,, ,,	प्रियंगु
सिंहपुरी	,, ,,	तंदुक
चंपानगरी	१ उपवास	पाडल
कंपिलपुर	२ उपवास	जंबू
अयोध्या	,, ,,	अशोक
रत्नपुरी	,, ,,	दधिपर्ण
गजपुर	,, ,,	नंदी
,,	,, ,,	भीलक
,,	,, ,,	आम्र
मिथिला	३ उपवास	अशोक
राजगृह	२ उपवास	चंपक
मिथिला	,, ,,	बकुल
गिरिनार	३ उपवास	वेतस
बनारस	,,	धातकी
ऋजुवालिका नदी	२ उपवास	साल

१ कहीं अशोकवृक्ष लिखा है, और 'सप्ततिशत स्थानक'

तीर्थंकर	२६ ज्ञानतिथि	२७ गणधर
१ ऋषभदेव	फागुण वदि ११	८४ गणधर
२ अजितनाथ	पौष शु. ११	९५ ,,
३ संभवनाथ	कार्तिक वदि ५	१०२ ,,
४ अभिनंदन	पोष शु. १४	११६ ,,
५ सुमतिनाथ	चैत्र शु. ११	१०० ,,
६ पद्मप्रभ	चैत्र शु. १५	१०७ ,,
७ सुपार्श्वनाथ	फागुण वदि ६	९५ ,,
८ चंद्रप्रभ	फागुण व. ७	९३ ,,
९ सुविधिनाथ	कार्तिक शु. ३	८८ ,,
१० शीतलनाथ	पो. व. १४	८१ ,,
११ श्रेयांसनाथ	माघ व. ३०	७६ ,,
१२ वासुपूज्य	माघ शु. २	६६ ,,
१३ विमलनाथ	पो० शु. ६	५७ ,,
१४ अनंतनाथ	वैशाख व. १४	५० ,,
१५ धर्मनाथ	पोष शु. १५	४३ ,,
१६ शांतिनाथ	पोष शु. ९	३६ ,,
१७ कुंथुनाथ	चैत्र शु. ३	३५ ,,
१८ अरनाम	कार्तिक शु. १२	३३ ,,
१९ मल्लिनाथ	मृगशिर शु. ११	२८ ,,
२० मुनिसुव्रत	फागुण व. १२	१८ ,,
२१ नमिनाथ	मृगशिर शु. ११	१७ ,,
२२ नेमिनाथ	आसोज व. ३०	११ ,,
२३ पार्श्वनाथ	चैत्र व. ४	१० ,,
२४ महावीर	वैशाख शु. १०	११ ,,

ग्रन्थ में तो २४ तीर्थंकरों का ही दीक्षावृक्ष अशोक लिखा है.

२८ साधु	२९ साध्वी	३० वैक्रिय लब्धि
८४०००	३०००००	२०६००
१०००००	३३००००	२०४००
२०००००	३३६०००	१९४००
३०००००	६३००००	१९०००
३२००००	५३००००	१८४००
३३००००	४२००००	१६०००
३०००००	४३००००	१५३००
२५००००	३८००००	१४०००
२०००००	१२०००० म०[1] ३८००००	१३०००
१०००००	१००००६ म० ३८००००	१२०००
८४०००	१०३००० म० १२००००	११०००
७२०००	१००००० म० १०६०००	१००००
६८०००	१००८०० म० १०३०००	९०००
६६०००	६२००० म० १००८००	८०००
६४०००	६२४००	७०००
६२०००	६१६००	६०००
६००००	६०६००	५१००
५००००	६००००	७३००
४००००	५५०००	२९००
३००००	५००००	२०००
२००००	४१०००	५०००
१८०००	४००००	१५००
१६०००	३८०००	११००
१४०००	३६०००	७००

१—'म' का तात्पर्य मतान्तर से है.

तीर्थंकर	३१ वादि	३२ अवधिज्ञानी
१ ऋषभदेव	१२६५० म० १२२५०	९०००
२ अजितनाथ	१२४००	९४००
३ संभवनाथ	१२०००	९६००
४ अभिनंदन	११०००	९८००
५ सुमतिनाथ	१०४५० म० १०६५०	११०००
६ पद्मप्रभ	९६००	१००००
७ सुपार्श्वनाथ	८४००	९०००
८ चंद्रप्रभ	७६००	८०००
९ सुविधिनाथ	६०००	८४००
१० शीतलनाथ	५८००	७२००
११ श्रेयांसनाथ	५०००	६०००
१२ वासुपूज्य	४७०० म० ४२००	५४००
१३ विमलनाथ	३६००	४८००
१४ अनंतनाथ	३२००	४३००
१५ धर्मनाथ	२८००	३६००
१६ शांतिनाथ	२४००	३०००
१७ कुंथुनाथ	२०००	२५००
१८ अरनाथ	१६००	२६००
१९ मल्लिनाथ	१४००	२२००
२० मुनिसुव्रत	१२००	१८००
२१ नमिनाथ	१०००	१६००
२२ नेमिनाथ	८००	१५००
२३ पार्श्वनाथ	६००	१४००
२४ महावीर	४००	७००

३३ केवली	३४ मनःपर्यवज्ञानी	३५ चौदहपूर्वी
२००००	१२७५० म० १२६५०	४७५०
२२००० (१)	१२५५० (२)	३७२०
१५०००	१२१५०	२१५०
१४०००	११६५०	१५००
१३०००	१०४५०	२४००
१२०००	१०३००	२३००
११०००	९१५०	२०३०
१००००	८०००	२०००
७५००	७५००	१५००
७०००	७५००	१४००
६५००	६०००	१३००
६०००	६५०० स० श०(३) ६०००	१२००
५५००	५५००	११००
५०००	५०००	१०००
४५००	४५००	९००
४३००	४०००	८००
३२०० म० २२००	३३४०	६७०
२८००	२५५१	६१०
२२००	१७५०	६६८
१८००	१५००	५००
१६००	१२५० म० १२६०	४५०
१५००	१०००	४००
१०००	७५०	३५०
७००	५००	३००

(१) 'सप्ततिशतस्थानक' ग्रन्थ में मूलसंख्या २०००० मतांतरे २२०००। (२) 'सप्ततिशत' में मूल संख्या १२५०० मतांतरे १२५५०।

तीर्थंकर	३६ श्रावक	३७ श्राविका
१ ऋषभदेव	३०५०००	५५४०००
२ अजितनाथ	२९८०००	५४५०००
३ संभवनाथ	२९३०००	६३६०००
४ अभिनंदन	२८८०००	५२७०००
५ सुमतिनाथ	२८१०००	५१६०००
६ पद्मप्रभ	२७१०००	५०५०००
७ सुपार्श्वनाथ	२५७०००	४९३०००
८ चंद्रप्रभ	२५००००	४९१०००
९ सुविधिनाथ	२२९०००	४७१०००
१० शीतलनाथ	२८९०००	४५८०००
११ श्रेयांसनाथ	२७९०००	४४८०००
१२ वासुपूज्य	२१५०००	४३६०००
१३ विमलनाथ	२०८०००	४२४०००
१४ अनंतनाथ	२०६०००	४१४०००
१५ धर्मनाथ	४१३००० स० २४००००	४१३०००
१६ शांतिनाथ	२९००००	३९३०००
१७ कुंथुनाथ	१७९०००	३८१०००
१८ अरनाथ	१८४०००	३७२०००
१९ मल्लिनाथ	१८३०००	३७००००
२० मुनिसुव्रत	१७२०००	३५००००
२१ नमिनाथ	१७००००	३४८०००
२२ नेमिनाथ	१६९०००	३३६०००
२३ पार्श्वनाथ	१६४०००	३३९०००
२४ महावीर	१५९०००	३१८०००

(३) स० श० का अर्थ सप्ततिशतस्थानप्रकरण है.

३८ यक्ष	३९ यक्षिणी	४० प्रथमगणधर
गोमुख	चक्केसरी	पुंडरीक
महायक्ष	अजिता	सिंहसेन
त्रिमुख	दुरितारि	चारु
यक्षेश	कालिका	वज्रनाभ
तुंबुरु	महाकाली	चरम
कुसुमयक्ष	अच्युता	सुद्योत
मातंग	शांता	विदर्भ
विजय	ज्वाला	दिन्न
अजित	सुतारका	वराहक
ब्रह्मयक्ष	अशोका	नंद
मनुजेश्वर	श्रीवत्सा	कौस्तुभ
कुमारयक्ष	चंडा[1]	सुभूम
षण्मुखयक्ष	विजया	मंदर
पातालयक्ष	अंकुशा	यश
किन्नरयक्ष	प्रज्ञप्ति	अरिष्ट
गरुड	निर्वाणी	चक्रायुध
गंधर्व	अच्युता	शांब
यक्षेन्द्र	धरणी	कुंभ
कुबेर	वैरुट्या	भिषज
वरुण	दत्ता	मल्ली
भृकुटी	गांधारी	शुंभ
गोमेध	अंबिका	वरदत्त
पार्श्वयक्ष	पद्मावती	आर्यदिन्न
मातंगयक्ष	सिध्धायिका	इंद्रभूति

१ शतति शतस्थानकमें 'प्रवरा' नाम है.

तीर्थंकर	४१ प्रथमसाध्वी	४२ मोक्षस्थान
१ ऋषभदेव	ब्राह्मी	अष्टापद
२ अजितनाथ	फल्गुनी	समेतशिखर
३ संभवनाथ	श्यामा	,,
४ अभिनंदन	अजिता	,,
५ सुमतिनाथ	काश्यपी	,,
६ पद्मप्रभ	रति	,,
७ सुपार्श्वनाथ	सोमा	,,
८ चंद्रप्रभ	सुमना	,,
९ सुविधिनाथ	वारुणी	,,
१० शीतलनाथ	सुयशा	,,
११ श्रेयांसनाथ	धारणी	,,
१२ वासुपूज्य	धरणी	चंपापुरी
१३ विमलनाथ	धरा	समेतशिखर
१४ अनंतनाथ	पद्मा	,,
१५ धर्मनाथ	शिवा	,,
१६ शांतिनाथ	शुचि	,,
१७ कुंथुनाथ	दामिनी	,,
१८ अरनाथ	श्रुति	,,
१९ मल्लिनाथ	बंधुमती	,,
२० मुनिसुव्रत	पुष्पवती	,,
२१ नमिनाथ	अनिला	,,
२२ नेमिनाथ	यक्षदिन्ना	गिरनार
२३ पार्श्वनाथ	पुष्पचूडा	समेतशिखर
२४ महावीर	चंदनबाला	पावापुरी

४३ मोक्षतिथि	४४ मोक्षसंलेखना		४५ मोक्षासन
माघ वदि १३	६ उपवास		पद्मासन
चैत्र शु. ५	१	,,	काउस्सग्ग
,, ,,	,,	,,	,,
वैशाख शु. ८	१	मासक्षपण	,,
चैत्र शु. ९	,,	,,	,,
मगसिर वदि ११	,,	,,	,,
फागुण वदि ७	,,	,,	,,
भाद्रवा ,, ,,	,,	,,	,,
भाद्रवा शु. ९	,,	,,	,,
वैशाख वदि २	,,	,,	,,
श्रावण वदि ३	,,	,,	,,
आषाढ शु. १४	,,	,,	,,
आषाढ वदि ७	,,	,,	,,
चैत्र शु. ५	,,	,,	,,
जेठ शु. ५	,,	,,	,,
जेठ वदि १३	,,	,,	,,
वैशाख वदि १	,,	,,	,,
मृगशिर शु. १	,,	,,	,,
फागुण शु. १२	,,	,,	,,
जेठ वदि ९	,,	,,	,,
वैशाख वदि १०	,,	,,	,,
आषाढ शु. ८	,,	,,	पद्मासन
श्रावण शु. ८	,,	,,	काउस्सग्ग
कार्तिकवदि ३०	२ उपवास		पद्मासन

तीर्थंकर	४६ अंतरमान	४७ गण
१ ऋषभदेव	५० लाखक्रोड सागर	मानव
२ अजितनाथ	३० ,, ,, ,,	,,
३ संभवनाथ	१० ,, ,, ,,	देव
४ अभिनंदन	९ ,, ,, ,,	,,
५ सुमतिनाथ	९० हजार ,, ,,	राक्षस
६ पद्मप्रभ	९००० ,, ,,	,,
७ सुपार्श्वनाथ	९०० ,, ,,	,,
८ चंद्रप्रभ	९० ,, ,,	देव
९ सुविधिनाथ	९ ,, ,,	राक्षस
१० शीतलनाथ	७३७३९०० सागर	मानव
११ श्रेयांसनाथ	५४ सागर	देव
१२ वासुपूज्य	३० ,,	राक्षस
१३ विमलनाथ	९ ,,	मानव
१४ अनंतनाथ	४ ,,	देव
१५ धर्मनाथ	पोनपल्योपमन्यून ३ सागर	,,
१६ शांतिनाथ	अर्ध ,,	मानव
१७ कुंथुनाथ	क्रोडसहस्रवर्षन्यून पाव पल्यो.	राक्षस
१८ अरनाथ	१००० क्रोड वर्ष	देव
१९ मल्लिनाथ	५४००००० वर्ष	,,
२० मुनिसुव्रत	६००००० वर्ष	,,
२१ नमिनाथ	५००००० वर्ष	,,
२२ नेमिनाथ	८३७५०	राक्षस
२३ पार्श्वनाथ	२५०	,,
२४ महावीर		मानव

४८ योनि	४९ मोक्षपरिवार		५० भवसंख्या	
नकुल	१००००	साथ	१३	भव
सर्प	१०००	,,	३	,,
सर्प	,,	,,	,,	,,
बिल्ली	,,	,,	,,	,,
उंदर	,,	,,	,,	,,
व्याघ्र	३०८	,,	,,	,,
,,	५००	,,	,,	,,
हिरण	१०००	,,	७	,,
श्वान	,,	,,	३	,,
वानर	,,	,,	,,	,,
नकुल	,,	,,	,,	,,
घोडा	६००	साथ	,,	,,
बकरा	६००	,,	,,	,,
हाथी	७००	,,	,,	,,
बकरा	१०८	,,	,,	,,
हाथी	९००	,,	१२	,,
बकरा	१०००	,,	३	,,
हाथी	,,	,,	,,	,,
अश्व	५००	साथ	,,	,,
वानर	१०००	,,	९	,,
अश्व	,,	,,	३	,,
महिष	५३६	,,	९	,,
हिरण	३३	,,	१०	,,
वृषभ	अेकाकी		२७	,,

तीर्थंकर	५१ वंशनाम	५२ गर्भस्थितिकाल			
१ ऋषभदेव	इक्ष्वाकु	९	मास	४	दिन
२ अजितनाथ	,,	८	,,	२५	दिन
३ संभवनाथ	,,	९	,,	६	दिन
४ अभिनंदन	,,	८	,,	२८	,,
५ सुमतिनाथ	,,	९	,,	६	,,
६ पद्मप्रभ	,,	,,	,,	,,	,,
७ सुपार्श्वनाथ	,,	,,	,,	१९	,,
८ चंद्रप्रभ	,,	,,	,,	७	,,
९ सुविधिनाथ	,,	८	,,	२६	,,
१० शीतलनाथ	इक्ष्वाकु	९	,,	६	,,
११ श्रेयांसनाथ	इक्ष्वाकु	,,	,,	,,	,,
१२ वासुपूज्य	,,	८	,,	२०	,,
१३ विमलनाथ	,,	,,	,,	२१	,,
१४ अनंतनाथ	,,	९	,,	६	,,
१५ धर्मनाथ	,,	८	,,	२६	,,
१६ शांतिनाथ	,,	९	,,	६	,,
१७ कुंथुनाथ	,,	९	,,	५	,,
१८ अरनाथ	,,	,,	,,	८	,,
१९ मल्लिनाथ	,,	,,	,,	७	,,
२० मुनिसुव्रत	हरिवंश	,,	,,	८	,,
२१ नमिनाथ	इक्ष्वाकु	,,	,,	,,	,,
२२ नेमिनाथ	हरिवंश	,,	,,	,,	,,
२३ पार्श्वनाथ	इक्ष्वाकु	,,	,,	६	,,
२४ महावीर	,,	,,	,,	७॥	,,

(४) धारणागति अथवा नामा जोडा

ज्योतिष शास्त्र के नियमानुसार हर एक नामधारी पदार्थ का हर एक के साथ एक प्रकार का आभिधानिक संबंध रहता है। वह संबन्ध अनुकूल और प्रतिकूल दो प्रकार का होता है। यह अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनों चीजों के नाम, नक्षत्र की योनि, गण, राशि और नाडीवेध तथा नामाक्षर से जानने योग्य वर्ग और लभ्य-देय (लेना देनी) इन छः बातों को देख कर निश्चित की जाती है।

१ योनि—

भिन्न भिन्न नक्षत्रों की भिन्न भिन्न योनियां होती हैं, जैसे अश्विनी की 'घोडा' भरणी की 'हाथी' इत्यादि, इन में जिन दो व्यक्तियों के नक्षत्र विरुद्धयोनि वाले होते हैं वहां 'योनिवैर' कहलाता है, जैसे किसी एक का जन्म नक्षत्र 'अश्विनी' है जिस की योनि 'घोडा' है और दूसरे का जन्म नक्षत्र 'हस्त' है जिस की योनि 'भैंसा' है तो इन दो नक्षत्र-वाली व्यक्तियों में योनिवैर होने की वजह से योनि की अपेक्षा से संबन्ध अनुकूल नहीं कहलायेगा।

२ गण—

नक्षत्रों के गण अर्थात् विभाग ३ हैं–देवगण, मानवगण और राक्षसगण।

अश्विनी, मृगसिर, पुनर्वसु आदि ९ नक्षत्रों का समुदाय, देवगण, भरणी आदि ९ नव का मानवगण और कृत्तिका आदि नव का राक्षसगण ।

दोनों व्यक्तियों के नक्षत्रों का एक गण होना अच्छा है, एक का देव दूसरे का मानवगण हो वहां तक भी साधारणतया ठीक है, परन्तु एक का देव दूसरे का राक्षस होना कलहकारी है और एक का मानव दूसरे का राक्षस गण मृत्युकारी होता है । जैसे अश्विनी नक्षत्र वाले का देवगण है और कृत्तिका नक्षत्रवाले का राक्षस जो कलहकारी है । इस लिये इन में गण-मेल नहीं कहा जायगा । इस कारण अश्विनी और कृत्तिका नक्षत्रवालों का संबन्ध गण की अपेक्षा से अच्छा नहीं है ।

३ राशि

राशि का तात्पर्य नक्षत्रों के समुदाय से है । कुल २७ नक्षत्र हैं और १२ राशि, अत एव २। सवा दो नक्षत्रों का १ एक राशि होगा । जैसे १ अश्विनी २ भरणी और कृत्तिका का प्रथम एक चरण मिलकर पहला मेष राशि होता है, इसी प्रकार सवा दो दो नक्षत्रों का एक एक राशि गिनने से २७ नक्षत्रों के १२ राशि होते हैं ।

इन राशियों में से एक व्यक्ति के राशि से दूसरे व्यक्ति का राशि दूसरा या बारहवाँ नौवां या पांचवाँ छट्ठा या आठवाँ हो तो वह शुभ नहीं गिना जाता, इन को क्रमशः दूआ बारह

नव पंचम और षडष्टक राशि कूट कहते हैं। जैसे एक व्यक्ति का राशि मेष है और दूसरे का वृष तो यह 'दूआ बारह' हुआ, क्योंकि मेष से वृषे दूसरा है और वृष से मेष बारहवां। इसी प्रकार नव पंचम और षडष्टक के उदाहरण स्वयं समझ लेना चाहिये।

४ नाडीवेध—

सर्पाकार चक्र बना कर ऊपर बीच में नीचे, नीचे बीच में ऊपर, ऊपर बीच में नीचे इस क्रम से अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्र लिखे जाते हैं जिन में से ९ ऊपर ९ बीच में और ९ ही नीचे आते हैं इन्हीं उपरली बिचली और निचली लाइनों का नाम क्रमशः आद्य मध्य और अन्त्यनाडी है।

इन में ऊपर बीचे या नीचे की एक ही लाइन में दोनों नक्षत्रों का आना नाडीवेध कहलाता है। वधू और वर जिनबिम्ब और बिम्बकारक आदि का नाडीवेध वर्जित किया है, तब कहीं कहीं नाडीवेध को उत्तम भी माना है।

५ वर्ग—

वर्ग का तात्पर्य वर्णमाला के वर्णवर्गों से है, अर्थात् १ अवर्ग २ कवर्ग ३ चवर्ग ४ टवर्ग ५ तवर्ग ६ पवर्ग ७ यवर्ग और ८ शवर्ग ये आठ वर्ग हैं। इन में से किसी भी वर्ग से पांचवां वर्ग शत्रु कहलाता है। जैसे एक व्यक्ति का वर्ग 'अ'

है और दूसरे का 'त' तो इन दोनों में वर्गसंबन्धी वैर कहलायेगा जो वर्जना चाहिये।

६ लभ्य-देय—

लभ्य-देय को लोक प्रसिद्धि में लेना देनी भी कहते हैं। दो व्यक्तियों में से कौन किस का लेनदार है और कौन देनदार यह देखने की प्राचीन् रीति यह है—दोनों व्यक्तियों के नाम के पहले अक्षरों के वर्ग के अंक निश्चित कर दोनों अंक आगे पीछे लिखना और जो संख्या बने उस को ८ का भाग देना, शेष बचे उसका आधा करना, जो संख्या आवे उतने विश्वा आगे के वर्गवाला पिछले वर्गवाले का देनदार है।

उन्हीं दो वर्गांकों को दूसरी बार पहले से विपरीत लिखना और उसी तरह भाग दे कर शेष का आधा कर देखना दोनों में से एक दूसरे का एक दूसरे से क्या लेना है और क्या देना सो मालूम हो जायगा। दोनों का लेन देन चुकने के बाद जिस का विश्वा वधेगा वह दूसरे से उतने का लेन दार है।

अगर दोनों व्यक्तियों का वर्गांक एक हो तो उस वर्ग के वर्णों का अंक ले कर ऊपर मुजब लेन देन देखना चाहिये।

उदाहरण के तौर पर ईश्वरलाल और चंपालाल के आपस में लेन देन क्या है? यह प्रश्न है। उत्तर—ईश्वरलाल का वर्गांक १ है, क्योंकि 'ई' अवर्गका अक्षर है और चंम्पालाल का वर्गांक २ है। इन दोनों अंकोंको आगे पीछे लिखने से क्रमशः

१३ और ३१ की संख्या होगी। १३ को ८ का भाग देने पर शेष ५ बचे, इन का आधा २॥ हुए। इस से ज्ञात हुआ कि चम्पालाल इश्वरलाल से २॥ विश्वा मांगता है। विपरीत अंक जोडने पर ३१ की संख्या हुई इसको ८ का भाग देने शेष ७ बचे इनका आधा ३॥ साढे तीन हुए इन में से २॥ विश्वा चम्पालाल के लेने में गये शेष १ विश्वा ईश्वरलाल का चम्पालाल में लेना रहा, इसलिये चम्पालाल ईश्वरलाल का ऋणी कहा जायगा और ईश्वरलाल चम्पालाल का धनी। दूसरा उदाहरण–राम और लक्ष्मण में कौन ऋणी धनी है? उत्तर—राम लक्ष्मण का वर्ग एक ही है इस वास्ते इन के वर्णों का अंक लिया जायगा 'राम' का नामाक्षर 'यवर्ग' का द्वितीय वर्ण है इसलिये अंक २ आया और लक्ष्मण का 'ल' उसी वर्ग का तृतीय वर्ण होने से ३ अंक लिया। साथ लिखने पर २३ की संख्या हुई इस को ८ का भाग देने पर शेष ७ बचे इस का आधा ३॥ साढे तीन विश्वा राम में लक्ष्मण के लेने हैं। अब वही अंक विपरीत क्रमसे लिखा तो ३२ हुए, इस संख्याको ८ का भाग देने पर शेष कुछ नहीं बचा। इस से सिद्ध हुआ कि लक्ष्मण के पास राम कुछ भी नहीं मांगते पर लक्ष्मण राम से साढे तीन विश्वा मांगते हैं।

उपर्युक्त योनि, गण, राशि और नाडीबेध ये चार बातें तो जन्म नक्षत्र के ऊपर से देखी जाती हैं परन्तु वर्गमेल और लेन देन प्रसिद्ध नामके प्रथम अक्षर के ऊपर से देखा जाता

है। यदि किसीका जन्म नक्षत्र मालूम न हो तो सभी बातें उस के प्रसिद्ध नाम से देखी जाती हैं[१]।

तीर्थंकर भगवान् की नवीन मूर्ति बनवा कर अंजनशलाका प्रतिष्ठा करने में भी उपर्युक्त छः ही बातों का विचार किया जाता है[२]।

यदि कोई व्यक्ति अपनी तरफ से मूर्ति बनवा कर प्रतिष्ठित कराता है तो उस के नाम और तीर्थंकर भगवान के नाम से उक्त छः बातें देखी जाती हैं और संघ की तरफ से मूर्ति की प्रतिष्ठा होती है तो उस गांव के नाम से उक्त बातों का मेल जोल देखा जाता है।

ऊपर हमने जिन छः बातों की शुद्धि होने की बात कही है उन में से योनि, गण, राशि और वर्ग इन चार बातों में कुछ अपवाद भी कहे हुए हैं, जो अवश्य जानने और ध्यान में

---

१ "तत्र यस्य धनिकस्य जिनस्येव जन्मनक्षत्रं ज्ञायते तस्य जन्मनक्षत्रेण योनिगणराशय एवं नाडिवेधश्च विलोक्यो न तु वर्गलभ्ये। वर्गयोरितरेतरपंचमत्वं मिथो लभ्यं देयं च जिनस्येव तस्यापि प्रसिध्धेनैव नाम्ना विलोक्यम्। जन्मनक्षत्राऽपरिज्ञाने तु तस्य योन्याद्यपि सर्वं प्रसिध्धेनैव नाम्ना विलोक्यम्।"

(धारणागतियन्त्राम्नाये)

२ "योनिगण-राशिभेदा लभ्यं वर्गश्च नाडिवेधश्च।
नूतनबिम्बविधाने, षड्विधमेतद्विलोक्यं ज्ञैः ॥ १ ॥"

(धारणागतियंत्राम्नाये)

रखने योग्य हैं। वे अपवाद नीचे मुजब हैं जिन से योनि वैरादि होते हुए भी नामाजोडा निर्दोष माना जाता है।

योनिवैर में अपवाद

धनिक (मूर्ति कराने वाला) और देव (जिस तीर्थंकर की मूर्ति है) के नक्षत्रों की योनि में परस्पर वैरभाव होने पर भी अगर धनिक नक्षत्र की योनि से जिन नक्षत्र की योनि कमजोर हो तो वहां नामाजोडा शुद्ध माना जाता है। जैसे केवलचंद के जन्म नक्षत्र 'पुनर्वसु' की योनि बिल्ली (मार्जार) है और सुमतिनाथ के जन्म नक्षत्र 'मघा' की योनि मूषक (उंदर), यहां यद्यपि बिल्ली और उंदर के आपस में वैर होने से केवलचंद और सुमतिनाथ के नामाजोडा में योनिवैर है, परन्तु यह योनिवैर दोषरूप नहीं। क्योंकि धनिक केवलचंद जो सुमतिनाथ से कमज़ोर है उसकी योनि बलवान् है और देव सुमतिनाथ जो बलवान् है उन की योनि केवलचंद की योनि से निर्बल है, इस कारण यहां योनिवैर का कुछ असर नहीं होता।

इसी प्रकार सर्वत्र धनिक की योनि देव की योनिसे बलवान् होने पर योनिवैर का दोष नहीं माना जाता[1]।

---

१ "बयो-बग-बवाः-धनिकस्य योनिगणवर्गा बलिष्ठाः सन्तीति, अयं भावः--अल्पबलेन बलिष्ठो न पराभूयते इत्यभिप्रायेण धनिकस्य मार्जारादिर्बलिष्ठो देवस्य चोन्दुरादिरबलः क्वचिद् गृहीतोऽस्तीति"।

(धारणागतियन्त्राम्नाये)

यदि देव और धनिक में योनिवैर हो और देव की योनि भी बलवान् हो तथापि वहां जातिवैर न हो तो वह वैर भी अवश्य वर्जनीय नहीं है, क्योंकि योनिवैर जातिवैर रूप होने पर ही अवश्य वर्जनीय है[1]।

गणवैर में अपवाद

इसी प्रकार धनिक और देव के नक्षत्रों में गणवैर होने पर भी धनिक का गण बलवान् और 'देव' का गण निर्बल होने पर गणवैर का असर नहीं रहता[2]। उदाहरण–सुरत का गण 'राक्षस' है और आदिनाथ तथा अजितनाथ का गण 'मानव'। यद्यपि मानव राक्षस का भक्ष्य है तथापि मानवगण वाले राक्षसगण वाले से बलवान हैं इस क़ारण यहां गणविरोध हानिकारक नहीं हो सकता।

राशिवैर में अपवाद

राशिकूट में हम लिख आये हैं कि देव धनिक के अन्योन्य नव पंचम, षडष्टक और दूसरा बारहवां राशि हो तो वर्जनीय हैं, परन्तु इन दोनों राशियों के स्वामियों में परस्पर मित्रभाव हो तो ये राशिकूट दूषित नहीं हैं[3]।

---

१ "धनिकस्य योनिवर्गौ अबलौ परं नायं विशिष्य दोषः, जातिवैराभावात्। शास्त्रेषु च योनिसत्कस्य जातिवैरस्यैव ×××वर्जनात्"। (धारणागतियन्त्र आम्नाये)

२ देखो पूर्वके पृष्ठमें टिप्पण नंबर १।

३ "यत्र तु षडष्टक-द्विर्द्वादश-नवपञ्चमेषु न राशिमैत्री तानि स्वामिमैत्र्यां ग्राह्याणीति।" (धारणा ग. यं. आम्नाये)

उदाहरण—सुरत के साथ सुपार्श्वनाथ का नामाजोडा मिलता है या नहीं इस की जांच करने पर मालूम हुआ कि सुरत का राशि कुंभ है और सुपार्श्वनाथ का तुला। कुंभराशि से तुलाराशि नौवां है और तुला से कुंभ पांचवा इस लिये सुरत और सुपार्श्वनाथ के परस्पर नवपंचम राशिकूट है, परन्तु यह नवपंचम दूषित नहीं है, क्योंकि कुंभराशि–स्वामी शनि और तुलाराशि–पति शुक्र के आपस में मैत्री है। इस राशि-स्वामि–मैत्री से राशिकूट नव पंचम का कुछ दोष नहीं। सुरत सुराणा या अन्य किसी भी ऐसे गाम या व्यक्ति के साथ कि जिसके नाम का प्रथम अक्षर 'स, सि, सु' इनमें से कोई भी अक्षर हो सुपार्श्वनाथ का नामाजोडा शुद्ध मिलता है यही कहना चाहिये।

वर्गवैर में अपवाद

ऊपर कहा गया है कि वर्गवैर वर्जना चाहिये परन्तु वैर अन्योन्य पंचमवर्ग संबन्धी ही तभी वर्जित है[1] सामान्य नहीं। अन्योन्य पंचमवर्ग विषयक वैर होने पर भी यदि धनिक का वर्ग बलवान् हो और देवका निर्बल तो वहां वर्गवैर आपत्ति-जनक नहीं है[2]। उदाहरण–गोल का वर्ग बिल्ली है और पार्श्व-

---

१ "वर्गवैरस्येतरेतरपञ्चमत्वरूपस्यैव वर्जनात्"।

(धारणागतियन्त्राम्नाये)

२ "धनिकजिननामवर्गयोरितरेतरपञ्चमत्वं त्याज्यं, परं

नाथ का वर्ग उंदर। बिल्ली उंदर में यद्यपि वैर है परन्तु यहां निर्बल का वर्ग सबल और सबल का वर्ग निर्बल होने से वर्ग वैर संबन्धी कुछ भी दोषापत्ति नहीं है।

ऊपर लिखे मुजब योनि, गण, राशि और वर्ग विषयक दोषों का तो परिहार है परंतु नाडीवेध और लेनादेनी के विषय में कुछ भी अपवाद नहीं है इसलिये नाडीवेध अवश्य वर्जना चाहिये[1] और लेना देनी के विचार में थोडा बहुत भी देव का धनिक लेनदार होना चाहिये न कि देनदार।

ऊपर नामा जोडा देखने संबन्धी छः बातों और उन के अपवादों का जो दिग्दर्शन कराया है उसको समझ कर ध्यान में रखना चाहिये। और इन सभी बातों को दृष्टि में रख कर किसी भी गाम नगर या व्यक्ति के साथ जिन बिंब का नामा जोडा देखना चाहिये। ऐसा करने वाले कभी धोखा नहीं खायेंगे।

आज कल श्रावक लोगों में जान अनजान की परीक्षा न होने से अथवा दृष्टिराग के कारण वे हर किसी को ये बातें पूछ बैठते हैं और अर्धदग्ध मिथ्याभिमानी साधु और यति

यदि धनिको मार्जारः स्याज्जिनस्योन्दुरः स्यात्तदा न दोषो, विपर्यये तु दोषः। एवमन्यत्रापि भाव्यम्।"

(धारणागतियन्त्रआम्नाये)

१ "नाडिवेधश्चात्र सर्वत्र टालित एव।"

(धारणा ग. यं. आम्नाये)

लोग विषय के जानकार न होते हुए भी अभिमान के वश अज्ञता छिपाने के लिये कुछ न कुछ अंडबंड उत्तर दे ही देते हैं, वे यह तो जानते ही नहीं कि इस विषय में कई अपवाद और परिहार भी होते हैं, सिर्फ राशि या वर्ग आदि गिन कर कह देते हैं कि तुम्हारे लिये अमुक अमुक भगवान की मूर्ति अनुकूल हैं और वे पूछने वाले दृष्टि राग से या तो खोटी प्रसिद्धि के वश अंधे हो कर उस असत्य बात को भी सत्य मान लेते हैं। यदि पूछने वाले किसी धारणागतियंत्र-वेत्ता विद्वान् के पास पूछ कर आये हैं और कहते हैं कि अमुक महा राज ने तो ये ये नाम अनुकूल बताये हैं तो वे अर्धदग्ध तुरंत पंचांग टटोलने लगते हैं और बताये हुए नामों के साथ कहीं प्रीतिनवपंचम, प्रीतिषडष्टक या प्रीति दूआबारह जैसा होता है तो कह बैठते हैं–देखो इस में फलां फलां दोष है। बस उस अर्धदग्ध की बात से लोगों के दिल में शंका उत्पन्न हो जाती है और यदि मूर्ति ले आये हैं तब तो वे निरर्थक पश्चात्ताप करते हैं और मूर्ति लानी होती हैं तो वे अनेकों के पास खाक छानते फिरते हैं और तरह तरह की बातें सुन कर संशयाकुल होते हैं। बस इन खराबियों को दूर करने और अर्धदग्धों को सबक देने के लिये ही यह लेख लिखना पडा है।

मु. लेटा, (मारवाड).
ता. १६-१०-३४.

मुनि कल्याणविजय

(५) घर कहां और कैसा बनाना चाहिये ?

जैन श्रावकों को किस जगह कैसी जमीन में और कैसा घर बनाना चाहिये इसका कुछ विवरण नीचे दिया जाता है।

गृहस्थ को चाहिये कि अपने रहने का घर ऐसी जगह बनावे जहां धर्म अर्थ और काम इन तीनों की साधना होती रहे, जहां जैनमंदिर का योग हो, जहां मुनि महाराजों के दर्शन का और व्याख्यान सुनने का लाभ प्राप्त होता हो, जहां धर्मचुस्त श्रावकों की वसती भरपूर हो, आसपास के पडौसी लोग सदाचारी हों और जहां की आबहवा अच्छी हो।

अच्छे गांव में रहने से दिन बदिन घर की और कुटुंब की आबादी और उन्नति बढती रहती है। कुग्राम में निवास करने से धर्मी मनुष्य की जींदगी खराब हालत को पहूंच जाती है, बुद्धि और विचार भी मलिन बन जाते हैं, इस दशा में न इस लोक का साधन होता है न परलोक का। व्यर्थ गृहस्थ जीवन नष्ट हो जाता है। एक नीतिकारने कहा है कि-

"यदि वांछसि मूर्खत्वं, ग्रामे वस दिनत्रयम् ।
अपूर्वस्यागमो नास्ति, पूर्वाधीतं च नश्यति ॥ १ ॥"

हे विचारशील सज्जन ! अगर तू मूर्ख होना चाहता है तो अविवेकी गांव में तीन दिन निवास कर, कारण के उस गांव में नवीन ज्ञान की प्राप्ति नहीं है और पहले का पढ़ा हुआ नष्ट हो जाता है।

इस लिये अच्छे गांव में धर्मप्रेमी श्रावकों के नजदीक में घर बनाना श्रावक के लिये लाभकारी है।

योग्य जमीन की परीक्षा.

जिस जमीन पर इमारत खडी करनी हो वहां पहले खुदवाना चाहिये, वैसा करने से वहां से खराब अपमांगलिक चीजें निकल जाती हैं।

जिस जमीन में हड्डी न हो, राख न हो, जहां डाभ उगता हो, वर्ण और गंध मिट्टी का अच्छा हो, जहां से मीठा जल निकलता हो वह जमीन अच्छी है।

जो भूमि शीतकाल (सीआला) में उष्णस्पर्श वाली हो याने छूने से गरमी मालूम देती हो और ग्रीष्म ऋतु (उन्हाला) में शीतस्पर्श वाली याने छूने से ठंडक मालूम देती हो वह बहुत ही उत्तम जमीन है। तथा एक हाथ प्रमाण जमीन खोद कर फिर उसी मिट्टी से खड्डा भर देवे, भरने पर अगर मिट्टी अधिक रहे तो वह जमीन श्रेष्ठ है, अगर मिट्टी बराबर रहे तो मध्यम भूमि समझना और मिट्टी कम मालूम देवे याने उस से गड्ढा न भरे तो वह जमीन अशुभ है। अथवा हाथ प्रमाण समचोरस और गहरा गड्डा खोद कर जल से भर दे अगर सौ कदम तक चले उतने समय में एक अंगुल जल सूखे तो वह जमीन शुभ जानना, दो अंगुल जितना जल सूख जाय तो मध्यम और तीन अंगुल जल सूख जाय तो वह भूमि अधम अर्थात् अशुभ है ऐसा समझना चाहिये।

जिस भूमि में व्रीहि (चावल) बोया गया तीन दिन के बाद उगे उसको उत्तम, पांच दिन के बाद उगे उसको मध्यम और सात दिन पीछे उगे उसको हीन याने बिलकुल खराब समझो।

पोली जमीन पर घर बनावे तो निर्धन (कंगाल) बन जाता है और मनुष्य की हड्डी या केशवाली जमीन पर घर बनावे तो वहां मनुष्य की आबादी घटती जाती है।

जमीन में गधे की हड्डी या ओर कोई अवयव हो तो राजा की तर्फ से भय होता है, कुत्ते की हड्डी हो तो बालक मर जाता है, बालक की हड्डी हो तो घर का मालिक विदेश में ही गुजर जाता है, गाय की हड्डी हो तो उस घर में गाय का विनाश हो, मनुष्य की खोपरी केश या भस्म हो तो मरण होता है।

ऐसे दोष रहित जमीन देख कर घर-मकान बनावे।

घर ऐसे स्थान में बनाना चाहिये कि जहां दिन के दूसरे और तीसरे पहर में किसी वृक्ष की या मंदिर के ध्वज (धजा) की छाया न पडती हो। दूसरे तीसरे पहर में मंदिर की ध्वजा की छाया का घर पर पडना अच्छा नहीं, वैसे मंदिरके शिखर की छाया भी घर पर न पडनी चाहिये।

जैन मंदिर के पीछे, सूर्य तथा शिवमंदिर के सामने और विष्णुमंदिर के बाये भाग में (डावे भाग में) घर बनाना अच्छा नहीं।

ब्रह्मा का मंदिर चारों दिशा में और चंडिका का मंदिर सर्व दिशाओं में छोडना चाहिये।

जिन मंदिर के सामने और दाहिनी (जीमणी) तर्फ और शिवमंदिर के पीछे या बाये भाग में रहना कल्याणकारी है।

गांव के ईशान कोने में घर बनाना अच्छा नहीं, बनावे तो गृहस्थ को बडी मुसीबतें उठानी पडती हैं।

घर बनाते या लेते वक्त वहां के पडौसी से किसी तरह का टंटा या तकरार करना न चाहिये।

जिनमंदिर की ईंट पत्थर विगैरह कुछ भी चीज घर में न डालनी चाहिये, तथा दूसरे भी किसी देवस्थान की, कूए की, वाव की, मठ की, स्मशान की और राजमंदिर की ईंट पत्थर या लकडी कोई भी चीज घर में न डाले, कारण वे चीजें घर में विरोध उत्पन्न करती हैं।

पत्थर के घर में लकडे का थंभा और लकडे के घर में पत्थर का थंभा लगाना अच्छा नहीं।

बिलकुल हलका लकडा, कोल्हु का (घाणीका) लकडा, गाडीका, अरहटका, चरखे का, कांटेवाले वृक्ष का, पांच उदुंबर (उमरा) का और थोहर का लकडा घर में न लगावे।

घर में बीजोरा, केला, दाडिम, बोरडी, जंबीरी, हलइ, इमली और धत्तूरा न होना चाहिये, ये ही वृक्ष पडोस में लगेहों और उन की जड अपने घर नीचे आवे तो भी अशुभ समझनी चाहिये। तथा इन वृक्षों की छाया भी पडे तो कुल का नाश करे।

पूर्व दिशा में घर ऊंचा हो तो धनका नाश करता है, दक्षिण में या पश्चिम में घर ऊंचा हो तो धन की वृद्धि करता है और उत्तर में ऊंचा हो तो घर उजाड हो जाता है।

घर की शकल गोल हो, वह एक कोने वाला, दो कोने वाला, तीन कोने वाला अथवा अनेक कोने वाला हो और दक्षिण में या बायीं तर्फ लंबा हो ऐसा घर अशुभ है। उस में रहना ठीक नहीं। जिस घर के किवाड अपने आप खुलें या बंद हो जावें वह घर भी अशुभ है।

घर के द्वार पर कलस स्वस्तिक आदि चित्र हों तो शुभ हैं, परंतु घर के भीतर या बाहर नाच, खेल, महाभारत और रामायण के युद्ध के, राजाओं के युद्ध के, साधु संन्यासी के या देवता के चित्र हों तो अशुभ हैं।

फलता हुआ वृक्ष (दरखत), फुली हुई वेल, सरस्वती देवी, लक्ष्मी देवी, नवनिधान, यज्ञ का थंभ, वर्धमान, १४ स्वप्न ये चित्र कराना शुभ है।

घर में खजूर, दाडिम, केला, कोहला, बीजोरा ये वृक्ष नहीं लगाना, कारण उन से घर का विनाश होता है, मनुष्य का घाटा आ जाता है।

वड वृक्ष घर में उगे तो लक्ष्मी का नाश करता है, कांटों वाला वृक्ष हो तो दुश्मन का भय रहता है, बडे फल वाला वृक्ष उगे तो संतान का नाश करता है, ऐसे वृक्ष का काष्ट भी छोड देना चाहिये। कितनेक कहते हैं कि घर के पूर्व दिशाभाग

में वडवृक्ष हो तो अच्छा है, दक्षिण तर्फ उदुंबर (उंबरा) वृक्ष शुभ है, पश्चिम भाग में पीपला और उत्तर में प्लक्ष (पारस पीपला) वृक्ष अच्छा है।

घर में पूर्व दिशा में लक्ष्मी का स्थान, पश्चिम में भोजन का स्थान, उत्तर में जल रखने का पनिहारा, दक्षिण में सोने की जगह, अग्नि कोन में रसोडा, नैरूत में शस्त्रशाला (शस्त्र रखने का स्थान), वायु कोन में अनाज की वखार और ईशान कोण में देवमंदिर बनवावे।

यहां पर पूर्वादि दिशाओं का हिसाब घरके दरवज्जे की अपेक्षासे समझना चाहिये सूर्य की अपेक्षासे नहीं।

घर के अनेक खिडकियां नहीं होनी चाहियें, खिडकी के किवाड मजबूत और आसानी से खोले जावे वैसे बनवाने चाहियें।

इस के सिवाय ओर भी अच्छे अच्छे लक्षण हों वे शिल्प शास्त्र के जानने वाले से पूछ कर कराने चाहिये, जिस से भविष्य में हर तरह से वह घर हरा भरा रहे और दिन दिन उस की तरक्की होती रहे।

(६) सूतक विचार.

जन्म संबन्धी सूतक

पुत्र का जन्म हो तो दश दिन का और पुत्री का जन्म हो तो ग्यारह दिन का सूतक लगता है। बारहवें दिन न्हाने धोने के बाद वह घर शुद्ध हो जाता है।

शास्त्रानुसार बारहवें दिन घर के अन्य मनुष्य भगवान् की पूजा कर सकते हैं ।

सूतक वाले घर से अलग रह कर भोजन करते हों तो दूसरे के घर से जल लाकर उस से स्नान कर सदा पूजा हो सकती है, कारण कि सूतक जहां जन्म हुआ है वहां गिना जाता है अन्यत्र नहीं । हां इस में इतना जरूर है कि जन्मे हुए बालक का पिता अगर अलग रसोई जीमता हो तो भी उस को पांच दिन का सूतक अवश्य पालना पडता है और शामिल रहे तो ग्यारह दिन का सूतक है ही ।

जन्म देने वाली स्त्री १ महीना तक जिनमंदिरका दर्शन नहीं कर सकती, तथा ४० दिन तक भगवान् की पूजा नहीं करती । तथा ४० दिन तक उस के हाथ का बना हुआ भोजन मुनि को लेना न कल्पे

गोत्री के लिये जो पांच दिन का सूतक कहा जाता है उस का मतलब यह है कि पुराने जमाने में एक कंपाउंड वाले घर में एक पछीत वाले भिन्न भिन्न कमरो में सारा कुटुंब रहता था, निकलने का दरवाजा एक ही होता था जिस से वहां गोत्री-जनों को पांच दिन का सूतक पालना पडता था । आज कल सब कुटुंबी लोग अलग घरों में रहते हैं, एक कंपाउंड वाला घर नजर नहीं आता इस लिये गोत्री के वास्ते पांच दिन का हिसाब नहीं गिना जाता । अगर कहीं पर आज भी वैसे घर

हों तो वहां रहने वालों को पांच दिन का सूतक पालना चाहिये।

सूतक वाले घर से मिला हुआ आस पास किसी का घर हो, सिर्फ बीच में आडी दिवार (भीत) हो परंतु सूतक वाले घर में जाना आना न होता हो तो उस पडोसी को सूतक नहीं लगता। वह दर्शन पूजा विगेरह कर सकता है। उस के घर का आहार मुनिराज ले सकते हैं।

प्रसूति वाली के खान पान रसोई आदि की सरभरा करने वाली स्त्री के सिर्फ ग्यारह दिन का ही सूतक है, इतने दिन तक सामायिक प्रतिक्रमण देवदर्शन आदि नहीं कर सकती। कितनेक लोग उस के लिये सत्ताईस दिन का पर हेज करना कहते हैं सो व्यावहारिक रूढि है, इस रूढि को मान कर ही कितनीक जगह मुनिराज सूतक वाले के घर से सत्ताईस दिन तक आहार पानी नहीं लेते हैं, इस का भी कारण देखा जाय तो यही है कि विशेष सफाई नहीं रहती इस लिये २७ दिन की रूढि चलाते हैं, जहां स्त्रियां सफाई अच्छी रखती हों वहां १२ दिन के बाद आहार पानी लेने में कुछ दोष नहीं है। गुजरात में कहीं कहीं ऐसा रिवाज भी है। मगर उस में देखना यह चाहिये कि बारह दिन के बाद भी जन्म देने वाली स्त्री पनेहरे को छूती न हो अथवा रसोई बनाती न हो। तात्पर्य यह है कि रसोई दूसरी स्त्री करती हो और प्रसूती वाली स्त्री जल तथा रसोई घर में न जाती हो तो बारहदिन के बाद आहार लेना कल्पे, अन्यथा २७ दिन के बाद।

यहां पर कितनेक लोगों का खयाल है कि सुआवड वाली स्त्री को रसोई कर खिलाने वाली पर तेले (अट्ठम) का दंड आता है वह ठीक नहीं है, यह जो तेले का दंड शास्त्र में लिखा है वह नाल छेदना स्नान कराना आदि दाई का काम करने वाली के लिये है।

कितनेक यह भी कहते हैं कि जिस घर में जन्म हुआ हो उस के आस पास के तीन तीन घर छोड कर साधु को आहार पानी लेना चाहिये, मगर यह भी गलत है। तीन तीन घर छोडने का मूल तात्पर्य यह है कि किसी घर में कोई मर गया हो और जब तक मुडदा वहां पडा हो तब तक दोनों तर्फ के तीन तीन घरो में पठन पाठन नहीं हो सकता।

व्यवहार नामक छेद सूत्र की टीका में दश दिन के सिवाय अधिक सूतक नहीं बतलाया, लेकिन् लोगो में बराबर आचार विचार शुद्ध न रहने लगा तब पिछले पुरुषों ने समय देख कर सूतक में कमी बेशी की है, उस मुताबिक विवेकी पुरुष पालन करते रहें।

अपने घर में दास दासी जो अपने आधार पर रहे हुए हों तो उन का सूतक सिर्फ चोईस पहर का है। चोईस पहर के बाद देव दर्शन पूजा सामायिक आदि हो सकता है।

गाय, भेंस, ऊंटनी, घोडी घर में प्रसवे तो दो दिन का सूतक और बाहर प्रसवे तो दिन १ का सूतक होता है।

भैंस का दूध दही घी १५ दिन के बाद, गाय का दूध दही घी विगैरह तथा ऊंटणी का दूध प्रसव से दश दिन के बाद काम आता है और बकरी घेटी का ८ दिन के बाद। अर्थात् प्रसव से इतने दिनों के बाद दूध घी विगेरह खाने लायक होते हैं, पहले नहीं। पहले खाय तो पूजा प्रतिक्रमणादि नहीं कर सकते, सिर्फ बाहर से दर्शन में विशेष प्रतिबन्ध (हर्ज) नहीं है।

रजस्वला (कारणवाली) स्त्री का सूतक

कारण वाली स्त्री तीन दिन तक घर में बरतन आदिको नहीं छू सकती, दर्शन सामायिक, प्रतिक्रमण नहीं कर सकती, लेकिन् तपस्या करे वह गिनती में आ सकती है। दिन ४ के बाद जिन पूजा कर सकती है, रोग के कारण कपडे धोने के बाद अशुद्धि नजर आवे उस का हर्ज नहीं, शुद्धि पूर्वक दर्शन हो सकता है। मुनिराज को दान दे सकती है, मगर भगवान् की अंगपूजा न कर सके।

कारण वाली स्त्री को चाहिये कि तीन दिन तक इलाहिदे कमरे में बैठे, घर में पनेहरा रसोडा या जहां घर के दूसरे मनुष्यों के सोने बैठने की जगह हो वहांसे दूर रहे।

कई जगह देखा जाता है कि ऋतुवती स्त्रियां पूरा खयाल नहीं रखतीं, सारे घर में इधर उधर फिरने लग जाती हैं, यहां तक कि रसोडे का भी पूरा परहेज नहीं रखतीं, यह कितनी

अज्ञानता है ? । कई जगह ऐसा भी अकसर देखा गया है कि कारण वाली स्त्री गोबर ला कर घर में लींपणे का काम करती है अगर बुद्धि से विचार किया जाय तो घर में लींपना शुद्धि के वास्ते है और जब वह स्त्री तो खुद अशुद्ध हालत में है तो फिर उसके हाथ का लींपना किस काम का ?, यह तो उल्टा ज्यादा अशुद्ध हुआ । इस लिये इस विषय में कारणवाली स्त्रियों को बहुत सोच विचार कर चलना चाहिये ।

मरण संबंधी सूतक

घर का कोई मनुष्य गुजर जाय तो १२ दिन का सूतक होता है, १२ दिन तक उस के घर से मुनिराज आहार पानी नहीं ले सकते, उसके घर के जल से जिनपूजा नहीं हो सकती ऐसा निशीथचूर्णि में कहा है । तथा १२ दिन तक उस घर वाला पूजा सामायिक प्रतिक्रमण नहीं कर सकता, पुस्तक और माला के हाथ नहीं लगा सकता, माला गिनने का नियम हो तो होठ हिलाये विना मन में नवकार मंत्र गिने और मंदिर दर्शन भी बाहर से ही करे ।

निशीथ सूत्र के सोलहवें उद्देशे में जन्म और मरण का घर दुगंछनिक (अशुद्ध) कहा है ।

मृत्यु वाले के पास सुवे तो दिन ३ पूजा नहीं हो सकती ।

खांधिया या मुडदे को छूने वाला दिन ३ पूजा पडिक-मणादि नहीं कर सकता मगर मन में नवकार गिने तो कोई हर्ज नहीं ।

मुडदे को स्पर्श न किया हो और बिलकुल निराला रहा हो यहां तक कि श्मशान का धूंआ तक न लगा हो तो स्नान करने पर शुद्ध है ।

खांधिये के सिवा दूसरा कोई मुर्दे का स्पर्श करे तो सोलह पहर पूजा पडिकमणादि नहीं कर सकता।

जिस के घर जन्म या मरण हुआ हो वहां भोजन करने वाले दिन १२ तक पूजा नहीं कर सकते ।

वेष बदलने वाले याने मरने की खबर सुन स्नान कर के कपडे बदलने वालों को ८ पहर का सूतक लगता है ।

बच्चा जन्मे उसी दिन मर जाय अथवा विदेश में मरण हो तो दिन १ का सूतक, तथा साधु यति मरे तो भी दिन १ का सूतक है ।

८ वर्ष तक की उमर का बालक मरे तो दिन ८ का सूतक है, परंतु जो बच्चा दूधमुंहा हो अनाज न खाता हो तो सिर्फ ३ दिन का सूतक है । ८ वर्ष के ऊपर हो तो दिन १२ गिने जाते हैं ।

गाय भेंस आदि मर जाय तो उनका कलेवर घर से बाहर ले जाने के बाद १ दिन का सूतक और किसी दूसरे पशु पंखी का कलेवर पडा हो तो वह जब तक न हटाया जाय तब तक सूतक लगता है वहां से बाहर ले जाने के बाद नहीं ।

कोई दास दासी अपने घर में गुजर जाय तो सिर्फ तीन दिन का सूतक माना गया है ।

जितने महीने का गर्भ गिरे उतने दिन का सूतक समझना, परदेश में गये हुए का मरण समाचार सुने तो १ अथवा २ दिनका सूतक लगे ऐसा कल्पभाष्य का लेख है।

गोमूत्र में २४ पहर के बाद संमूर्च्छिम जीव उत्पन्न होते हैं। भेंस के मूत्र में १६ पहर बाद जीव उत्पत्ति, गाडर गधी तथा घोडी के मूत्र में ८ पहर बाद जीव उत्पत्ति और मनुष्य के मूत्र में ४ पहर बाद संमूर्च्छिम जीव उत्पन्न होते हैं।

(७) रोगी-मृत्युज्ञान।

रोगीमृत्युज्ञापक त्रिनाडीचक्र पहला।

इस चक्रका नाम 'त्रिनाडीचक्र' है। इसका दूसरा नाम 'भुजंग चक्र' भी है। इसके बनाने का विधान नीचे के प्राचीन पद्य में दिया है—

"आइच्चाइ धरेवि भुअंगह, पनरस माहि ठवेविणु अंगह।
बारस बाहिरि तस्स य दिज्जइ, जीविय-मरण फुडं जाणिज्जइ॥"

अर्थात् प्रथम आदिनाडी में रवि नक्षत्र लिखना फिर मध्य और अंत्य नाडी में अनुक्रम से उसके बाद का एक एक नक्षत्र लिखना उसके बाद तीन नक्षत्र अंत्यनाडी के ऊपर बाहर लिख कर फिर अंत्यनाडी से शुरू करके आदिनाडी तक तीन नक्षत्र लिखे, बादमें आगे तीन नक्षत्र आदि नाडी के नीचे बाहर लिखे और फिर आदि मध्य अंत्य नाडियों में क्रमशः तीन नक्षत्र लिख कर अंत्यनाडी के ऊपर तीन नक्षत्र लि-

खे, बाद में अंत्य मध्य आदि नाडियों में तीन नक्षत्र लिखकर आदि नाडी के नीचे बाहर तीन नक्षत्र लिखे और फिर आदि नाडी से लेकर अंत्यनाडी तक में तीन नक्षत्र लिख दे। इस प्रकार एक एक नाडी के ५-५-नक्षत्र मिलकर कुल १५ नक्षत्र तीन नाडियों में आवेंगे, अंत्य नाडी के ऊपर दो जगह लिखे हुए ३-३-नक्षत्र और आदिनाडी के नीचे बाहर दो जगह लिखे हुए ३-३-नक्षत्र मिलकर कुल १२ नक्षत्र नाडियों के बाहर आवेंगे।

चक्र की स्थापना—

मृ. अ.

रो. आ. वि. ज्ये.

३ कृ. पु. स्वा. मू. रे.

२ भ. पु. चि. पू. उ.

१ अ. अ. ह. उ. पू.

म. उ. श्र. श.

पू. ध.

इस चक्र में रवि नक्षत्र से लिखने का प्रारंभ करना चाहिये। यहां पर अश्विनी से प्रारंभ करके कुल नक्षत्र लिखे हैं, क्योंकि अश्विनी को ही यहां कल्पना से रवि नक्षत्र मान लिया है। देखने के समय रोगी जिस समय बीमार पडा उस समय सूर्य किस नक्षत्र पर था इस बात का निश्चय पंचांग में देखकर कर लेना चाहिये और फिर उस नक्षत्र को आदि ना-

डी में प्रथम लिख कर फिर ऊपर लिखे क्रम से बाकी के तमाम नक्षत्र लिख लेना चाहिये।

इस प्रकार तत्कालीन चक्र तैयार होजाने के बाद उसमें रोगी के जन्म नक्षत्र को देखे कि वह किस नाडी में पडा है, अगर आदि नाडी में रोगी का जन्मनक्षत्र पडा हो तो रोगी की मृत्य होने का संभव जानना चाहिये। रोगी का जन्म नक्षत्र मध्य नाडी में पडा हो तो दीर्घपीडा कहना और रोगी का नक्षत्र अंत्यनाडी में आया हो तो अल्प कष्ट कहना। रोगी का जन्म नक्षत्र जो नाडी चक्र के बाहर के नक्षत्रों में पडा हो तो समझना चाहिये कि नाम मात्र का कष्ट देखकर रोगी अच्छा हो जायगा।

रोगि मृत्युज्ञानार्थ त्रिनाडी चक्र दूसरा—

म. श्र.
अ. पू. उ. ध.
३ पु. उ. पू. श. मृ.
२ पु. ह. मू. पू. रो.
१ आ. चि. ज्ये. उ. कृ.
स्वा. अ. रे. भ.
वि. अ.

इस चक्र के लिखने की रीति भी पूर्वोक्त पहले चक्र के जैसी ही है, फरक मात्र इतनाही है कि पहले चक्रमें रवि नक्षत्र से नक्षत्र लिखने की शुरुआत होती है और इसमें आर्द्रा नक्षत्र से।

"आर्द्राद्यैः पञ्चदशभिस्त्रीणि त्रीण्यन्तरा त्यजन् ।
त्रिनाडीचक्र चन्द्रार्क-जन्मवेधे न जीवति ॥"

अर्थात् बीच में तीन तीन नक्षत्रों को छोडते हुए आर्द्रादि पंद्रह नक्षत्रों से त्रिनाडीचक्र बनाना। इसमें चन्द्रनक्षत्र सूर्यनक्षत्र और रोगीका जन्म नक्षत्र ये तीनों नक्षत्र एक नाडी में हों उस समय बीमार पडने वाला रोगी मर जाता है।

सूर्य नक्षत्र और रोगिनक्षत्र एक नाडी में हों तो अधिक कष्ट और सूर्य नक्षत्र रोगीनक्षत्र चंद्र नक्षत्र ये तीनों भिन्न भिन्न नाडियों में हों तो स्वल्प कष्ट भोग कर अच्छा हो जाता है।

रोगिमृत्युज्ञानार्थ त्रिनाडी चक्र तीसरा—

३	पु.	अ.		चि.	स्वा.	पू.	उ.	उ.	रे.	मृ.
२	पु.	म.	ह.	वि.	मू.	श्र.	पू.	अ.	रो.
१	आ		पू. उ.		अ. ज्ये.		ध. श.		भ. कृ.

इस तीसरे नाडीचक्र में भी आर्द्रा से ही नक्षत्र लिखे जाते हैं, परंतु ऊपर के दो चक्रों में तीन तीन के बाद तीन तीन नक्षत्र ऊपर नीचे बाहर लिखे जाते हैं वैसे इसमें नहीं लिखे जाते, इसमें तो आर्द्रा पुनर्वसु और पुष्य आदि मध्य और अंत्यनाडी में लिखकर फिर आश्लेषा मघा और पूर्वाफाल्गुनी अंत्य मध्य और आदि नाडी में लिखना, इसी प्रकार नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे लिखते हुए २७ नक्षत्र तीन

नाडियों में लिख दिये जाते हैं। इस चक्र की विधान गाथा नीचे मुजब है—

> "आई अद्दा मिगं अंते, मज्झे मूलं पइट्ठिअं ।
> रवींदुजम्मनक्खत्तं, तिविद्धो न हु जीवति॥"

अर्थात् आदि में आर्द्रा अंत में मृगशिरा और मध्य में मूलको रखना, इनके अगले पिछले नक्षत्र आगे पीछे तीनों नाडियों में लिखना, फिर रोगोत्पत्ति समय के सूर्य नक्षत्र की चंद्र नक्षत्र की और रोगी के जन्म नक्षत्र की तलाश करना, अगर तीनों नक्षत्र एक ही नाडी में पडे हों तो रोगी का जीना कठिन है। सूर्य नक्षत्र और रोगी नक्षत्र एक नाडी में हों तो अधिक कष्ट भोग कर रोगी अच्छा होगा, रोगी नक्षत्र और चंद्रनक्षत्र एक नाडी में हों अथवा तीनों नक्षत्र भिन्न भिन्न नाडियों में हों तो अल्प कष्ट भोगने के बाद रोगी अच्छा होगा।

नाडी चक्रों के विषय में विशेष विधान—

ग्रंथान्तर में इन नाडीचक्रों में विशेष विधान भी है जो नीचे के श्लोकों से व्यक्त होगा—

> "रोगिणो जन्मऋक्षस्य, एकनाड्यां यदा रविः।
> यावदृक्षं रवेर्भोग्यं, तावत्कष्टपरम्परा ॥
> रोगिणो जन्मऋक्षस्य, एकनाड्यां यदा शशी ।
> तदा पीडां विजानीया-दष्टप्राहरिकीं ध्रुवम् ॥
> क्रूरग्रहास्तदन्ये तु, यदि तत्रैव संस्थिताः ।
> तदा काले भवेन्मृत्युः, सत्यमीशानभाषितम् ॥"

अर्थात् रोगी का जन्म नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र एकनाडी में हो तो जब तक सूर्य उस नक्षत्र पर रहेगा तब तक रोगी को कष्ट भोगना पडेगा।

रोगी का जन्म नक्षत्र और चंद्र नक्षत्र एक नाडी में हों तो रोगी को आठ पहर याने एक दिन-रात्रि का कष्ट कहना चाहिये।

अगर सूर्य अथवा चंद्र के अतिरिक्त दूसरे भी क्रूर ग्रह उस वक्त उस नाडी पर बैठे हों तो रोगी का मरण हो।

तात्पर्य यह है कि रोगी नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र दोनों एक नाडी में हों और दूसरे भी क्रूरग्रह उस नाडी में हों तो रोगी का बचना कठिन है।

ऊपर का विशेष विधान तीनों नाडी चक्रों के लिये समान है।

खुलासा—

त्रिनाडी चक्र देखना कुछ भी मुश्किल नहीं है, इसके लिये २७ नक्षत्रों के नाम जान लेना जरूरी है।

सूर्य जिस नक्षत्र पर होता है वह रवि नक्षत्र अथवा 'रविया नक्षत्र' कहलाता है। सूर्य प्रायः १३-१४-दिन एक नक्षत्र पर रहता है। किस समय सूर्य किस नक्षत्र पर है यह पंचांगों में लिखा रहता है।

चंद्रमा जिस नक्षत्र पर हो वह चंद्रनक्षत्र है इसी को दिन नक्षत्र भी कहते हैं, क्यों कि साधारण रीति से इस का भोग

काल ६० घडी का होता है। पंचांगों में वार के बाद जो नक्षत्र लिखा रहता है वही चंद्रनक्षत्र है।

रोगी मनुष्य का जिस चंद्रनक्षत्र में जन्म हुआ हो वह उस का जन्म नक्षत्र है। अगर रोगी का जन्म नक्षत्र न मालूम हो तो उस के प्रसिद्ध नाम से जो नक्षत्र बनता हो वही उस का जन्मनक्षत्र मान लेना चाहिये।

ऊपर जो तीन त्रिनाडी चक्र लिखे हैं उन में जो कि अधिक जगह विरोध नहीं आता, तथापि कहीं कहीं ऐसा भी प्रसंग आ जाता है कि एक चक्र के अनुसार मृत्युयोग मालूम होता है तब दूसरे के विधानानुसार दीर्धपीडा और तीसरे के विधान से स्वल्पकष्ट। ऐसे स्थानों में परीक्षकों को बहुत सोच विचारके भविष्य कहना चाहिये, अन्यथा वे झूठे पडेंगे, सिर्फ एक ही चक्र के अनुसार मृत्युयोग बनता हो लेकिन् रोगोत्पत्ति यदि शुक्ल पक्ष में हुई हो और उस समय रोगी का जन्म चंद्र हो अथवा आठमा चंद्र हो और अन्य भी एक दो क्रूर ग्रह उस नाडी में पडे हों तो रोगी का बचना कठिन ही समझना चाहिये। इसी प्रकार रोगोत्पत्ति कृष्ण पक्ष में हुई हो और उस समय–३–५--७--वीं तारा में से कोइ एक तारा हो और सूर्य और रोगि के नक्षत्र वाली नाडी में अन्य भी क्रूरग्रह वर्तमान हों तो भी रोगी का बचना कठिन है, इस के विपरीत त्रिवेध होने पर भी रोगोत्पत्ति के समय तारा अनुकूल होगी और अन्य

क्रूरग्रह उस नाडी पर नहीं होगा तो रोगी के जीने की कुछ आशा की जा सकती है।

इन नाडीचक्रों के अवलोकन के साथ ही रोगी को किस नक्षत्र तिथि और वार में रोग उत्पन्न हुआ है यह भी देखना जरूरी है। नाडीचक्र और नक्षत्र-तिथि-वार योग इन दोनों के क्रम से यदि रोगी का मृत्युयोग बनता हो तो वह रोगी कभी नहीं बचेगा यह निश्चय कर लेना।

जैसे नाडीचक्रों से मृत्युज्ञान का विधान ज्योतिष ग्रन्थ-कारों ने किया है वैसे नक्षत्र-तिथि-वार संबन्धी योग से भी रोगी के मरण-जीवन का ज्ञान उन्होंने बताया है, और यह विधान उक्त नाडीचक्रों से भी बहुत सुगम है। जिज्ञासुओं के अवलोकनार्थ हम वह योग नीचे देते हैं—

नक्षत्र-तिथि-वार का मृत्युकारी योग—

भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, अश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, शतभिषक् और पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में से कोई भी एक नक्षत्र हो, चतुर्थी षष्ठी नवमी द्वादशी और चतुर्दशी इन तिथियों में से कोई भी एक तिथि हो और रवि मंगल और शनि इन वारों में से कोई भी एक वार हो तो रोगिमृत्युयोग बनता है। उस समय में जिस को रोगोत्पत्ति हुई हो वह प्रायःकरके मृत्यु पाता है। इस योग में भी चंद्र या तारा की अनुकूलता हो तो कुछ बचने की आशा की जा

सकती है, इस के विपरीत जो चंद्र और तारा प्रतिकूल हों तो रोगी के बचने की आशा छोड देनी चाहिये।

ऊपर के मृत्युयोग के समय यदि चंद्र रोगी की जन्म राशिका वा जन्मराशि से आठवीं राशि का हो, अथवा जन्म लग्न की राशिका हो, अथवा किसी भी राशिका होते हुए भी रोगोत्पत्ति की लग्नकुंडली में वह-२-८-१२ वें भुवन में बैठा हो तो रोगी की अवश्य मृत्यु कहनी चाहिये।

ऊपर त्रिक योग दिया है उस में नक्षत्र ११ लिये गये हैं, परंतु नीचे लिखे ७ नक्षत्र अकेले ही मृत्युदायक कहे गये हैं। यदि इन नक्षत्रों में से किसी एक नक्षत्र में मनुष्य बीमार पडा हो और उस समय चंद्र अथवा तारा प्रतिकूल हो तो रोगी का बचना कठिन हो जाता है। वे सात मृत्युकारक नक्षत्र नीचे मुजब हैं-

आर्द्रा, अश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाति, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद ये सात नक्षत्र रोगी के प्राणघातक हैं। इन में जिस को रोग उत्पन्न होता है वह बडा कष्ट पाता है और चंद्रादि की प्रतिकूलता में प्राणमुक्त ही हो जाता है।

नक्षत्रों से रोगी का कष्टकाल प्रमाण—

कष्ट से रोगनिवृत्ति—

अनुराधा और रेवती इन नक्षत्रों में रोगोत्पत्ति हुई हो

तो बहुत समय तक रोग बना रहता है और बडे कष्ट से रोग की निवृत्ति होती है।

१ मास पीछे रोग निवृत्ति–

मृगशिरा और उत्तराषाढा में रोग उत्पन्न हुआ हो तो १ मास में रोगी नीरोग हो।

२० दिन के बाद रोग निवृत्ति—

यदि रोग मघा नक्षत्र में उत्पन्न हुआ हो तो वीस दिन के बाद मिटे।

१५ दिन के बाद रोग निवृत्ति—

हस्त, विशाखा, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में उत्पन्न हुआ रोग १५ दिने के बाद मिटता है।

११ दिन पीछे रोग निवृत्ति—

भरणी, चित्रा, श्रवण और शततारका इन नक्षत्रों में उत्पन्न हुआ रोग ११ दिन के बाद मिटता है।

९ दिन के बाद रोगनिवृत्ति—

अश्विनी, कृत्तिका और मूल में रोग उत्पन्न हुआ हो तो ९ दिन पीछे मिटे।

७ दिन में रोग निवृत्ति—

रोहिणी, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रों में होने वाला रोग ७ दिन में अच्छा होता है।

विशेष खुलासा

ऊपर जो नक्षत्रों के आधार से कष्ट का कालमान बतलाया है वह चंद्र और तारा अनुकूल प्रतिकूल न होने की दशा में समझना चाहिये ।

यदि चंद्र अथवा तारा अनुकूल हो तो इस काल से कुछ पहले भी रोगनिवृत्ति हो सकती है, इसी तरह चंद्र तारा के प्रतिकूल होने पर लिखे हुए मान से कुछ अधिक दिन तक भी कष्ट भोगना पडता है ।

मुनि कल्याणविजय

इति श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह प्रथम खण्ड समाप्त ।

卐

श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह

द्वितीय खण्ड

चैत्यवंदन १ स्तुति संग्रह २, स्तवन ३ और स्वाध्याय ४।
पद ५ ये द्वितीयखण्डमें, कहे पंच अध्याय ॥१॥

१ चैत्यवंदनसंग्रह

मुनिश्रीकल्याणविजयविरचिता
चैत्यवन्दनचतुर्विंशतिका

श्री ऋषभदेवजिनचैत्यवन्दनम् ।
(वसन्ततिलकाऽपरनामकं उद्धर्षिणी वृत्तम्)

श्रीनाभिराजकुलनन्दनकल्पवृक्षः,
संप्राप्तसर्वसुरपूज्यतमत्वपक्षः ।
उल्लासयन् रविरिवाङ्घ्रिसरोजखण्डं,
दिश्यात्स शर्म वृषभो भवतामखण्डम् ॥१॥

त्रैलोक्यलोकचलनेत्रचकोरचन्द्रं,
वैराग्यरङ्गरसभङ्गभयास्ततन्द्रम् ।
संसारसिंधुतरणाय सुयानपात्रं,
देवं नमामि ऋषभं प्रपवित्रगात्रम् ॥२॥
येन प्रदर्शितमशेषकलाकलापं,
दुर्बोधजातदुरितौघकृतापलापम् ।
स्मृत्वाऽधुनापि जनता निजकार्यजन्मा–
दुद्धर्षिणीतिहरणोऽस्तु स नाभिजन्मा ॥३॥

श्रीअजितनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(तोटक वृत्तम्)

अजितं विदिताखिलवस्तुगणं, सगुणं वरमुक्तिवधूरमणम् ।
रमणीरजनीचरिकावियुतं, प्रणुत प्रणताखिलसिद्धिकृतम् ॥१॥
प्रपतन्तमवित्तिभरे मनुज,–मनुजन्म करन्तमदृष्टरुजम् ।
जनमानसमानसहंससमं, समदृष्टितमं प्रणमाम्यसमम् ॥२॥
विहितामरदानवसेवनकं, कनकोज्ज्वलनिर्मलविग्रहकम् ।
भवतोटक ! तोटय मे दुरितं, समयोदितकर्मरजोमिलितम् ॥३॥

श्रीसंभवजिनचैत्यवन्दनम् ।

(उपजातिवृत्तम्)

श्रीसंभवो निर्दलितारिसंभवो, विसंभवः प्रास्तविकारसंभवः ।
सशंभवश्रीद्धजितारिसंभवः, क्षिणोतु तं योऽस्ति गदोरिसंभवः ।१।
वृथैव मन्ये विदुषां नु भारती, यया न ते प्रक्रियते बुधैः स्तुतिः ।
किं कल्पवृक्षोऽपि फलादिवर्जितः,फलैर्षिभिनो विबुधैर्वितर्जितः ।२।

न स्रग्धरावृत्तमुखैरपि स्वयं, सदैव साद्यविवर्णकः कविः ।
लभेत सत्कीर्तिभरं यथा स्तुवन्, भवन्तमल्पैरुपजातिवृत्तकैः ॥३॥

श्रीअभिनन्दनजिनचैत्यवन्दनम् ।

(रथोद्धता वृत्तम्)

संवराख्यनरराजनन्दनं, देवराजविहिताभिनन्दनम् ।
धर्मदानजनताभिनन्दनं, भक्तितोऽस्मि विनतोऽभिनन्दनम् ॥१॥
भो जना ! विषयलुप्तचेतनै,–र्भोजनादिसुखमिष्यते जनैः ।
तद्वदेव भवतापपीडितै,–र्ज्ञानसाधनमसौ निषेव्यते ॥२॥
सेवनेन सततं जिनेशितु,–र्मोहराजमदनौ प्रणेशतुः ।
सन्नृणां भवतु वोऽपि तद्गता, तद्भटालिरनुगैरथोद्धता ॥३॥

श्रीसुमतिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(द्रुतविलम्बितवृत्तम्)

सुकृतवल्लिविवर्धनवारिद,–प्रभमनल्पगुणस्य तवारिद ! ।
वचनमर्तिहरं भवितारकं, भवतु मेऽघहरं विगतारकम् ॥१॥
सुमतिमेघनरेन्द्रसमुद्भव !, विहितसर्वसुरासुरमुद्भव ! ।
अथ भवेद्धि भवान्मम तारणः, सजति चेद्भगवन्! ममतारणः ।२।
द्रुतविलम्बितसंसरणक्रम,–मविरतं विदधे सगुणक्रम ! ।
यदि रतिर्हि भवेद्भवदाश्रये, ध्रुवगतिं भगवन् ! नु तदाश्रये ।३।

श्रीपद्मप्रभजिनचैत्यवन्दनम् ।

(इन्द्रवज्रावृत्तम्)

पद्मप्रभेऽम्भोजविशालनेत्रे, पद्मप्रभे भो दधतां सुभक्तिम् ।
ये न प्रकृष्टत्वमुचः कदापि, येन प्रनष्टा ननु तेऽपि दोषाः ॥१॥

नाथ ! त्वया चेत्क्रियते जनोऽन्यो, धर्मोपदेशैर्ननु मुक्तरागः।
त्वं रागयुक्तोऽसि कथं नु यद्वा, माहात्म्यमेतत्खलु सर्वविच्चे ।२।
एकाकिनापि प्रहतास्त्वयेद्धा, मोहादयः कर्मबलिष्ठयोधाः ।
स्यादिन्द्रवज्राहतिरेकिकापि, नाशाय मौलेः कुलपर्वतादेः ॥३॥

श्रीसुपार्श्वजिनचैत्यवन्दनम् ।

(प्रहर्षिणीवृत्तम्)

पृथ्वीजं शिवपुरसार्थवाहनाथं, चक्राणं प्रबलमनोभवप्रमाथम् ।
कुर्वाणः स्तुतिलवगोचरे सुनाथं,
कुर्वे स्वं निजगुणलालसासनाथम् ।
देवेन्द्रैः प्रकटितभक्तिरागसारैः, संसारे पुरुषवरं हि मन्यमानैः।
यो नेमे विरतगणैश्च बद्धरागै,-र्योनेर्मेऽविरतगतं स संरुणध्धु ।२।
संप्राप्ते पुरमपुनर्भवाख्यमीशे, निर्नाथा विरहविषार्दिता प्रकामम्।
नो चेत्तेऽमृतसमदर्शनं प्रबिम्बं, नो नूनं भुवि जनता प्रहर्षि-
णीयम् ॥३॥

श्रीचन्द्रप्रभजिनचैत्यवन्दनम् ।

(ललितावृत्तम्)

चन्द्रप्रभं जनिविपूतसज्जनं, चन्द्रप्रभं जनितहृष्टिमञ्जनम् ।
देवाधिदेवविनतं स्वशक्तितो, देवाधिदेवमभिनौमि भक्तितः ।१।
तेजःप्रपन्नरविरूपरोचन, श्वेतःसरोजदलने विरोचनः ।
देयान्मतिं जिनपतिः स तामरं, यस्या जनुर्विभवनिर्जितामरम् ।२।
लोको जहर्ष तव दर्शनागमाज्,-ज्ञानप्रकर्षललिताज्जिनागमात् ।
किंवा द्युजातमहसे न नन्दन,-मीश ! क्षमेशमहसेननन्दन ! ।३।

श्रीसुविधिनाथचैत्यवन्दनम् ।

(सुमुखी वृत्तम्)

कुतुकमिदं ननु पश्यत भो, भुवि जनचित्तसरोजमिदम् ।
सुविधिजिनस्य मुखेन्दुरयं, कुवलयवद् विशदीकुरुते ॥१॥
भवति न यस्य मनो रमते, भवति नरस्य न तस्य रतिः ।
किमु सुरपादपपादभिदि, शमुदयमेति कदाप्यविदि ॥२॥
तव चरणाम्बुजवद्धरति,–र्गणधरवन्मनुजः सुमतिः ।
भुवि जनतासु–मुखी भवति, भवभयतश्च जनानवति ॥३॥

श्रीशीतलजिनचैत्यवन्दनम् ।

(चन्द्रवर्त्मवृत्तम्)

शीतलं जिनपतिं नम जनते !, संगृहाण वरपुण्यमजनतेः ।
एतदर्थममरा अपि सततं, पूजनं विदधते दिवि सततम् ॥१॥
पूजयन्ति जिनदैवतचरणा,–नार्यलोकपथनिर्मितचरणाः ।
प्राणिनो विधिवदादरसहितं, मन्वते च भुवि तत्खलु सहितम् ॥२॥
चन्द्रकान्तसमशीततनुजिन,–चन्द्र ! वर्त्म सुगतेर्ददमलम् ।
मामनल्पमतिरहितमशरणं, नाथ ! रक्ष दुरितादनिशरणम् ॥३॥

श्रीश्रेयांसजिनचैत्यवन्दनम् ।

(शालिनीवृत्तम्)

स्फूर्जत्कान्तिर्ध्वस्तसंसारतान्ति,–
श्चंचच्छीलः प्रोज्झिताऽशस्तलीलः ।
श्रीश्रेयांसः संचितान्तश्शमायः,
कुर्यात्सौख्यं देववन्द्योऽस्तमायः ॥१॥

विद्यावल्लीवर्धने वारिवाहः,
कैवल्याध्वप्रापणे शस्तवाहः ।
स श्रेयांसः श्रेयसां यः सुखानिः,
सश्रेयान् वः संविधत्तां सुखानि ॥२॥
प्रत्यादर्शे श्रेयसो दैवतस्य,
बध्धं चित्तं येन पापं न तस्य ।
प्रत्याघातं संविधत्ते नरस्य,
यस्मात् श्रेयःशालिनी भक्तिरस्य ॥३॥

श्रीवासुपूज्यजिनचैत्यवन्दनम् ।

(स्वागतावृत्तम्)

वासुपूज्य! कृतपुण्यकृतान्त, हेलया विजितरागकृतान्त! ।
योगिनोऽपि विनमन्ति भवन्तं, के त्यजेयुरथवा शुभवन्तम् ॥१॥
या चचाल निजनिश्चलभावात्, योगिनाथततिरप्यविभावात् ।
यद्वशा विजयिनं हरिसूनुं, तं जघान वसुपूज्यसुसूनुः ॥२॥
स्वागताप्रभृतिबद्धनिबन्धै,–स्त्वां स्तुवन्ति कवयः शुचिबन्धैः ।
नो तथापि गुणवर्णनकृत्ये, पारयन्ति तव वर्णनकृत्ये ॥३॥

श्रीविमलजिनचैत्यवन्दनम् ।

(मन्दाक्रान्तावृत्तम्)

श्यामासूनो! तव वरवचःश्रेणिपीयूषधारा,–
तृप्तात्मानः प्रकृतिसुभगा मानवा मानधाराः ।
उत्पद्यन्ते विबुधभुवनेषूत्तमेषूत्तमास्ते,
यत्रानन्दप्रबललहरीप्रोल्लसत्सौख्यमास्ते ॥१॥

हेयाहेयप्रकटनविधौ बद्धलक्ष्यो नितान्तं,
ज्ञानोद्द्योतैर्भुवि भविजनं बोधयन् योनितान्तम्।
निर्मुक्तात्मा शिवसुखरतिः कर्मरोगैरपीडयः,
सर्वज्ञोऽसौ जयतु विमलः सर्वदेवैरपीडयः ॥२॥
संसाराम्भोनिधिनवतरी दुष्टमीनैरभक्ष्याऽ,—
मन्दाक्रान्ता शमरसभरैर्दुर्मतागैरलक्ष्या।
दत्तानन्दा भुवि जययशोविस्फुरद्वैजयन्ती,
सौख्यं मूर्तिः सुभग! भवतो यच्छताद्वै जयन्ती ॥३॥

श्रीअनन्तजिनचैत्यवन्दनम्।

(भुजंगप्रयातवृत्तम्)

अनन्तं जिनं पुण्यवन्तं ससन्तं, क्षिपन्तं कुकर्मौघमर्तिं हरन्तम्।
जनान् रञ्जयन्तं रिपून् सञ्जयन्तं, नमामीश्वरं तं वरं मुक्तिकान्तम् १
सदा सिद्धिसौख्यप्रियध्येयरूपं, जितानङ्गरूपं श्रिया जातरूपम्।
मुनिव्रातभूपं शमापारकूपं, नमस्याम्यनन्तं जिनं योगिरूपम् ।२।
भुजंगप्रयाताऽध्वमुक्तं सुसूक्तं, जराजन्महीन महानन्दलीनम्।
हतप्रीतिनाथं कृताऽघप्रमाथं, श्रयेऽनन्तदेवं सुपुण्याप्यसेवम् ।३।

श्रीधर्मनाथजिनचैत्यवन्दनम्।

(स्रग्विणीवृत्तम्)

धर्मनाथं स्तुत प्रौढबुध्ध्यन्वित,—देवराजार्चितं यस्य पादद्वयम्।
भव्यहंसैः श्रितं पुण्यगन्धाश्रितं, राजते पद्मशोभां परिह्रासयत् ।१।
धर्मनाथ! त्वयोद्दिष्टधर्मे कृत,—वर्तनाः कर्तनायोत्कटद्वेषिणाम्।
स्युर्जनाः सेव्यसे त्वं ततःस्वार्थिभि,-र्देवराजासुरैः केवलस्वार्थिभिः

स्रग्विणी भक्तचेतस्तमश्चूरिका, पूरिका स्वर्गनिःश्रेयसां सम्पदाम्।
मूर्तिरेवंविधा ते यशःसाधिका, दीयतां भद्रमानन्दवासाधिका ३

श्रीशांतिनाथजिनचैत्यवन्दनम्।

(मालिनीवृत्तम्)

शिवपदसुखकारी कर्मविद्वेषिवारी,
मदनमदविभेदी विश्ववस्त्वेकवेदी।
भवजलधिविशोषी पम्पवारप्रमोषी,
दिशतु कुशलमीशः शान्तिनाथो मुनीशः ॥१॥
स्वहृदि धृतभवन्तः प्रास्तरागा भवन्तः,
तव नतिशुभवन्तस्ते नराः पुण्यवन्तः।
अतिशयसुखसारं केवलालोकसारं,
परमपदमुदारं यान्ति भव्या मुदाऽरम् ॥२॥
प्रशमरसविपुष्टा नाशिताशेषदुष्टा,
जगति जनितचित्रा पुण्यपोषैः पवित्रा।
महिमजितसमुद्रा मालिनी यस्य मुद्रा,
स जयति जिनशान्तिर्निर्जितस्वर्णकान्तिः ॥३॥

श्रीकुन्थुनाथजिनचैत्यवन्दनम्।

(कामक्रीडावृत्तम्)

संस्मृत्तारं विध्वस्तारं श्रीदातारं धातारं,
चञ्चच्छोभारम्यं गम्यं योगीशानामीशानाम्।
संसाराम्भोराशिं तीर्णं सौख्याकीर्णं विस्तीर्णं,
वन्दे देवं कृत्यासेवं कुन्थुं सार्वं सर्वज्ञम् ॥१॥

त्यक्तासारं ज्ञानोदारं विश्वोद्धारं विद्यारं,
स्फूर्जद्योगं मुक्तोद्योगं भासा चन्द्रं निस्तन्द्रम्।
संख्यावन्तं पुण्योदन्तं कीर्त्या कान्तं संशान्तं,
वन्दे देवं दत्तासेवं सौधर्मेशे धर्मेशे ॥२॥
आयुर्विद्युद्द्योताभं स्वर्लीलां कीलाभामन्ते,
विज्ञा विज्ञायाशु व्रीडां कामक्रीडां संप्रोज्झ्य ।
दुःखोद्रेकच्छेदच्छेकं भक्त्युद्रेकं बिभ्राणा,
देवाः सेवां यस्याऽकुर्वन् कुन्थुः कुर्यात्कल्याणम् ॥२॥

श्रीअरनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(हरिणीवृत्तम्)

जनितजनतानन्दं कन्दं महोदयवीरुधा,-
मविरतिरतिप्रीतिप्रौढिप्रमुक्तमगुर्बुधाः ।
यकमशरणा लब्धोत्कर्णाः शरण्यमनिन्दितं,
स दिशतु शिवं देवीसूनुर्भवान्तमनिन्दितम् ॥१॥
अतुलजवना बद्धस्पर्द्धाः सुरासुरनायका,
यदभिगमने लब्ध्वोत्कण्ठा भवन्त्यविनायकाः ।
अरजिनपतेः पादद्वन्द्वं सरोजविकस्वरं,
दलयतुतरां पापद्वन्द्वं प्रभाजितभास्वरम् ॥२॥
शुभमतिजनस्वान्तध्वान्तप्रणाशनभास्करं,
विदलितदरद्वेषाऽज्ञानं विरागसमादरम्
हृदयहरणैर्हावैः क्षुब्धेतरं हरिणीदृशां,
हृदयममलं देवीसूनोस्तनोतु सुखं विशाम् ॥३॥

श्रीमल्लिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(वरतनुवृत्तम्)

अयि हितकारक! मल्लिनाथ! ते, चरणयुगं सुरपोऽपि नाथते ।
भवजलतारणशक्तिमत्परं, द्रुतमभितारय मामतःपरम् ॥१॥
अयि नतवत्सल! नापदां पदं, भवति जनो भवतां श्रितः पदम् ।
किमु कृतकल्पमहीरुहार्चनः, समजनि दुर्गतकः कदाचन ॥२॥
भवदभिधाजपबद्धमानसे, ननु भुवि भव्यजने समानसे ।
वर! तनुताद्वरमार्तिनाशनं, पदमितवन्तु विवर्तनाशनम् ॥३॥

श्रीमुनिसुव्रतजिनचैत्यवन्दनम् ।

(कनकप्रभावृत्तम्)

मुनिसुव्रतस्य भववारिधेः परं, तटमागतस्य तरसा विधेःपरम् ।
स्तवनां करोतु जनता शुभाशया, शिवसाधनाप्तिरसिका शुभाशया १
प्रवरप्रतापपरभावभावितं, भविनं करोति परभावभावितम् ।
विमलं यदीयचरणद्वयं स तां, विमलां ददातु परमां रमां सताम् ॥२॥
कनकप्रभाव! भवदागमागम!, सुकृतोदयेन भवदागमागमः ।
समपद्यतात्महितकारणं मम, भवनाशनं भवतु तेन निर्मम! ॥३॥

श्रीनमिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(प्रमाणिकावृत्तम्)

सकर्णकर्णतोषिणी, हिताऽऽहिताधिसंस्कृतिः ।
सदा सदानवैः सुरै,-र्नुता नु तायिनी नृणाम् ॥ १ ॥

नयानयादिराजिता, ऽगमैर्गमैर्गरीयसी ।
प्रमाप्रमाणपूरिता, महर्षिहर्षिणी सदा ॥ २ ॥
दयोदयोज्ज्वला सदा,–ऽक्षयाऽक्षयामिनी विशाम् ।
धियोऽधियोगकारिणीं, भियोऽभियोगनाशिनी ॥ ३ ॥
यदीदृशी सरस्वती, न रोचते सरस्वती ।
जनाय ते सुवर्णिका, जगद्दशासुवर्णिका ॥ ४ ॥
नमे ! नमे प्रमाणिका, नरस्य धीस्तदीदृशः ।
मतं मतं विपर्यय–प्रसाधनं नु धीदृशः ॥ ५ ॥

श्रीनेमिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(पञ्चचामरवृत्तम्)

क्षणं निरीक्ष्य वीक्षणैः प्रतिक्षणं क्षयान्वितं,
क्षणं यदप्रतीक्षितं क्षमेशमण्डलैः क्षितौ ।
असारसंसृदुद्भवातिभीतिभाग्जनो यमा,–
श्रयेद्धिताय भक्तितस्तमाननोऽस्मि नेमिनम् ॥ १ ॥
कुरङ्गरङ्गभङ्गभीरुताभरावभारित !,
निदर्शनीभवन् दयालुताजुषां विशां धुरि ।
विवाहवाहवाहनावरुद्धराज्यहायक !,
भवन्तमीदृशं दयालुमाश्रितोऽस्मि रक्ष माम् ॥ २ ॥
जयाभिलाषिवाजिराजिराजिराजराजिताऽ-
प्रपञ्च ! चामरालिशोभिपार्श्व ! पार्श्वगावन ! ।
यदूज्ज्वलान्वयाम्बुराशिभासनाऽब्जभासुर !,
विधेहि मां भवाम्बुधेस्तटानुयायिनं विभो ! ॥ ३ ॥

श्रीपार्श्वनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(शिखरिणीवृत्तम्)

सदा शुद्धा मूर्तिर्मदनमदमोहादिविकला,
कलाऽपूर्वा वाक्ये सुतनुमदविद्यान्तकरणे ।
रणे रङ्गो नित्यं विततभवभावारिनिधने,
धने मूर्च्छात्यागः वरतरसुवर्णादिनिकरे ॥ १ ॥
करे शस्त्राभावो जनितजनसंतापशमनो,
मनोऽपूर्वध्यानस्थगितनिखिलाऽवद्यविवरम् ।
वरं धर्मस्थैर्यं भुवनविदिता कापि समता,
मता मह्यां मैत्री तनुमदधिवात्सल्यसहिता ॥ २ ॥
हिताधाना एतेऽतुलसुकृतसंभारजनिता,
नितान्तं राजन्ते भवति सुगुणाः पार्श्व ! सुतपः ।
तपस्त्रस्यच्छैत्यं किरणविसराऽस्तान्धतमसं,
मसं मोघीकुर्वन्नवरविरिव प्राक्शिखरिणि ॥ ३ ॥

श्रीमहावीरजिनचैत्यवन्दनम् ।

(शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्)

वीरः सर्वहितः सदोदितसुखं वीरं जनालिः श्रिता,
वीरेण प्रविताडिता रिपुततिर्वीराय धत्ते नतिम् ।
वीराद्विश्वमहोदयो धृतजयो वीरस्य वीर्यं महत्,
वीरे विस्तृततां गता गुणलता वीर ! प्रदेयाः शिवम् ॥ १ ॥
यो मुक्तिश्रियमातनोति सुदृशां यं स्वर्गनाथा नता,
येनाऽभेद्यविभेद्यकर्मनिकरो यस्मै जनः श्लाघते ।

यस्माद्दुर्गुणसंततिर्गतवती यस्य प्रपूतं वचो,
यस्मिन् पङ्कजकोमले जनमनो भृङ्गोपमं लीयते ॥ २ ॥
स श्रीवीरविभुर्भवत्वसुखहृत्तं दैवतं संश्रये,
तेनाऽस्मि प्रभुणा सनाथगणनस्तस्मै नतिं संदधे ।
तस्मान्नास्ति परः प्रभादिनकरस्तस्याङ्घ्रियुग्मं स्तुवे,
तस्मिन्नेव च कर्मदन्तिदलने शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ३ ॥
अङ्गर्षिनवभूवर्षे, पादलिप्तपुरे वरे ।
कल्याणविजयेनेयं, चतुर्विंशतिका कृता ॥ १ ॥

इति मुनिवर्यश्रीकल्याणविजयविरचिता चैत्यवन्दनचतुर्विंशतिका समाप्ता ॥

---

२ स्तुति-संग्रहः

मुनिराजश्रीकल्याणविजयादिविरचितः ।

श्रीआदिजिनस्तुतिः

(शौरसेन्याम्)

द्रुतविलम्बितवृत्तम्

पुरवपुण्णभरादु समज्जिय, नरभवं विभवंचिदमंदिरं ।
निजहिदं जदि इच्छध माणवा, नमध नाभिसुदं जिणनायगं ॥ १ ॥

---

१ छाया—पूर्वपुण्यभरात् समर्ज्य, नरभवं विभवाश्चितमन्दिरम् ।
निजहितं यदि इच्छथ मानवा !, नमत नाभिसुतं जिननायकम् ॥

दलिद्दुक्खभरा समदादरा, विरदिधम्मपसाहणतप्परा ।
जिणवरा जणपंकजभक्खरा, सुगदिदा मम होन्तु सदक्खरा ।२।
गमगहीरतलो नयसोहिदो, विविहभंगवियारविराइदो ।
चदुरबुद्धिविगाहिदमज्झगो, सुमदिदो मम भोदु जिणागमो ।३।
कडुय घोरउवद्दवणासणं, जणमणं करिदूण विकस्सरं ।
कुणदि जो जिणणाधमदुन्नदिं, हरदु सो दुरिदं मम गोमुहो ॥४॥

श्री शान्तिनाथजिनस्तुतिः

(मागध्याम्)

मालिनीवृत्तम्

[1]दुलिदयणिदकस्टं दुस्तिदिं दुक्खवेय्यं,
कुणदि गलिदसत्तं ये नलाणं वलाणं ।
यणिदभुवणशंती कुस्टिदाशेशभंती,
दिशदु यणदिदं शे शंतिनाधे अणाधे ॥१॥

दलितदुःखभराः समतादरा, विरतिधर्मप्रसाधनतत्पराः ॥
जिनवरा जनपंकजभास्कराः, सुमतिदा मम भवन्तु सदक्षराः ॥
गमगभीरतलो नयशोभितो, विविधभङ्गविचारविराजितः ।
चतुरबुद्धिविगाहितमध्यकः, सुमतिदो मम भवतु जिनागमः ॥
कृत्वा घोरोपवद्रवनाशनं, जनमनः कृत्वा विकस्वरम् ।
करोति यो जिननाथमतोन्नतिं, हरतु स दुरितं मम गोमुखः ॥

१ छाया—दुरितजनितकष्टं दुःस्थितिं दुःखवेद्यां,
करोति गलितसत्त्वां यो नराणां वराणाम् ।
जनितभुवनशान्तिः कुट्टिताशेषभ्रान्तिः,
दिशतु जनहितं स शान्तिनाथोऽनाथः ॥

शददकमलवाशुव्विग्गचेदा लमा शा,
अवलविमलवाशाभावमाबोहमाणी ।
चलणकमलमालं येसिमाणन्दशालं,
शलणमधिगदा ते दिन्तु मुक्खं यिणिंदा ॥२॥
पलिमिदनियतेया जाहणंतं पयाशं,
पलिकलिय तदस्तं पस्तिदा शोमशूला ।
अणहिगदतदस्ता अन्तलिऽके भमंति,
दिशदु विमलविय्यं आगमो शे यिणाणं ॥३॥
कदयिणमदशाले शंतिभत्तेगपाले,
गयवलगदिशाले धस्तविग्घप्पयाले ।
यिणचलणशलोये भिंगभावं भयंते,
हलदु विमलकंती पावगं बंभसंती ॥४॥

---

१ छाया—सततकमलवासोद्विग्नचेता रमा सा,
अपरविमलवासाभावमाबोधमाना ।
चरणकमलमालां येषामानन्दशालां,
शरणमधिगता ते ददतां मोक्षं जिनेन्द्राः ॥
परिमितनिजतेजसौ यस्याऽनन्तं प्रकाशं,
परिकलय्य तदर्थं प्रस्थितौ सोमसूरौ ।
अनधिगततदर्थौ अन्तरिक्षे भ्रमतः
दिशतु विमलविद्यामागमः स जिनानाम् ॥
कृतजिनमतसारः शान्तिभक्तैकपालः,

श्री नेमिनाथजिनस्तुतिः

(पैशाच्याम्)

उपजातिवृत्तम्

[1] तूरातु तत्थून पसुप्पकारं, तयालतापोसनबद्धचित्तो।
गेन्हीअ यो तिक्खमभग्गशीलो, सुखाय सो नेमिजिनो जनानं,
अञ्ञानअंधीकतलोचनानं, विवेकहीनान सता जनानं।
भवन्नवे ये वरयानतुल्ला, छितंतु ते तुक्खभरं जिनिंता॥२॥
संसारगेहे वरतीपकाभो, महेसिनं झत्ति वितिण्णलाभो।
अपुव्वतत्तोघविसालतेहो, जिनागमो सव्वहितो जयेज्ज॥३॥
नेमीसझानातु सुपत्ततेव-भवा भवारन्नविलंघनत्थं।
जिनिंततेवं परिसेवमानी, विवेकिनं होतु सुखाय अंबा॥४॥

गजवरगतिसारो ध्वस्तविघ्नप्रचारः।
जिनचरणसरोजे भृंगभावं भजन्,
हरतु विमलकान्तिः पापकं ब्रह्मशान्तिः॥

१ छाया-दूरात् दृष्ट्वा पशुप्रकारं, दयालतापोषणबद्धचित्तः।
अग्रहीत् यो दीक्षामभग्नशीलः, सुखाय स नेमिजिनो जनानाम्॥
अज्ञानान्धीकृतलोचनानां, विवेकहीनानां सदा जनानाम्।
भवार्णवे ये वरयानतुल्याः, छिन्दन्तु ते दुःखभरं जिनेन्द्राः॥
संसारगेहे वरदीपकाभो, महर्षीणां झगिति वितीर्णलाभः।
अपूर्वतत्त्वौघविशालदेहो, जिनागमः सर्वहितो जयतात्॥
नेमीशध्यानात् सुप्राप्तदेवभवा, भवारण्यविलंघनार्थम्।
जिनेन्द्रदेवं परिसेवमाना, विवेकिनां भवतु सुखाय अंबा॥

श्री पार्श्वनाथजिनस्तुतिः

(चूलिकापैशाच्याम्)

वसन्ततिलकावृत्तम्

नाकाथिराचथरनिंतविसालचित्त-
फूमिप्परूठवरफत्तिलतानिकुंचे ।
काहीअ नो चलनपत्थमनोमरालो,
यस्साफिलासमपि सो विचयाय पासो ॥१॥
तारित्ततावपरितद्वसरीरलोकं,
संपूरितासखनवुट्ठिविफिन्नतापं ।
संपातितून समथम्मसमातरा ये,
तिक्खं फचन्ति सिवता मम ते चिनिंता ॥२॥
सुत्थोतनस्स तनयस्स मतं न रम्मं,
एकंतनासविसयो न हु वत्थु लोके ।

---

१ छाया—नागाधिराजधरणेन्द्रविशालचित्त-
भूमिप्ररूढवरभक्तिलतानिकुञ्जे ।
अकार्षीत् नो चरणबद्धमनोमरालो,
यस्याभिलाषमपि स विजयाय पार्श्वः ॥
दारिद्र्यदावपरिदग्धशरीरलोकं,
संपूरिताशघनवृष्टिविभिन्नतापं, ।
संपाद्य शमधर्मसमादरा ये,
दीक्षां भजन्ति शिवदा मम ते जिनेन्द्राः ॥
शुद्धोदनस्य तनयस्य मतं न रम्यं,
एकान्तनाशविषयो न खलु वस्तु लोके ।

एकंतथुव्वविसयोपि न साथुवातो,
तम्हा नमामि सियवातमतं चिनानं ॥३॥
हुंकारनातपरिफापिततुट्ठतेवो,
हत्थत्थसप्पपरितासितविक्खमूसो।
पासप्पसाततरुलत्थसतानिवासो,
सुक्खाय भोतु सततं मम पासयक्खो ॥४॥

श्रीवर्धमानजिनस्तुतिः
(अपभ्रंशभाषायाम्)
पञ्चचामरवृत्तम्

कसोवले[1] अभव्वसंगमस्सु भाविसामले,
सुपत्तु जस्सु धीरदासुवण्णु जाउ उज्जलु।
सुरिंदचक्कवागवासराहिणाधु सो जिणु,
सभत्तिहं मणुस्सहं सुहाय णादनंदणु ॥१॥

एकान्तध्रौव्यविषयोऽपि न साधुवादः,
तस्मान्नमामि स्याद्वादमतं जिनानाम् ॥
हुंकारनादपरिभापितदुष्टदेवो,
हस्तस्थसर्पपरित्रासितविघ्नमूषकः ।
पार्श्वप्रसादतरुलब्धसदानिवासः,
सौख्याय भवतु सततं मम पार्श्वयक्षः ॥

१ छाया— कषोपले अभव्यसंगमकस्य भाविश्यामले,
सुप्राप्तं यस्य धीरता सुवर्णं जातमुज्ज्वलम् ।
सुरेन्द्रचक्रवाकवासराधिनाथः स जिनः,
सभक्तिकानां मनुष्याणां सुखाय ज्ञातनन्दनः ॥

सकम्मरोगहिं पपीलिया पवड्ढवेयणा,
मलीणवासणागुला अपत्थसेवणायरा ।
कहं नु हुंत माणवा न हुंत भूतले जइ,
परोवगारलद्धजम्मधम्मविज्जगा जिणा ॥२॥
विमुत्तिमग्गदंसणग्गबारु विग्घवज्जिउ,
दुरन्तदुग्गदिप्पवेसरोहलोहअग्गलु ।
जयप्पयासु सामि जोगखेमकारगुत्तमु,
करेउ नट्ठदुक्खजालु सो मइं जिणागमु ॥३॥
सुवण्णवण्णदेहकंतिभारभासिअंबरा,
पकामकामियत्थसत्थदाणि अप्पतारणी ।
जिणस्सु वीरहो सुभत्तिसत्तितत्तिवज्जिआ,
सिरिद्ध सिद्धदेवि देउ भव्वहं सुमंगलु ॥४॥

स्वकर्मरोगैः प्रपीडिताः प्रवृद्धवेदनाः,
मलिनवासनाकुला अपथ्यसेवनादराः ।
कथं न्वभविष्यन् मानवा नाऽभविष्यन् भूतले यदि,
परोपकारलब्धजन्मधर्मवैद्यका जिनाः ॥
विमुक्तिमार्गदर्शनाग्रद्वारं विघ्नवर्जितं,
दुरन्तदुर्गतिप्रवेशरोधलोहार्गला ।
जगत्प्रकाशः स्वामी योगक्षेमकारकोत्तमः,
करोतु नष्टदुःखजालं स मां जिनागमः ॥
सुवर्णवर्णदेहकान्तिभारभासिताम्बरा,
प्रकामकामितार्थसार्थदाने अप्रतारणी ।
जिनस्य वीरस्य सुभक्तिसक्तितप्तिवर्जिता,
श्रीद्धा सिद्धादेवी ददातु भव्यानां सुमंगलम् ॥

श्रीदीपमालास्तुतिः

(शिखरिणीवृत्तम्)

गतो भावोद्द्योतः परमविमलज्योतिरधुना,
ततो द्रव्योद्द्योतं भुवि वितनुमस्तस्य विरहे ।
इति प्राज्ञैरष्टादशभिरजनीजानिभिरहो,
कृता दीपालीयं जयति जयदा वीरजपतः ॥१॥
न मे कामैरर्थैः परमसुलभैरर्थनिकरैः,
कृतं राज्येनाऽलं सृतममरलोकर्धिविभवैः ।
अनाप्तां संसारभ्रमणमतिभिर्मानवगणै,-
र्लभेयं दुष्प्रापां जिनपपदपद्मेषु वसतिम् ॥२॥
श्रुते श्रोत्रानन्दः परममनुभूतेऽघविलयो,
मनःशुद्धिर्ध्याते विमलवचनो यत्र पठिते ।
भवेत्सेवायोग्यो विहितवरसेवे च मनुज,-
स्तमानन्दोद्बोधं जिनपतिकृतान्तं प्रणमत ॥३॥
धृतश्रद्धा संघे विहितविनया वीरविभवे,
भवे सौख्यं दात्री जिनवरवचोबद्धमनसाम् ।
परा सम्यग्दृष्टिः सुमतिजनसंतापशमनी,
सदा सिद्धादेवी भवतु भविनां दुःखदमनी ॥४॥

श्री वीरजिनस्तुतिः

(आर्या छंदः)

सो जयउ जगाणंदो, वीरजिणो सयलगुणगणालीढो ।

जस्स विलीणा सव्वे, रागद्दोसादओ दोसा ॥ १ ॥
अन्नाणतमविणासण,-रविकप्पे कप्परुक्खतुल्लकरे ।
अज्झप्पधम्मकुसले, जिणचन्दे वंदिमो सिरसा ॥ २ ॥
तिहुअणगिहगयवत्थु,-प्पयासपवणो कुमारुआगम्मो ।
एगंतसलहदाहो, जिणागमो दीवओ जयउ ॥ ३ ॥
सिरिवीरभत्तिभावा, गयपावा दलियविग्घसब्भावा ।
कल्लाणमग्गलाभं, जणस्स सिद्धाइआ कुणउ ॥ ४ ॥

इति मुनिवर्यश्रीकल्याणविजयविरचितः स्तुतिसंग्रहः समाप्तः ।

विविधस्तुतियाँ

श्री ऋषभदेव जिन स्तुति

प्रह उठी वंदुं ऋषभदेव गुणवंत,
प्रभु बेठा सोहे समवसरण भगवंत ।
त्रण छत्र बिराजे चामर ढाले इंद,
जिनना गुण गावे सुरनरनारीना वृंद ॥ १ ॥
बार परखदा बेसे इंद्र इंद्राणी राय,
नव कमल रचे सुर जिहां ठविया प्रभु पाय ।
देव दुंदुभि वाजे कुसुम वृष्टि बहु हुंत,
एवा जिन चोवीसे पूजो भवि एक चित्त ॥ २ ॥
जिण जोजन भूमि वाणीनो विस्तार,

प्रभु अरथ प्रकाशे रचना गणधर सार ।
सो आगम सुणतां छेदीजे गति चार,
जिन वचन वखाणी लहिये भवनो पार ॥ ३ ॥
यक्ष गोमुख गिरुओ जिननी भक्ति करेव,
तिहां देवी चकेसरी विघन कोड हरेव ।
श्री तपगच्छ नायक विजयसेनसूरिराय,
तस केरो श्रावक ऋषभदास गुण गाय ॥ ४ ॥

श्री शांतिनाथ जिन स्तुति

शांति जिनेसर समरिये जेनी अचिरा माय,
विश्वसेन कुल उपन्या मृगलंछन पाय ।
गजपुर नयरीना धणी कंचन वरणी छे काय,
धनुष चालीसनी देहडी लाख वरसनुं आय ॥ १ ॥
शांति जिनेसर सोलमा चक्री पंचम जाणुं,
कुंथुनाथ चक्री छट्ठा अरनाथ वखाणुं ।
ए त्रणे चक्री सही देखी आणंदुं,
संजम लइ मुगते गया नित्य उठीने वंदुं ॥ २ ॥
शांति जिनेसर केवली बेसी धर्म प्रकाशे,
दान शीयल तप भावना नर सोय अभ्यासे ।
एह वचन जिनजी तणा जेणे हियडे धरिया,
सुणतां समकित निर्मला निश्चय केवल वरिया ॥ ३ ॥
समेत शिखर गिरि उपरे जेणे अणसण कीधां,

काउस्सग्ग ध्यानमुद्रा रही जेणे मोक्ष ज सीध्या ।
जक्ष गरुड समरुं सदा देवी निर्वाणी,
भविक जीव तमे सांभलो ऋषभदासनी वाणी ॥ ४ ॥

गिरनार नेमिजिनस्तुति

सुर असुर वंदित पायपंकज मयणमल्ल अक्षोभितं,
घन सघन श्यामशरीरसुंदर शंख लंछन शोभितम् ।
शिवादेवि नंदन त्रिजगवंदन भविक कमल दिनेश्वरं,
गिरनार गिरिवर शिखर वंदूं नेमिनाथ जिनेश्वरम् ॥ १ ॥

अष्टापदे श्री आदिजिनवर वीर पावा पुरिवरं,
चंपापुरी श्रीवासुपूज्यजी नेमि रेवयगिरिवरम् ।
सम्मेत शिखरे वीस जिनवर मुक्ति पहोता मुनिवरं,
चोवीस जिनवर तेह वंदूं सयल संघ सुहंकरम् ॥ २ ॥

अग्यार अंग उपांग बारे दश पयन्ना जाणिये,
छ छेद ग्रंथ पसत्थअत्था चार मूल वखाणिये ।
अनुयोगद्वार उदार नंदीसूत्र जिनमत गाइये,
वृत्ति चूरणि सूत्र आगम पंच चालीश ध्याइये ॥ ३ ॥

बिहुं दिशि बालक दोय जेहने सदा भवियण सुखकरं,
दुख हरे अंबालुंबि सुंदर दुरिय दोहग अपहरं ।
गिरनारमंडण नेमिजिनवर चरणपंकज भयहरं,
श्रीसंघ मंगल करे अंबादेवी देवे शुभ वरम् ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्वनाथजिनस्तुति

पास जिणंदा वामानंदा जब गरभे फली,
सुपना देखे अर्थ विशेषे कहे मघवा मली ।
जिनवर जाया सुर हुलराया हुआ रमणीप्रिये,
नेमिराजी चित्त विराजी विलोकित व्रत लिये ॥ १ ॥
वीर एकाकी चार हजारे दीक्षा धुर जिनपति,
पास ने मल्लि त्रयसत साथे बीजा सहसे व्रती ।
षट्शत साथे संजम धरता वासुपूज्य जगधणी,
अनुपम लीला ज्ञानरसीला देजो मुजने घणी ॥ २ ॥
जिनमुख दीठी वाणी मीठी सुरतरु वेलडी,
द्राख विहासे गइ वनवासे पीले रस सेलडी ।
साकर सेती तरणा लेती मुखे पशु चावती,
अमृत मीठुं स्वर्गे दीठुं सुरवधू गावती ॥ ३ ॥
गजमुखदक्षो वामन जक्षो मस्तके फणावली,
चार ते बांही कच्छपवाही काया जस शामली ।
चउकर प्रौढा नागारूढा देवी पद्मावती,
सोवन कांति प्रभुगुण गाती वीर घरे आवती ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्वनाथजिनस्तुति

द्रें द्रें कि धप मप धु धु मि धों धों ध्रसकि धर धप धोरवं,
दों दों कि दों दों द्रागड्दि द्रागड्दिकि द्रमकि द्रण रण द्रेणवम् ।
झझि झेंकि झें झें झणण रण रण निजकि निज जनरंजनं,

सुरशैलशिखरे भवतु सुखदं पार्श्वजिनपतिमज्जनम् ॥१॥
कट रेंगिनि थोंगिनि कटिति गिगड्दां धु धु कि धुट नट पाटवं,
गुण गुणण गुण गण रणकि णें णें गुणण गुण गण गौरवम्।
झझि झें कि झें झें झणण रण रण निजकि निज जन सज्जनाः,
कलयंति कमला कलित कलिमलमकलमीशमहे जनाः ॥२॥
ठूकि ठूंकि ठूं ठूं ठहिं ठहिंति ठहिं पट्टा ताड्यते,
तल लोंकि लों लों त्रेंखि त्रेंखिनि डेंखि डेंखिनि वाद्यते।
ॐ ॐ कि ॐॐ कथुंगि कथुंगिनि धोंगि धोंगिनि कलरवे,
जिनमतमनंतं महिमतनुता नमत सुरनतमुत्सवे ॥३॥
खुं दांखि खुंदां खुखुड्दि खुंदां खुखुड्दि दों दों अंबरे,
चाचपट चच पट रणकि णें णें डणण डें डें डंबरे।
तिहां सरगमपधुनि—निधपमगरस ससससस सुर सेवता,
जिननाटयरंगे कुशलमनिशं दिशतु शासन देवता ॥४॥

अध्यात्मगर्भित महावीरजिनस्तुति

उठि सवेरे सामायिक लीधुं पिण बारणुं नवि दीधुंजी,
कालो कूतरो घरमांहे पेठो घी सघळुं तेणे पीधुंजी।
उठो ने वहूअर आलस मूकी ए घर आप संभालोजी,
निजपति ने कहो बीरजिन पूजी समकित ने अजुआलोजी ॥१॥
बले बिलाडे झडप झंपावी उत्रेवडि सवि फोडीजी,
चंचल छैयां वार्यां न रहे त्राग भागी माल त्रोडीजी।
तेह विणा रेंटियो नवि चाले मौनभलुं कोने कहियेजी

ऋषभादिक चउवीस तीर्थंकर जपिये तो सुख लहियेजी ।।२।।
घर वासीदुं करोने वहुअर टालो ओजीसालुंजी,
चोरटो एक करे छे हेरो ओरडे द्योने तालुंजी ।
लबकया प्राहुणा चार आवे छे ते ऊभा नवि राखोजी;
शिवपद सुख अनंतु लहिये जो जिन वाणी चाखोजी ।।३।।
घरनो खूणो कोल खणे छे वहु तुमे मनमां लावोजी,
पोढे पलंगे प्रीतम पोढयो प्रेम धरीने जगावोजी ।
भावप्रभ सूरि कहे नहीं ए कथलो अध्यात्तम उपयोगीजी,
सिद्धायिका देवी सानिध्ये थइये ते शिवपद भोगीजी ।।४।।

सीमंधरजिनस्तुति

सीमंधर जिन वर आतमना आधार,
प्रभु त्रिगडे बेठा भाखे अर्थ विचार ।
कइ भव्यजनोने तार्या दीन दयाल,
सौभाग्यविजयनी दूर करो जंजाल ।।१।।

श्रीसिद्धाचलस्तुति

शत्रुंजय गिरि तीरथ मोटुं आदीश्वर जिहां सोहेजी,
देहरां उंचां गगने अडियां योगीश्वर मन मोहेजी ।
भव जल तरवा मानुं प्रवहण भाख्युं ग्रन्थ मझाराजी,
प्रात उठीने वंदन करीये सौभाग्यविजय सुख साराजी ।।१।।

सीमंधरजिन स्तुति

श्रीसीमंधर मुजने वाला आज भलुं सुविहाणुंजी,

त्रिगडे तेजे तपता जिनवर मुज तूठ्या हुं जाणुंजी ।
केवल कमला केलि करंतां कुलमंडण कुलदीवोजी,
लाख चोराशी पूरव आयु रुकमिणी वर घणुं जीवोजी ॥१॥
संप्रति काले वीश तीर्थंकर उदया अभिनव चंदाजी,
केइ केवली केइ बालक परण्या केइ महीपति सुखकंदाजी ।
श्रीसीमंधर आदि अनोपम महाविदेहे जिणंदाजी,
सुर नर कोडाकोडी मिली तिहां जोवे मुख अरविंदाजी ॥२॥
श्रीसीमंधर त्रिगडो जोवा हु अलजायो वाणी जी,
आडा डुंगर आवी न शकुं वाट विषम अरु पाणी जी ।
इण क्षेत्रे रही पाय हुं लागुं सूत्र अर्थ मन आणीजी,
अमृत रसथी अधिक वखाणी जीवदया पटराणीजी ॥३॥
पंचांगुली में प्रत्यक्ष दीठी जाणुं हुं जगमाताजी,
पहेरण चरणा चोली-पटोली अधर अनोपम राताजी ।
स्वर्गभुवन सिंहासण बेठी तूंहीज देवी विख्याताजी,
सीमंधरशासनरखवाली शांतिकुशलसुखदाताजी ॥४॥

बीज की स्तुति

महीमंडणं पुण्णसोवण्णदेहं,
जणाणंदणं केवलन्नाणगेहं ।
महानंदलच्छी–बहुबुद्धिरायं,
सुसेवामि सीमंधरं तित्थरायं ॥१॥
पुरा तारगा जे य जीवाण जाया,

भविस्संति जे सव्वभव्वाण ताया।
तहा संपयं जे जिणा वट्टमाणा,
सुहं दिंतु मे ते तिलोयप्पहाणा ॥२॥
दुरुत्तारसंसारकुव्वारपोयं,
कलंकावलीपंकपक्खालतोयं।
मणो वंछियत्थेसु मंदारकप्पं,
जिणिंदागमं वंदिमो सुमहप्पं ॥३॥
विकोसे जिणिंदाणणंभोजलीणा,
कलारूव-लावण्ण-सोहग्गपीणा।
वहंतस्स चित्तंमि निच्चंपि झाणं,
सिरी भारई देहि मे सुद्धनाणं ॥४॥

बीज की स्तुति

जंबूद्वीपे अहोनिश दीपें दोय सूर्य दोय चंदा जी,
तास विमाने श्रीऋषभादिक शाश्वत नाम जिणंदा जी।
तेह भणी उगते शशी निरखी प्रणमे भविजनवृंदा जी,
बीज आरोपो धर्मनुं बीजे पूजी शांति जिणंदा जी ॥१॥
द्रव्य भाव दोय भेदे पूजो चोवीसे जिनचंदा जी,
बंधन दोय दूर करीने पाम्या परमाणंदा जी।
दुष्ट ध्यान दोय मत्त मतंगज भेदन मत्तमयंदा जी,
बीजतणे दिन जें आराधे ते जगमां चिरनंदा जी ॥२॥
द्विविध धर्म जिनराज प्रकाशे समवसरण मंडाणे जी,

निश्चय ने व्यवहार बेहुसुं आगम मधुरी वाणे जी ।
नरक तिर्यंच गति दोय न होवे बीजने जे आराधे जी,
द्विविध दया त्रस थावर केरी करतां शिवसुख साधे जी ।।३।।
बीज चंद परे भूषण भूषित दीपे निलवट चंदा जी,
गरुड यक्ष नारी सुखकारी निर्वाणी सुखकंदा जी ।
बीज तणो तप करतां भविने समकित सानिध्यकारी जी,
धीरविमल शिष्य कहे नय संघना विघ्न निवारी जी ।।४।।

पंचमी की स्तुति

पांचमने दिन चोसठ इंद्रे नेमिजिन महोत्सव कीधो जी,
रूपे रंभा राजीमतीने छंडी चारित्र लीधो जी ।
अंजनरत्नसम काया दीपे शंख लंछन सुप्रसिद्ध जी,
केवल पामी मुक्ति पहोता सघला कारज सिद्ध जी ।।१।।
आबु अष्टाद ने तारंगा शत्रुंजय गिरि सोहे जी,
राणकपुरने पार्श्व शंखेश्वर गिरनारे मन मोहे जी ।
सम्मेतशिखर ने वली वैभारगिरि गोडी थंभण वंदो जी,
पंचमीने दिन पूजा करतां अशुभ कर्म निकंदो जी ।।२।।
नेमि जिनेश्वर त्रिगडे बेठा पंचमी महिमा बोले जी,
बीजा तप जप छे अति बहोला नहीं कोइ पंचमी तोले जी ।
पाटी पोथी ठवणी कवली नोकरवाली सारी जी,
पंचमीनुं उजमणुं करतां लहिये शिववधू प्यारी जी ।।३।।

शासनदेवी सानिध्यकारी आराधे अति दीपे जी,
काने कुंडल सुवर्ण चूडी रूपे रमझम दीपे जी ।
अंबिका देवी विघ्न हरेवी शासन सानिध्यकारी जी,
पंडित हेतविजय जयकारी जिन जंपे जयकारी जी ।।४।।

मौन एकादशी की स्तुति

मृगशिर शुद एकादशी ए भाखी नेमिजिणंद तो,
मुक्ति वधूनो मांडवो ए आदरे कृष्ण नरिंद तो ।
वर्ष अग्यार आराधिये ए एकादश वली मास तो,
जावजीव लगि जे करे ए पामे शिवपुर वास तो ।। १ ।।
कल्याणक कह्या एह तिथि ए नेउजिनना जाण तो,
त्रीश चोविसी तिहां थकी ए पंच पंच गिणती आण तो ।
भरतादिक दश क्षेत्रना ए जिनवर सघला जाण तो,
त्रणे काल मिली ध्यावतां ए पामे पद कल्याण तो ।। २।।
अंग अग्यारे जे भणे ए पडिमा तप अग्यार तो,
सुव्रत शेठ तणी परे ए सुर पदवी लहे सार तो ।
अग्यार अग्यार प्रकारनी ए पामे परिगल ऋद्ध तो,
आगमने आराधतां ए भवियण पामे सिद्ध तो ।। ३ ।।
नेमिनाथ जिनवर कहे ए एकादशी अधिकार तो,
पूछे कृष्ण नरेशरु ए निशुणे परषदा बार तो ।
शुणी अनुमोदे आदरे ए माधव परे जग सार तो,
शासन देवी सुखकरु ए कीर्तिचंद्र हितकार तो ।। ४ ।।

रोहिणी तप की स्तुति

रोहिणी तप रंगे करो प्राणी, सकल सुमंग-
ल कारण जाणी, लाभ लहो गुणखाणी।
अजित जिणंद नो जन्म ते जाणी, आवे
इंद्र अने इंद्राणी, भाव अधिक मन आणी ॥ १ ॥
अतीत अनागत ने वर्तमान, च्यवन जन्म
दीक्षा गुणखाण, केवल मुक्ति कल्याण।
दश क्षेत्रे दाख्या जिन भाण, नक्षत्र रोहि-
णी छे गुणखाण, आदरो भवि शुभजाण ॥ २ ॥
पद्मप्रभुनी एहज वाणी, सुगंधकुमारे
साची जाणी, पर्षदा हर्ष भराणी।
तप करी काया निर्मल कीधी, अजरामर
पदवी जेणे लीधी, शिवरमणी वश कीधी ॥ ३ ॥
शासन देवी सोले वखाण, जग उद्योत करे
जिण भाण, आपे बुद्धि विन्नाण।
रोहिणी राणी ए तप कीधो, भव त्रीजे सवि
कारज सीधो, कीर्तिचन्द्र जस लीधो ॥ ४ ॥

श्री पर्युषणापर्व की स्तुति

सत्तर भेदी जिन पूजा रचीने स्नात्र महोच्छव कीजे जी,
ढोल ददामा भेरी नफेरी झल्लरी नाद सुणीजे जी।

वीरजिन आगल भावना भावी मानवभव फल लीजे जी,
पर्वपजूसण पूरव पुण्ये आव्या एम जाणीजे जी ॥ १ ॥
मास पास वली दशम दुवालस चत्तारि अट्ठ कीजे जी,
उपर वली दश दोय करीने जिन चोवीस पूजीजे जी।
वडा कल्पनो छठ करीने वीर चरित्र सुणीजे जी,
पडवे ने दिन जन्म महोच्छव धवल मंगल वरतीजे जी ॥२॥
आठ दिवस लगे अमर पलावी अट्ठमनो तप कीजे जी,
नागकेतुनी परे केवल लहिये जो शुभ भावे रहिये जी।
तेलाधर दिन त्रण कल्याणक गणधर वाद वदीजे जी,
पास नेमीसर अंतर त्रीजे ऋषभ चरित्र सुणीजे जी ॥३॥
बारसें सूत्र ने सामाचारी संवच्छरी पडिकमिये जी,
चैत्य प्रवाडी विधिसुं कीजे सकल जन्तुने खमीजे जी।
पारणाने दिन साहमीवच्छल कीजे अधिक वडाई जी,
मानविजय कहे सकल मनोरथ पूरे देवी सिद्धाई जी ॥४॥

इति स्तुति–संग्रहः।

३ अथ स्तवनसंग्रह

श्री ऋषभदेवजिनस्तवन

बालपणे आपण ससनेही, रमता नव नव वेशे। आज तमे पाम्या प्रभुताई, अमे तो संसारनिवेशे हो प्रभुजी ओलंभडे मत खीजो ॥१॥

जो तुम ध्यातां शिवसुख लहीये, तो तुमने केइ ध्यावे। पण भवस्थिति परिपाक थया विण, कोइ न मुक्ति जावे हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥२॥

सिद्ध निवास लहे भवसिद्धि, तेमां शो पाड तुमारो। तो उपगार तुमारो वहिये, अभवसिद्धिने तारो हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥३॥

ज्ञानरतन पामी एकांते, थइ बेठा मेवासी। ते मांहेलो एक अंश जो आपो, ते वाते शाबासी हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥४॥

अक्षय पद देतां भविजनने, संकीर्णता नवि थाय। शिव-पद देवा जो समरथ छो, तो जश लेतां शुं जाय हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥५॥

सेवागुण रंज्या भविजनने, जो तुमे करो वडभागी। तो तुमे स्वामी केम कहेवाओ, निर्मम ने नीरागी हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥६॥

नाभिनंदन जगवंदन प्यारो, जगगुरु जग जयकारी। रूपविबुधनो मोहन पभणे, वृषभलंछन बलिहारी हो प्रभुजी ओलंभडे० ॥ ७ ॥

श्रीआदिजिनस्तवन

आदि जिणंद प्रभु अरजी लीजे, शिवरमणी सुख दीजे रे। शुभ नजरे करी साहिब मुजने, दरिसन वेल्हा दीजे रे ॥ साहिब प्यारो रे, साहिब प्यारो मुजने तारो, भवोदधिपार उतारो रे। साहिब प्यारो रे॥ आंकणी ॥१॥

पांचे आठे मुजने पीडयो, नर्क निगोद नचायो रे। काल अनादि कुमति संगे, जन्म मरण दुख पायो रे। साहिब० ॥२॥

मोहराजानो मन्त्री मलियो सोल संगाते भलीयो रे। तृष्णा तरुणी आणी मेली, काम कीचडमें कलीयोरे॥साहिब॥३॥

तेरे बावीस तेतीस टाली, सत्तावन छटकायारे। दश चोरासी दूर करीने, नाभिनंदन ध्यायारे ॥ साहिब० ॥४॥

पावटापुरमें ऋषभ जिनेश्वर, भेट्या मन शुद्ध भावे रे। आदिजिननुं समरण करतां, कीर्तिचंद्र सुख पावे रे ॥ साहिब० ॥५॥

श्री आदिजिनस्तवन

प्रथम जिनेश्वर प्रणमिये, जास सुगंधी रे काय।
कल्पवृक्ष परे तास इंद्राणी नयन जे, भृंग परे लपटाय ॥१॥

रोग उरग तुज-नवि नडे, अमृत जे आस्वाद।
तेहथी प्रतिहत तेह मानुं कोइ नवि करे, जगमां तुमशुं रे वाद ।२।
वगर धोइ तुज निर्मली काया कंचनवान।
नही प्रस्वेद लगार तारे तुं तेहने, जे धरे ताहरुं ध्यान ॥३॥
राग गयो तुज मन थकी, तेहमां चित्र न कोय।
रुधिर आमिषथी राग गयो तुज जन्मथी, दूध सहोदर होय॥४॥
श्वासोश्वास कमल समो, तुज लोकोत्तर वात।
देखे न आहार नीहार चर्मचक्षु धणी, एहवा तुज अवदात ॥५॥
चार अतिशय मूलथी, ओगणीस देवना कीध।
कर्म खप्यांथी अग्यार चोत्रीस इम अतिशया, समवायांगे प्रसिद्ध ॥६॥
जिन उत्तम गुण गावतां, गुण आवे निज अंग।
पद्मविजय कहे एह समय प्रभु पालजो, जिम थाउं अखय अभंग ॥७॥

श्री आदिजिनस्तवन

आज आनंद अपार, हमारे आज आनंद अपार।
मरुदेवीनंदन कर्म निकंदन, निरख्या नाभिकुमार, हमारे॥१॥
अजर अमर अकलंक जिनेश्वर,
रूपस्वरूप भंडार हमारे० ॥२॥
अशरण शरण करण जगनायक,

दायक शिवसुख सार हमारे० ॥३॥
तुम सेवा शुभभावे करतां,
पावे भवनो पार हमारे० ॥४॥
कहे जिनदास प्रभु दर्शनथी,
सफल थयो अवतार हमारे० ॥५॥

श्रीआदिजिनस्तवन

आदिनाथ अनादि काले रे, मिल गया मुझे मंदिर ॥
मैं ढुंढ फिरा जग सारा, तूं ना मिला प्रभुप्यारा ।
तव कतारगाम दिल धारा रे मिल गया० ॥१॥
तूं कहां से चल कर आया, इतने दिन क्यों न दिखाया ।
तुजको किसने भरमायारे । मिलगया० ॥२॥
मैं नरक निगोदसे आया, वहां काल अनंत गमाया ।
कर्मोंने मुझे भरमाया रे । मिल गया० ॥३॥
कर्मों को क्यों न हटाया, तप जप संजम सुखदाया ।
इस का है यही उपाया रे । मिल गया० ॥४॥
मैं क्या करूं सुण स्वामी, तूं तो है अंतरजामी ।
मोहने न करी खामी रे। मिल० ॥५॥
सुण हंस कहे पाडोसी, मिल पडा तुझे मैं जोशी ।
तेरी भी मुक्ति होसी रे, मिलगया मुझे मंदिर। आदिना० ॥६॥

केशरीयाजी का स्तवन

(केशरीया थाशुं प्रीत. यह राग)

केशरिया प्यारा मनडुं मोह्युं रे तारा रूप में,
सांवरीया मारा दिल लोभाणुं रे तारा रूपमें ।
नगर धुलेवा शोभतो रे, मंदिर है गुलजार
बावन जिनालय मांहे बिराजे, केशरिया सरकार रे
केशरीया प्यारा. ॥१॥
शाम वरण तूं मोहनगारो, करुणा रस भंडार,
संघ सकल दर्शन कुं आवे, करे पूजन सुखकार रे केश. ॥२॥
परिकर सारा है रुपेरी, अंगीयां झाकझमाल ।
काने कुंडल शिर पर सोहे, मुगट ने फूलमाल रे केश. ॥३॥
रंग रूपालो है लटकालो, मुख सुंदर है भारी ।
नरनारी सब मोहि रह्यारे, जाउं तुज बलिहारी रे केश. ॥४॥
उगणीसे बीआसी वर्ष, वदि चौदस पोष मास ।
तखतगढ के संघ साथे, यात्रा करी तुम खास रे केश. ॥५॥
कल्पवृक्ष चिंतामणि प्यारो, केशरीया महाराज ।
सौभाग्यविजय से नेण मिलावो, करो सकल मुज काज रे
केशरीया० ॥६॥

श्रीऋषभदेव जिन स्तवन

(राग माढ)

प्रभु छो अविकारा, भुवन आधारा, ऋषभ प्रभु भगवान।
दिल हरनारा, मोहनगारा, लागो छो प्यारा ऋषभ प्रभु भगवान ॥आं.
अति उपगारी नाथ हमारा, भव भय भंजनहार।
हाथ जोडी तुम पायमां रे, पडीयें स्वामी निहार रे, प्रभु
दिल हरनारा ॥१॥

आदि पिता नृप आदि छो रे, आदि गुरु आदिदेव।
सकल कला तुमने दर्शाई, नमियें देवाधिदेव रे, प्रभु० ॥२॥
केवल ज्ञान जे ताहरुं रे, चमके तेज़ अनंत।
विश्व मांहि ते सघळे छवायुं, नाथ नमो गुणवंत रे, प्रभु० ।३।
देव देवी मली अप्सरा रे, ठम ठम ठमके पाय।
आनंद रस भर नाच करंती, तुम गुण रंगे गाय रे, प्रभु० ।४।
स्मरण मधुरुं आपनुं रे, कष्ट सहु हरनार।
एम जाणी तुम पाय पडे छे, हरखे सकल संसार रे, प्रभु० ॥५॥
सर्व गुणी अरिहंत छो रे, वांछित फल दातार।
विजयसौभाग्यना कष्ट निवारी, आपो शांति अपार रे।
प्रभु दिल हरनारा० ॥६॥

ऋषभदेव स्तवन

(दास परे दया लावो रे यह राग)

आदि प्रभु मने तारो रे, दयाल स्वामी आदि प्रभु मने तारो आं० ।
इन्द्रादि पूजंत पाया, इन्द्रनार मन में ध्याया ।
आशा प्रभु मारी पूरो पूरो रे, दयाल स्वामी० ॥१॥
मिथ्यात्व अंधारुं मारुं, आज भाग्युं मननुं सारुं ।
देखी छबी तारी रूडी रूडी रे, दयाल० ॥२॥
संसारजाल भारी, नाथ वार पल में मारी ।
जावे भव भव ना फेरा फेरा रे, दयाल० ॥३॥
संभाल ले नाथ मारी, स्नेह शुद्ध दिल में धारी ।
वीनति करुं शिर नामी रे, दयाल० ॥४॥
सौभाग्य वांछित पूरो, कर्म फंद सघळा चूरो ।
आपो शिवरमणी प्यारी प्यारी रे, दयाल० ॥५॥

आहोर ऋषभदेव स्तवन

(जै जै सुख कर दुःख हर० यह चाल)

ॐॐ जगपति अशरण शरण नाथ प्रभु जाउं बलिहारी ॐ।
मूरति कैसी मोहनगारी, नाथ तुमारी अति सुखकारी ।
देखत हम मन लग रही प्यारी, ॐॐ ॥१॥
काने कुंडल शिर पर सोहे, ताज सोनेरी अति मन मोहे ।

कंठे नवसर हार ही सोहे, ॐॐ ० ॥२॥
सुंदर तेरा अचरिज कारी, रूप दिखाता है अविकारी ।
मैं नहीं समजत ना मति मेरी, ॐॐ ० ॥३॥
हे जगनायक दीन दयालो, भव्य जनों के दुख सब टालो ।
अंतर हम कर दो उजियालो, ॐॐ ० ॥४॥
आहोर नगरे आदि जिनंदा, भेट लिया है परमानंदा ।
विजय सौभाग्य के मिट गया फंदा ॐॐ ० ॥५॥

आदि प्रभु गायन

भर लावो रे चंगेरी फूलन की,
आंगी रचावो नाभिनंदन की, भर लावो रे० ॥१॥
चंपो चंबेली मरवो मोगरो,
बीच में कलियां गुलाबन की, भर० ॥२॥
चुन चुन कलियां अंगियां बनावो,
खूब छबी खुली हारन की, भर० ॥३॥
गेंद गुलाबको हीवडे बिराजे,
चंद्रमुखी मूर्ति मोहन की, भर० ॥४॥
सुर सुरियाभे जिनवर पूज्या,
साख सुणो रायपसेणी की, भर० ॥५॥
द्रव्य भाव से पूजा रे करतां,
निर्मल ज्योत समकित की ।
भर लावो रे चंगेरी० ॥६॥

श्री आदिनाथ गायन

आओजी आओ, आदिनाथ के गुण गाने वाले ।
चरनन के चाहने वाले, दरिसन के पानेवाले, तान मान ताल
से जिन मंदिर को गजाने वाले । आओ जी० ॥१॥
समकित को धारन वाले, त्रिपदी पद पालन वाले, चउ
गुन के जान, आतम ज्ञान के बढाने वाले । आओजी० ॥२॥
पर जीव के जानन वाले, रक्षा के मानन वाले, भक्षाभक्ष दिल
में लक्ष के लगाने वाले । आओजी० ॥३॥
श्रावक व्रत धरने वाले, एक अठ से डरने वाले,
तरने भव पार सुकृत नाव के चलाने वाले । आओजी० ॥४॥
जिन वच रस पीने वाले, धन धन जग जीने वाले, गिरते
भव कूप में निज प्राण के बचाने वाले । आओजी० ॥५॥

श्री अजितनाथ जिन स्तवन

प्रीतलडी बंधाणी रे अजित जिणंदसुं,
कांइ प्रभु पाखे क्षण एक मन न सुहाय जो ।
ध्यान नी ताली रे लागी नेहशुं,
जलदघटा जिम शिवसुतवाहन दाय जो, प्रीत० ॥१॥
नेहघेलुं मन माहरुं रे, प्रभु अलजे रहे,
तन धन मन ए कारणथी प्रभु मुझ जो ।

मारे तो आधार रे साहिब रावलो,
अंतर्गत नुं प्रभु आगल कहुं गुझ जो, प्री० ॥२॥
साहेब ते साचो रे जगमां जाणिये,
सेवकनां जे सहेजे सुधारे काज जो ।
एहवे रे आचरणे केम करीने रहुं,
बिरुद तमारुं तरण तारण जहाज जो । प्री० ॥३॥
तारकता तुज मांहे रे श्रवणे सांभली,
ते भणी हुं आव्यो छुं दीनदयाल जो ।
तुज करुणानी लहेरे रे मुज कारज सरे,
शुं घणुं कहीये जाण आगल कृपाल जो, प्री० ॥४॥
करुणादिक कीधी रे सेवक ऊपरे,
भवभय भावठ भांगी भक्ति प्रसन्न जो ।
मन वांजित फलियारे जिन आलंबने,
कर जोडीने मोहन कहे मन रंग जो, प्री० ॥५॥

श्री अजितनाथ जिन स्तवन

अजित जिणंदशुं प्रीतडी, मुज न गमे हो बीजानो संग के ।
मालती फूले मोहीयो, किम बेसे हो बावल तरु भृंग के, अ० ॥१॥
गंगा जल मां जे रम्या, किम छिल्लर हो रति पामे मराल के ।
सरोवर जलधर जल विना, नवि चाहे हो जल चातक बाल
के, अ० ॥२॥

कोकिल कल कूजित करे, पामी मंजरी हो पंजरी सहकार के।
ओछा तरुवर नवि गमे, गिरुआशुं हो होय गुणनो प्यार के, अ० ॥३॥
कमलिनी दिनकर कर ग्रहे, वली कुमुदिनी हो धरे चंदसुं प्रीतके।
गौरी गिरिश गिरधर विना, नवि चाहे हो कमला निज चित्त के अ० ॥ ४ ॥
तिम प्रभुसुं मुज मन रम्युं, बीजासुं हो नवि आवे दाय के।
श्रीनयविजयविबुधतणो, वाचकजस हो नित नित गुण गाय के, अ० ॥५॥

श्री संभव जिन स्तवन

संभव जिनवर वीनति,
अवधारो गुण ज्ञाता रे।
खामी नही मुज खिजमते,
कदीय होशो फल दाता रे, संभव० ॥१॥
कर जोडी ऊभो रहुं,
रात दिवस तुम ध्याने रे।
जो मन मां आणो नही,
तो शुं कहिये छाने रे, संभव० ॥२॥
खोट खजाने को नही,
दीजिये वांछित दानोरे।
करुणा नजर प्रभुजी तणी,
वाधे सेवक वानो रे, संभव० ॥३॥

काल लब्धि नही मति गणो,
भाव लब्धि तुम हाथे रे ।
लडथडतुं पण गयबचुं,
गाजे गयवर साथे रे, संभव० ।।।४।।

देशो तो तुमहीज भलुं,
बीजा तो नवि जाचुं रे ।
वाचकजस कहे सांइशुं,
फलशे एह मुज साचुं रे, संभव० ।।५।।

श्री संभव जिन स्तवन

(अंतरजामी सुण अलवेसर यह चाल)

समकित दाता समकित आपो, मन मागे थइ धीठुं ।
छति वस्तु देतां शुं शोचो, मीठुं छे सहुए दीठुं ।
प्यारा प्राणथकी छो राज, संभव जिनवर मुजने । आं० ।१।

इम जाणो जे आपे लहिये, ते लाधुं शुं लेवुं ।
पण परमारथ प्रीछी आपे, तेहज कहिये देवुं, प्यारा० ।।२।।

अर्थी हुं तूं अर्थ समर्पक, इम मत करजो हांसुं ।
प्रकट न हतुं तुमने पण पहिलां, ए हांसानुं पासुं, प्यारा० ।।३।।

परम पुरुष तुमें प्रथम भजीने, पाम्या ए प्रभुताई ।
तिण रूपें तुमने इम भजिये, तिणें तुम हाथ वडाई, प्या० ।।४।।

तुमे स्वामी हुं सेवाकामी, मुजरे स्वामी निवाजे ।
नही तो हठ मांडी मागतां, किण विध सेवक लाजे प्या० ॥५॥
ज्योते ज्योति मिले मत प्रीछो, कुण लहेशे कुण भजशे ।
साची भक्ति ते हंस तणी परे, खीर नीर मय करशे, प्या० ॥६॥
उलग कीधी जे लेखे आवी, चरण भेट प्रभु दीधी ।
रूपविबुधनो मोहन पभणे, रसना पावन कीधी प्या० ॥७॥

श्री अभिनन्दनजिन स्तवन

दीठी हो प्रभु दीठी जग गुरु तुझ,
मूरति हो प्रभु मूरति मोहन वेलडी जी ।
मीठी हो प्रभु मीठी ताहरी वाणी,
लागे हो प्रभु लागे जेसी सेलडी जी ॥१॥
जाणुं हो प्रभु जाणुं जन्म कृयत्थ,
जो हुं हो प्रभु जो हुं तुम साथे मिल्यो जी ।
सुरमणि हो प्रभु सुरमणि पाम्यो हथ्थ,
आंगणे हो प्रभु आंगणे मुझ सुरतरु फल्यो जी ॥२॥
जाग्या हो प्रभु जाग्या पुण्य अंकूर,
मांग्या हो प्रभु मुह मांग्या पाशा ढल्या जी ।
वूठा हो प्रभु वूठा अमीरस मेह,
नाठा हो प्रभु नाठा अशुभ शुभ दिन वल्या जी ॥३॥

भूख्यां हो प्रभु भूख्यां मल्यां घृतपूर,
तरश्यां हो प्रभु तरश्यां दिव्य उदक मल्यां जी ।
थाक्यां हो प्रभु थाक्यां मिल्यां सुखपाल,
चाहतां हो प्रभु चाहतां सज्जन हेते मल्या जी ॥४॥
दीवो हो प्रभु दीवो निशा वन गेह,
साथी हो प्रभु साथी थले जले नौका मिली जी ।
कलिजुगे हो प्रभु कलिजुगे दुल्लहो तुज्झ,
दरिसन हो प्रभु दरिसन लह्यो आशा फली जी ॥५॥
वाचक हो प्रभु वाचक जस तुम दास,
वीनवे हो प्रभु वीनवे अभिनन्दन सुणो जी ।
कहियें हो प्रभु कहियें म देजो छेह,
देजो हो प्रभु देजो सुख दरिसणतणो जी ॥६॥

श्री अभिनन्दनजिन-वाणी महिमा स्तवन

तुमे जोजो जोजो रे वाणीनो प्रकाश तुमे जोजो जोजोरे।
उठे छे अखंड ध्वनि जोजने संभलाय ।
नर तिरय देव आपणी, सहु भाषाये समजाय, तुमे० ॥१॥

द्रव्यादिक देखी करीने, नयनिक्षेपे जुत्त ।
भंग तणी रचना घणी कांइ, जाणे सहु अद्भुत, तुमे० ॥
पय सुधा ने इक्षुवारि हारी जाये सर्व ।
पाखंडी जन सांभलीने मूकी दिये गर्व, तुमे० ॥३॥

गुण पांत्रीसे अलंकरी कांइ, अभिनन्दनजिनवाण ।
संशय छेदे मनतणा प्रभु, केवल ज्ञाने जाण, तुमे० ॥४॥
वाणी जे जन सांभले ते, जाणे द्रव्य ने भाव ।
निश्चय ने व्यवहार जाणे, जाणे निज पर भाव, तुमे ॥५॥
साध्य साधन भेद जाणे, ज्ञान ने आचार ।
हेय ज्ञेय उपादेय जाणे, तत्त्वातत्त्व विचार, तुमे० ॥६॥
नरक स्वर्ग अपवर्ग जाणे, थिर व्ययने उत्पाद ।
राग द्वेष अनुबंध जाणे, उत्सर्ग ने अपवाद, तुमे० ॥७॥
निज स्वरूपने ओलखीने, अवलंबे स्वरूप ।
चिदानन्दघन आतमा ते, थाये निजगुणभूप, तुमे० ॥८॥
वाणीथी जिन उत्तम केरा, अवलंबे पदपद्म ।
नियमा ते परभाव तजीने, पामे शिवपुर सद्म, तुमे० ॥९॥

श्री सुमतिनाथ स्तवन

सुमतिनाथ गुणशुं मिली जी, वाधे मुज मन प्रीति ।
तेल बिंदु जिम विस्तरे जी, जलमांहे भली रीति ।
सोभागी जिनशुं लागो अविहड रंग, आं० ॥१॥
सज्जनशुं जे प्रीतडी जी, छांनी ते न रखाय ।
परिमल कस्तूरीतणो जी, महिमांहे महकाय, सोभागी० ॥२॥
आंगलिये नवि मेरु ढंकाये छाबडिये रवि तेज ।
अंजलिमां जिम गंग न माये, मुज मन तिम प्रभु हेज सो० ॥३॥

हुओ छिपे नहीं अधर अरुण, जिम खातां पांन सुरंग ।
पीवत भर भर प्रभु गुण प्याला, तिम मुज प्रेम अभंग, सो० ॥४॥
ढांकी इक्षु पलालशुं जी, न रहे लही विस्तार ।
वाचक जस कहे प्रभुतणो जी, तिम मुज प्रेम प्रकार, सो० ॥५॥

सीनोर गाम सुमति जिन स्तवन

(राग बलिहारी की)

सुखकारी सुखकारी सुखकारी कृपानाथ हो
जाउं वारी सुमति जिन सुमति सेवक दीजीये जी ।
दरिसन देव दीजे, कुमति को दूर कीजे ।
यही मागुं हुं हे दातारी, कृपानाथ हो० ॥१॥
कुमति ने कामण किया, मुझ को भरमाय दिया ।
इन से छुडा दो हे सरदारी कृपानाथ हो० ॥२॥
पंचम अवतार लिया, दुनिया को तार दिया ।
आशा पूरो कहुं हुं पुकारी, कृपानाथ हो० ॥३॥
निरादर नाहीं कीजे, बिरुद संभाल लीजे ।
तरण तारण हो हे अधिकारी, कृपानाथ हो० ॥४॥
सीनोरमंडण नामी, सुमति जिनेश्वर स्वामी ।
बेडी उतारो प्रभुजी हमारी, कृपानाथ हो० ॥५॥
निधि रस निधि चंदा, संवत् है सुखकंदा ।
वीरविजयकुं आनंदकारी, कृपानाथ हो० ॥६॥

श्री पद्मप्रभ जिन स्तवन

(देशी झुंबखडे की)

श्री पद्मप्रभजिन सेविये रे, शिवसुंदरीभरतार कमल दल आंखडियां । मोहनशुं मन मोही रह्युं रे, रूपतणो नही पार भमुहधनु वांकडियां ॥१॥

अरुणकमलसम देहडी रे, जगजीवन जिनराय, वयण रस सेलडियां । त्रीस पूरव लख आउखुं रे सारे वांछित काज मोहन सुरवेलडियां ॥२॥

सहियरो सवि टोले मिली रे, शोले सजी शणगार मिली सखि शेरडीयां । गुण गाती घुमरी दिये रे, करी चूडी खलकार, कमलमुख गोरडीयां ॥३॥

मात सुसीमा उरे धर्यो रे, मुज दिलडामांहे देव, वस्यो दिन रातडीयां । कोसंबी नयरीतणो रे नाथ नमो नित्यमेव, सुणो सखि वातडीयां ॥४॥

धनुष अढीशय शोभती रे, उंचपणे जगदीश, नमो साहेलडियां । रामविजय प्रभु सेवतां रे, लहिये सयल जगीश वधे सुखवेलडियां ॥५॥

श्री पद्मप्रभ स्तवन

(रेखता या कव्वाली)

पदम प्रभु प्राण से प्यारा, छुडावो कर्म की धारा।
कर्मफंद तोडवा धोरी, प्रभुजी से अर्ज है मोरी,
पदम प्रभु० ॥१॥

लघुवय एक थे जीया, मुक्ति में वास तुम किया।
न जानी पीड थे मोरी, प्रभु अब खेंच ले दोरी।
पदम प्रभु० ॥२॥

विषय सुख मानी मो मन में, गया सब काल गफलत में।
नरक दुख वेदना भारी, निकलवा ना रही बारी।
पदम प्रभु० ॥३॥

परवश दीनता कीनी, पापकी पोट सिर लीनी।
भक्ति नहीं जाणी तुम केरी, रहा निश दिन दुख घेरी।
पदम प्रभु० ॥४॥

इण विध वीनती तोरी, करूं मैं दोय कर जोरी।
आतम आनंद मुज दीजो, वीर का काम सब कीजो।
पदम प्रभु० ॥५॥

श्री सुपार्श्वजिन स्तवन

(देशी आछेलाल)

श्रीसुपास जिनराज, तूं त्रिभुवन शिरताज ।
आज हो छाजे रे ठकुराई प्रभु तुज पदतणी जी ॥१॥
अतिशय सहजना च्यार, कर्म खप्यांथी अग्यार ।
आज हो कीधा रे ओगणीस सुरगण भासुरें जी ॥२॥
वाणी गुण पांत्रीस, प्रतिहारज जगदीश ।
आज हो राजे रे दीवाजे छाजे आठशुं जी ॥३॥
दिव्यध्वनि सुरफूल, चामर छत्र अमूल ।
आज हो राजे रे भामंडल गाजे दुंदुभि जी ॥४॥
सिंहासन अशोक, बेठा मोहे लोक ।
आज हो स्वामी रे शिवगामी वाचकजस थुण्यो जी ॥५॥

श्री चंद्रप्रभजिन स्तवन

श्री चंद्रप्रभ जिन साहिबा रे, तुमे छो चतुर सुजाण, मनना मान्या। सेवा जाणो दासनी रे, देशो पद निर्वाण, मनना मान्या। आवो आवो रे चतुर सुख भोगी, कीजे वात एकांत अभोगी गुण गोठे प्रगटे प्रेम, मनना० ॥१॥

ओछुं अधिकुं पण कहे रे, आसंगायत जेह, मनना मान्या। आपे फल जे अणकहे रे, गिरुओ साहिब तेह, मनना मान्या॥

दीन कह्या विण दानथी रे, दातानी वाधे माम, मनना मान्या । जल दिये चातक खीजवी रे, मेघ हुआ तिणे श्याम, मनना मान्या ॥३॥

पियु पियु करी तुमने जपुं रे, हुं चातक तुमे मेह, मनना मान्या । एक लहेरमां दुख हरो रे, वाधे बमणो नेह, मनना मान्या ॥४॥

मोडुं वहेलुं आपवुं रे, तो शी ढील कराय, मनना मान्या। वाचक जस कहे जगधणी रे, तुम तूठे सुख थाय, मनना मान्या ॥५॥

श्री सुविधिनाथ स्तवन

(साहिबा मोतीडो हमारो यह देशी)

अरज सुणो एक सुविधि जिनेसर,
परम कृपानिधि तुमें परमेसर । साहिबा
सुज्ञानी जोवो तो वात छे मान्यानी । आं० ।
कहेवाओ पंचम चरणना धारी,
किम आदरी अश्वनी असवारी । सा० ॥१॥
छो त्यागी शिव वास वसो छो,
दढरथसुत रथे केम बेसो छो ॥सा०॥
आंगी प्रमुख परिग्रहमां जो पडशो,
हरिहरादिकने किण विध नडशो, सा० ॥२॥

धुरथी सकल संसार निवार्यो,
किम करी देवद्रव्यादिक धार्यो, सा० ।
तजी संयम ने थाशो गृहवासी,
कुण आशातना तजशे चोरासी, सा० ॥३॥
समकित मिथ्यामतिमें निरंतर,
इम किम भाजशे प्रभुजी अंतर, सा० ।
लोक तो देखशे तेहवुं कहेशे,
इम जिनता तुम किण विध रहेशे, सा० ॥४॥
पण हवे शास्त्रगते मति पहोची,
तेहथी जोयुं में उंडुं आलोची, सा० ।
इम कीधे तुम प्रभुताई न घटे,
साहमो इम अनुभव गुण प्रकटे, सा० ॥५॥
हय गय यद्यपि तूं आरोपाए,
तो पण सिद्धपणुं न लोपाए, सा० ।
जिम मुकुटादिक भूषण कहेवाए,
पण कंचननी कंचनता न जाए, सा० ॥६॥
भक्तनी करणीये दोष न तुमने,
अघटित कहेवुं अजुक्त ते अमने, सा० ।
लोपाए नहीं तू कोइथी स्वामी,
मोहनविजय कहे शिर नामी, सा० ॥७॥

श्री शीतल जिन स्तवन

श्री शीतलजिन भेटिये, करी चोखुं भक्तें चित्त हो।
तेहथी कहो छानुं किस्युं, जेहने सोंप्या तन मन वित्त हो।
श्री शीतल० ॥१॥

दायक नामे छे घणा, पण तूं सायर ते कूप हो। ते बहु
खजुवा तग तगे, तूं दिनकर तेजसरूप हो। श्री शी० ॥२॥

मोहोटो जाणी आदर्यो, दारिद्र भांजो जगतात हो।
तूं करुणावंतशिरोमणि, हुं करुणापात्र विख्यात हो।
श्री शी० ॥३॥

अंतरजामी सवि लहो, अम मननी जे छे वात हो।
मा आगल मोशालना, शा वरणववा अवदात हो।
श्री शी० ॥४॥

जाणो तो ताणो किस्युं, सेवा फल दीजें देव हो।
वाचक जस कहे ढीलनी, ए न गमे मुज मन टेव हो।
श्री शी० ॥५॥

श्री श्रेयांसजिन स्तवन

(कर्म न छूटे रे प्राणिया यह चाल)

तुमे बहु मैत्री रे साहिबा, मारे तो मन एक।
तुम विण बीजो रे नवि गमे, ए मुज मोटीरे टेक।
श्री श्रेयांस कृपा करो ॥१॥

मन राखो तुमे सवि तणां, पण किहां एक मलि जाओ।
ललचावो लख लोकने, साथे सहेज न थाओ।
श्री श्रेयांस० ॥२॥
रागभरे जनमन रहो, पण तिहुंकाल वैराग।
चित्त तुमारो रे समुद्रनो, कोय न पामे ताग।
श्री श्रेयांस० ॥३॥
एहवासुं चित्त मेलव्युं, केलव्युं पहेलां न कांइ।
सेवक निपट अबूझ छे, निर्वहेशो तुमे सांइ।
श्री श्रेयांस० ॥४॥
नीरागीसुं रे किम मिले, पिण मिलवानो एकांत।
वाचक जस कहे मुज मिल्यो, भक्ते कामण तंत।
श्री श्रेयांस० ॥५॥

श्री वासुपूज्यजिन स्तवन

(साहेबा मोतीडो हमारो यह देशी)

स्वामी तुमे कांइ कामण कीधुं, चित्तडुं अमारुं चोरी लीधुं।
साहेबा वासुपूज्य जिणंदा, मोहना वासुपूज्य ॥आं०॥
अमे पण तुमसुं कामण करशुं, भक्ति ग्रही मनघरमां धरशुं।
साहेबा० ॥१॥
मनघरमां धरियां घर शोभा, देखत नित्य रहेशुं थिर थोभा।
मन वैकुंठ अकुंठित भक्ते, योगी भाखे अनुभव युक्ते।
साहेबा० ॥२॥

क्लेशे वासित मन संसार, क्लेश रहित मन ते भव पार ।
जो विशुद्ध मनघर तुमे आव्या, प्रभु तो अमे नवनिधि ऋद्धि
पाव्या । सा० ॥३॥
सात राज अलगा जइ बेठा, पण भगते अम मनमां पेठा ।
अलगा ने वलगा जे रहेवुं, ते भाणाखडखड दुख सहेवुं ।
सा० ॥४॥
ध्यायक ध्येय ध्यान गुण एके, भेद छेद करशुं हवे टेके ।
खीर नीर परे तुमसुं मलशुं, वाचक जस कहे हेजे हलशुं ।
सा० ॥५॥

श्री वासुपूज्य गायन

(राग माढ)

वासुपूज्य विलासी, चंपाना वासी, पूरो हमारी आश ।
करुं पूजा हूं खासी, केसर घासी, पुष्प सुवासी, पूरो हमारी
आश० ॥
चैत्यवंदन करुं चित्तथी प्रभुजी, गावुं गीत रसाल ।
एम पूजा करी विनति करुं छुं, आपो मोक्ष बिशाल ।
दीयो कर्मने फांसी, काढो कुवासी, जेम जाय नाशी,
पूरो हमारी आश । वासु० ॥१॥
आ संसार घोरमहोदधिथी, काढो अमने बहार ।
स्वारथना सहु कोइ सगा छे, मात पिता परिवार रे ।
बालमित्र उलासी, विजयविलासी, अरजी खासी,
पूरो हमारी आश । वासुपूज्य विलासी० ॥२॥

श्री विमलनाथ स्तवन

(नमो रे नमो श्री शत्रुंजय गिरिवर यह देशी)

सेवो भविया विमल जिनेसर, दुलहा सज्जनसंगा जी ।
एहवा प्रभुनुं दरिसण लेवुं, ते आलसमांहे गंगा जी ।
सेवो० ॥१॥
अवसर पामी आलस करशे, ते मूरखमां पहेलो जी ।
भूख्याने जेम घेवर देतां, हाथ न मांडे घेलो जी । सेवो० ॥२॥
भव अनंतमां दर्शन दीठुं, प्रभु एहवा देखाडे जी ।
विकटग्रंथि जे पोलि पोलियो, कर्मविवर उघाडे जी ।
सेवो० ॥३॥
तत्त्वप्रीति करी पाणी पाए, विमलालोके आंजी जी ।
लोयण गुरु परमान्न दिये तव, भर्म नाखे सवि भांजी जी ।
सेवो० ॥४॥
भर्म भागो तव प्रभुसुं प्रेमे, वात करुं मन खोली जी ।
सरल तणे जे हइडे आवे, तेह जणावे बोली जी ।सेवो० ॥५॥
श्री नयविजयविबुधपयसेवक, वाचकजस कहे साचुं जी ।
कोडि कपट जो कोइ दिखावे, तो प्रभु विण नहीं राचुं जी ।
सेवो० ॥६॥

श्री विमलनाथ जिन स्तवन

(गजल कवाली)

विना दर्शन किये तेरा, नहीं दिल को करारी है ।
चुरा कर ले गई मन को, प्रभु सूरत तुम्हारी है । विना० ॥१॥
न कलपाओ दया लाओ, हमें निज पास बुलवाओ ।
सहा जाता नहीं अब तो, विरह का बोझ भारी है । विना ॥२॥
ज्ञान से ध्यान से तेरा, न सानी रूप दुनिया में ।
फिदा हो प्रेममें तेरे, उमर सारी गुजारी है । विना० ॥३॥
दया पूरन कष्ट चूरन, करो अब आश मम पूरन ।
मेहेर की एक ही दृष्टि, हमें दृष्टि तुम्हारी है ॥ विना० ॥४॥
विमल है नाम प्रभु तेरा, विमल कर नाथ मन मेरा ।
चरण में आप के डेरा, तिलक भवभव स्विकारी है । विना० ॥५॥

श्री अनंतनाथ जिन स्तवन

(देशी कडखे की)

धार तरवारनी सोहिली दोहिली,
चउदमा जिनतणी चरण सेवा ।
धार पर नाचता देख बाजीगरा,
सेवना धार पर रहे न देवा । धार० ॥१॥
एक कहे सेविये विविध किरिया करी,
फल अनेकांत लोचन न देखे ।

फल अनेकांत किरिया करी बापडा,
रडवडे चार गतिमांहि लेखे । धार० ॥२॥
गच्छना भेद बहु नयण निहालतां,
तत्त्वनी वात करतां न लाजे ।
उदरभरणादि निजकाज करतां थकां,
मोहनडिया कलिकाल राजें । धार० ॥२॥
वचननिरपेक्ष व्यवहार झूठो कह्यो,
वचनसापेक्ष व्यवहार साचो ।
वचननिरपेक्ष व्यवहार संसारफल,
सांभली आदरी कांइ राचो । धार० ॥४॥
देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो केम रहे,
केम रहे शुद्ध श्रद्धान आणो ।
शुद्ध श्रद्धान विण सर्व किरिया करी,
छार पर लीपणुं तेह जाणो । धार० ॥५॥
पाप नही कोइ उत्सूत्र भाषण जिस्युं,
धर्म नही कोइ जग सूत्र सरिखो ।
सूत्र अनुसार जे भविक किरिया करे,
तेहनुं शुद्ध चारित्र परखो । धार० ॥६॥
एह उपदेशनो सार संक्षेपथी,
जे नरा चित्तमें नित्य ध्यावे ।
ते नरा दिव्य बहुकाल सुख अनुभवी,
नियत आनंदघनराज पावे । धार० ॥७॥

श्री धर्मनाथ जिन स्तवन

धर्म जिनेसर गाउं रंगसुं,
भंग म पडशो हो प्रीत जिनेसर ।
बीजो मनमंदिर आणुं नही,
ए अम कुलवट रीत जिनेसर । धर्म० ॥१॥
धरम धरम करतो जग सहु फिरे,
धर्म न जाणे हो मर्म जिनेसर ।
धर्म जिनेसर चरण ग्रह्या पछी,
कोइ न बांधे हो कर्म जिनेसर । धर्म० ॥२॥
प्रवचनअंजन जो सद्गुरु करे,
देखे परम निधान जिनेसर ।
हृदयनयण निहाले जग धणी,
महिमामेरुसमान जिनेसर । धर्म० ॥३॥
दोडत दोडत दोडत दोडियो,
जेती मननी रे दोड जिनेसर ।
प्रेम प्रतीत विचारो ढूकडी,
गुरुगम लेजो रे जोड जिनेसर । धर्म० ॥४॥
एक पखी किम प्रीति परवडे,
उभय मिल्यां होय संधि जिनेसर ।
हुं रागी हुं मोहे फंदियो,
तूं नीरागी निरबंध जिनेसर । धर्म० ॥५॥

परमनिधान प्रगट मुख आगले,
जगत उलंघी हो जाय जिनेसर ।
जोति विना जुओ जगदीसनी,
अंधो अंध पलाय जिनेसर । धर्म० ॥६॥

निर्मलगुणमणिरोहणभूधरा,
मुनिजनमानसहंस जिनेसर ।
धन ते नगरी धन वेला घडी,
मात पिता कुल वंश जिनेसर । धर्म० ॥७॥

मनमधुकर वर कर जोडी कहे,
पदकजनिकट निवास जिनेसर ।
घननामी आनंदघन सांभलो,
ए सेवक अरदास जिनेसर । धर्म० ॥८॥

श्री शांतिनाथस्तवन

सुंदर शांतिजिणंदनी, छबी छाजे छे ।
प्रभु गंगाजलगंभीर, कीर्ति गाजे छे ॥ १॥

गजपुर नयर सोहामणुं, घणुं दीपे छे ।
विश्वसेननरिंदनो नंद, कंदर्प जीपे छे ॥२॥

अचिरामाताए उर धर्यो, मन रंजे छे ।
मृगलांछन कांचनवान, भावठ भंजे छे ॥३॥

प्रभु लाख वरस चोथे भागे, व्रत लीधुं छे ।
प्रभु पाम्या केवल ज्ञान, कारज सीधुं छे ॥४॥
धनुष चालीसनुं ईशनुं, तनु सोहे छे,
प्रभु देशना ध्वनि वरसंत, भवि पडिबोहे छे ॥५॥
भक्तवत्सल महिमानिधि, जन तारे छे ।
बुडंतां भवजलमांहे, पार उतारे छे ॥६॥
सुमतिविजय गुरु नामथी, दुख नाशे छे ।
कहे रामविजय जिनध्यान, नवनिधि पासे छे ॥७॥

श्री शांतिनाथ स्तवन

सुणो शांतिजिणंद सोभागी, हुं तो थयो छुं तुम गुण-रागी। तुमे नीरागी भगवंत, जोतां किम मलशे तंत। सुणो०॥१॥

हुं तो क्रोध कषायनो भरियो, तुं तो उपशम रसनो दरियो। हुं तो अज्ञाने आवरियो, तुं तो केवल कमला वरियो। सु० ॥२॥

हुं तो विषयारसनो आशी, तें तो विषया कीधी निराशी। हुं तो कर्मने भारे भार्यो, तें तो प्रभु भार उतार्यो। सु० ॥३॥

हुं तो मोहतणे वश पडियो, तुं तो सघला मोहने नडियो। हुं तो भवसमुद्रमां खुंतो, तुं तो शिवमंदिरमां पहोतो। सु० ॥४॥

मारे जन्म–मरणनो जोरो, तें तो तोडचो तेहनो दोरो। मारो पासो न मेले राग, तुमे प्रभुजी थया वीतराग। सु० ॥५॥

मने मायाए मूक्यो पाशी, तुं तो निरबंधन अविनाशी। हुं तो समकितथी अधूरो, तुं तो सकल पदारथे पूरो। सु० ॥६॥

म्हारे छो तूं ही प्रभु एक, त्हारे मुज सरिखा छे अनेक। हुं तो मनथी न मूकुं मान, तुं तो मानरहित भगवान। सु० ॥७॥

मारुं कीधुं ते शुं थाय, तुं तो रंकने करे राय। एक करो मुज महेरबानी, म्हारो मुजरो लेजो मानी। सु० ॥८॥

एक वार जो नजरे निरखो, तो करो मुजने तुम सरिखो। जो सेवक तुम सरिखो थाशे, तो गुण तुमारा गाशे। सु० ॥९॥

भवोभव तुज चरणनी सेवा, हुं तो मागुं देवाधिदेवा। सामु जुओने सेवक जाणी, एहवी उदयरत्ननी वाणी ॥ सु०॥११॥

श्री शांतिनाथ स्तवन

क्षण क्षण सांभरो शांति सलूणा,
ध्यान भुवन जिनराज परुंणा, क्षण० आं।
शांतिजिणंद के नाम अमीसे,
उलसित होत हम रोम वपुना, क्षण०।
भव चोगानमें फिरते पायो,
छोडत मैं नहीं चरण प्रभुना। क्षण० ॥१॥

छिल्लरमें रति कबहुं न पावे,
जे झीले जल गंगा यमुना ।
तुम सम हम शिर नाथ न थाशे,
कर्म अधुना दूना धूना । क्षण० ॥२॥

मोहलडाईमें तेरी सहाई,
तो खिणमें छिन्न छिन्न करुंना ।
नाही घटे प्रभु आना कुंना,
अचिरासुत पति मोक्षवधूना । क्षण० ॥३॥

ओरकी पासमें आश न करते,
चार अनंत पसाय करुंना ।
क्यों कर मागत पास धतूरे,
युगलिक याचक कल्पतरुना । क्षण० ॥४॥

ध्यान खडग वर तेरे आसंगे,
मोह डरे सारी भीक भरूंना ।
ध्यान अरूपी तो सोई अरूपी,
भक्ते ध्यावत ताना तूना । क्षण० ॥५॥
अनुभव रंग वध्यो उपयोगे,
ध्यानसुपान में काथा चूना ।
चिदानंद झकझोल घटासे,
श्री शुभवीरविजय पडिपुन्ना । क्षण० ॥६॥

श्री शांतिनाथस्तवन

(गजल कवाली)

अजब है शांतिजिन दर्शन, हमारा होत मन परसन ।
आंकणी ।

मूरत क्या मोहनी प्यारी, भरी समतारसे भारी ।
जिगर में प्रेमरस भरती, हमारे पाप मल हरती ।
अजब है० ॥१॥

पडा संसारबंधन में, गई थी सूध बुध मेरी ।
सूरत तेरी निहाली मैं, छूटा हूं ना लगी देरी ।
अजब है० ॥२॥

कमल पर ज्युं लगा भमरा, लुभाया तेरी सूरत में ।
बिठा ले चरण में अपने, सुनी ले अर्ज भी दिल में ।
अजब है० ॥३॥

कृपादृष्टि अहा कीनी, कबूतरपे दयाभीनी ।
विजय सोभाग्य को तारो, दुखों के फंद सब टारो ।
अजब है० ॥४॥

श्री शांतिनाथ गायन

(वीरा वेश्याना यारी यह देशी)

श्री शांति तुमारी, छे बलिहारी, जग विषे जिनराज। पूरो आशा अमारी, दइ सुखकारी, छे बलिहारी जग विषे जिन-राज ॥आं०॥

कुसुमवासित आसन सुंदर, धूपधूमादिनी धूम। उडी रहीं अलबेला स्वामी, नाचुं छनक छुम। भाव अंतर धारी, ज्ञान सुधारी, छे बलिहारी, जगविषे जिनराज। श्री शांति० ॥१॥

रोग शोक वियोग विदारी देजो दर्शन दान। गाजता गंभीर मृदंग साथे, नित्य लगावुं तान। प्रभु भक्ति वधारी, जय जय कारी, छे बलिहारी जग विषे० ॥२॥

मुकुट मंडल काने कुंडल, चमके झाक झमाल। शांति संघमां शांति फेलावी, करजो मंगलमाल। मागे 'नान' विचारी, विनयधारी, छे बलिहारी, जगविषे जिनराज। श्री शांति० ॥३॥

श्री कुंथुनाथ स्तवन

(आशक तो हो चुका हूं यह चाल)

कुंथुजिनंद प्यारा, नमता हूं नाथ तुम को। आं०।
शक्ति अनंत भरिया, समतासुधा का दरिया।
मुक्तिवधू को वरिया, नमता हूं नाथ तुम को। कुंथु० ॥१॥

नृप सूरजी के नंदा, टालो जी कर्मफंदा ।
देव्रो विशुद्धानंदा, नमता हूं० ॥२॥
चारों गति का फेरा, वारो जी नाथ मेरा ।
कर लो पदाति तेरा, नमता हूं० ॥३॥
ममता गई है मेरी, मूर्ति निहाल तेरी ।
छटकी भवों की फेरी, नमता हूं० ॥४॥
जपते ही नाम तेरा, विनसा है मोह मेरा ।
मिलिया विवेक डेरा, नमता हूं० ॥५॥
करुणा से दास तारो, कुगति के द्वार ठारो ।
कर्मन् के बंध वारो, नमता हूं० ॥६॥
मन की उपाधि चूरो, सिद्धि सुखों को पूरो ।
कर लो सोभाग शूरो, नमता हूं० ॥७॥

श्री अरनाथजिनस्तवन

(आसणरा जोगी' यह देशी)

श्री अरजिन भवजलनो तारु, मुज मन लागे वारु रे, मनमोहन स्वामी । बांह ग्रहीए भविजन तारे, आणे शिवपुर आरे रे, मनमोहन स्वामी ॥१॥

तप्र जप मोह महातोफाने, नाव न चाले माने रे, मन-मो० । पण नवि भय मुज हाथो हाथे, तारे ते छे साथे रे, मनमो० ॥२॥

भगतने स्वर्ग स्वर्गथी अधिकुं, ज्ञानीने फल जोइ रे, मन० । काया कष्ट विना फल लहिये, मनमां ध्यान धरेइ रे, मन० ॥३॥

जे उपाय बहुविधनी रचना, योगमाया ते जाणो रे, मन० । शुद्ध द्रव्य गुण पर्याय ध्याने, शिव दिये प्रभु सपराणो रे, मन० ॥४॥

प्रभुपद वलग्या ते रह्या ताजा, अलगा अंग न साजा रे, मन. । वाचक जस कहे अवर न ध्याउं, ए प्रभुना गुण गाउं रे, मन० ॥५॥

श्री मल्लिनाथजिनस्तवन

मनमोहन मल्लिनाथ को जस बोलेंगे,
शिवरमणी को रंग घुंघट पट खोलेंगे, आं. ।
मोह्यो मन घन मोरज्युं जस बोलेंगे,
अब ओर न चाहुं संग, घुंघट पट० ॥१॥

चिंतामणि को पाय के जस०,
कोण राचे काचे काच, घुंघट० ।
को चाहे खरकेलिकुं जस०,
तजी सुरकुमरीको नाच, घुंघट० म० ॥२॥

बावलकुं सेवे नहीं जस०,
तजी मधुकर मालतीफूल, घुंघट० ।

कोमल शय्या छोड के जस०,
कुण बेठे धरिके शूल, घुंघट० । म० ॥३॥
प्रभुकी मूरति मेरे मन वसी जस०,
सो तो विसराई विसरे न, घुंघट० ।
दर्शन प्रभुमुख देख के जस०,
हम पावन कीने नेन, घुंघट० । मनमोहन० ॥४॥
जन्म कृतारथ मैं कर्यो जस०,
जब पायो ऐसो ईश घुंघट० ।
त्रिमलविजय उवझाय को जस०,
एम राम कहे शुभ शीस घुंघटपट खोलेंगे,
मनमोहन मल्लिनाथ को जस बोलेंगे. ॥५॥

श्री मुनिसुव्रतजिनस्तवन

(इडर आंबा आंबली रे यह देशी)

मुनिसुव्रत कीजे मया रे, मनमाने धरी महेर । महेर विहूणा मानवी रे, कठिन जणाये कहेर जिनेसर तुं जगनायक देव, तुज जगहित करवा टेव, जिने० ॥

अरहट क्षेत्रनी भूमिकारे, सिंची कृतारथ होय । धाराधर सघली धरा रे, उद्धरवा सज्ज जोय, जिनेसर० ॥२॥

ते माटे अश्व उपरे रे, आणी मनमां महेर । आपे आव्या आफणी रे, बोधवा भरुअच्छ शहेर, जिनेसर० ॥३॥

अणप्रार्थता उद्धर्या रे, आपे करिय उपाय। प्रारथता रहे विलवतारे, ए कुण कहिये न्याय, जिनेसर० ॥४॥

संबंध पण तुज मुज विचे रे, स्वामी–सेवकभाव। मान कहे हवे महेरनो रे, न रह्यो अवर प्रस्ताव, जिनेसर० ॥५॥

श्री नमिनाथजिन स्तवन

(आसणारा जोगी यह देशी)

आज नमिजिन राजने कहिये, मीठे वचने प्रभुमन लहिये रे। सुखकारी साहिबजी। प्रभु छे निपट निसनेही नगीना, अमे छुं सेवक आधीना रे, सुख० ॥१॥

सुनजर करशो तो वरशो वडाई, सुकहिशे प्रभुने लडाइ रे, सुख०। तुमे अमने करशो महोटो, कुण कहेशे तुने प्रभु खोटो रे, सुख० ॥२॥

निःशंक थइ शुभ वचन कहेशो, जगशोभा अधिकी लेशो रे, सुख०। अमे तो रह्या छुं तुमने राची, रखे आप रहो मन खांची रे, सुख० ॥३॥

अमे तो किस्युं अंतर नवि राखुं, जे होवे हृदय कही दाखुं रे, सु० गुणियल आगल गुण कहेवाए, ज्यारे प्रीत प्रमाणे थाये रे, सु० ॥४॥

विषधर ईश हृदय लपटाणो, तेहवो अमने मिल्यो छे टाणो रे, सु. निरवहेशो जो प्रीत हमारी, कलि कीरत थाशे तुमारी रे, सु० ॥५॥

धूर्ताई चित्तडे नवि धरशो, कांइ अवलो विचार न करशो रे, सु.
जिम तिम जाणी सेवक जाणेजो, अवसर लही सुधी लेजोरे,
सु. ॥६॥
आसंगे कहिये ते तुमने, प्रभु दीजे दिलासो अमने रे, सु.
मोहनविजय सदा मन रंगे, चित्त लाग्युं प्रभुने संगे रे, सु. ॥७॥

श्री नेमिनाथ स्तवन

(अजित जिणंदसुं प्रीतडी यह चाल)

परमातम पूरण कला, पूरण गुण हो पूरण जन आश।
पूरण दृष्टि निहालिये, चित्त धरिये हो अमची अरदास, पर॥१॥
सर्व देश घाती सहु, अघाती हो करी घात दयाल।
वास कियो शिवमंदिरे, मोहे विसरी हो भमतो जगजाल, पर॥२॥
जगतारक पदवी लही, तार्या सही हो अपराधी अपार।
तात कहो मोहे तारतां, किम कीनी हो इण अवसर वार, पर॥३॥
मोह महामद छाकथी, हुं छकियो हो नहीं शुद्धि लगार।
उचित सही इण अवसरे, सेवकनी हो करवी संभाल, पर ॥४॥
मोह गया जो तारशो, तिण वेला हो किहां तुम उपगार।
सुखवेला सज्जन घणा, दुःखवेला हो विरला संसार, पर॥५॥
पण तुम दरिसणजोगथी, थयो हृदये हो अनुभवप्रकाश।
अनुभव अभ्यासी करे, दुखदायी हो सहु कर्मविनाश, पर ॥६॥
कर्मकलंक निवारी ने, निजरूपे हो रमे रमता राम।

लहत अपूरव भावथी, इण रीते हो तुम पद विशराम, पर ॥४॥
त्रिकरण जोगे वीनवुं, सुखदायी हो शिवादेवीनंद ।
चिदानंद मनमें सदा, तुमे आवो हो प्रभु नाणदिणंद, पर०॥५॥

श्री नेमिनाथ स्तवन

(तर्ज जिनमत का डंका०)

आनंद का डंका दुनिया में, बजवा दिया नेमि लालेने ।
ब्रह्मचर्य पराक्रम यादव में, बतला दिया नेमि लाले ने ॥
प्रभु आयुधशाला में जा करके, पंचायन शंख को पूर दिया ।
सुनते ही गिरधर आन खडे, बजवा दिया नेमि० ॥आ०॥१॥
श्री नेमिके बलको देखन को, श्रीकृष्णने लंबा हाथ किया ।
गोपीयन के सन्मुख गिरिधर को, शर्मा दिया नेमि० ।आ०।२॥
फिर जान चढी आडंबर से, तोरण से रथको फेर दिया ०।
पशुअन के कारण राजुल को, छटका दिया नेमि०। आ०॥३॥
दीक्षा का अवसर जान प्रभु, निज मात पितादिक को समझाया ।
एक वर्ष लगे दान कांचन का, दिलवा दिया नेमि०।आ०॥४॥
एक सहस्र पुरुष संग संजम ले, सर्वज्ञ पद को प्राप्त किया ।
कर्मों का लश्कर जीत लिया, शिवपद का नेमि०।आ० ॥५॥
पृथ्वी तल को पावन कर प्रभु, शाश्वत सुख को प्राप्त किया ।
पर तिरिया परधन नहीं लेना, फर्मा दिया नेमि०॥
आनंद का०॥६॥

श्री नेमिनाथस्तवन

हां नेम मने लागे प्यारो, शाम वरण मोहनगारो रे
नेम मने० आंकणी ।

समुद्रविजय शिवादेवी को जायो,
नगरी द्वारिका जनम लहायो ।
तीन लोक में हुओ उजियारो रे, नेम मने० ॥१॥
जान लइ प्रभु परणवा जावे,
उग्रसेन के घर जब आवे ।
सुणी पुकार पशु रथ पाछो फिरावे रे, नेम० ॥२॥
बालपने से हुए ब्रह्मचारी,
तजी रूपाली राजुल नारी ।
संसार मोहनी दूर निवारी रे, नेम० ॥३॥
भरी जुवानी संजम लीनो,
शुक्ल ध्यान सहसावन कीनो ।
केवलज्ञान जहां प्रभु लीनो रे, नेम० ॥४॥
मोक्ष गये गिरनारे स्वामी,
जन्म मरण से हुए विसरामी ।
नमे सौभाग्यविजय शिरनामी रे, नेम० ॥५॥

श्री नेमिनाथस्तवन

(धन धन वो ज़ग में नरनार यह चाल)

नमुं नेमनाथ महाराज, सांवरीया प्रीत लगाने वाले,
आंकणी।

तेरी मूरत मोहनगार, मेरी अखियनको सुखकार।
तुम दर्श कियां आनंद अपार, प्रभु मोसे प्रीत लगाने वाले,
नमुं नेमनाथ० ॥१॥
किया पशुअनका उपकार, मुज पर क्युं न लगार।
तुम दास करो उद्धार, प्रभु भवपार कराने वाले, नमुं० ॥२॥
कर सहसावनमें ध्यान, दिन पंचावन परमाण।
लियो केवल शुभ ज्ञान, नाथ गिरनार दिपाने वाले, नमु० ॥३॥
बावीसमा जिनचंद, प्रभु शिवादेवी के है नंद,
सौभाग्यविजय सब फंद हरो, हम नाथ कहाने वाले,
नमुं नेमनाथ० ॥४॥

नेमि राजुल पद

राजुल पुकारे नेम, पिया ऐसी क्या करी।
मुझे छोडके चले, चूक हम से क्या परी॥
राजुल पुकार० ॥१॥
हुई आश की निरास, उदासीनता धरी।

प्यारा बस नहीं हमेरा, प्रीतम पीडमें परी ॥
राजुल पुकारे० ॥२॥
हम से रह्यो न जाय, प्रीतम तुम बिना घरी ।
संग लीजिये दयाल, दया दिल में धरी ॥
राजुल पुकारे० ॥३॥
निशदिन तुमारा नाम, लेते ज्ञान की झरी ॥
राजुल पुकारे० ॥४॥

श्री नेमिनाथ गायन

मुझे चपलासी चमक बताय गयो रे, मुझे ।
महेल चढी जोइ हियो हरखायो,
नैना को नेह लगाय गयो रे, मुझे० ॥१॥
कोड छप्पन जादव संग लायो,
नहीं पूरो खातो खताय गयो रे, मुझे चपला० ॥२॥
समुद्रविजय शिवादेवीनंदन,
निरखी पशु पछताय गयो रे । मुझे चपला० ॥३॥
तोरणसे फिर गिरनारी गयो,
संजम दिलमें रचाय गयो रे । मुझे चपला० ॥४॥
नेम राजुल मिली कर्म खपायो,
अचल अखंड पताय गयो रे । मुझे चपलासी० ॥५॥

श्री पार्श्वनाथजिनस्तवन

राता जेवा फूलडांने शामल जेवो रंग ।
आज तारी आंगी नो कांइ रूडो बन्यो छे रंग,
प्यारा पासजी हो लाल, दीनदयाल मुने नयणे निहाल ॥
जोगी बाडे जागतो ने मातो धिंगणमल्ल ।
शामलो सोहामणो कांइ, जीत्या आठे मल्ल । प्या० ॥२॥
तूं छे मारो साहिबो ने, हुं छुं तारो दास ।
आश पूरो दासनी कांइ सांभली अरदास । प्या० ॥३॥
देव सघला दीठा तेमां, एक तूं अवल्ल ।
लाखेणो छे लटको ताहरो देखी रीझे दिल्ल । प्या० ॥४॥
कोई नमे पीरने ने, कोइ नमे राम ।
उदयरत्न कहे प्रभु, मारे तुमसुं काम । प्या० ॥५॥

श्री पार्श्वनाथस्तवन

पारस तोरी निरखण दो असवारी, अरजी सुणो प्रभु म्हारी ॥ पारस ०॥आं०॥

काशी देश वाणारसी नयरी, दिन दशमी जयकारी ।
वामाराणी कूखथी प्रभुजी, जन्म लियो सुखकारी । पारस ०।१॥

छप्पन दिक्कुमरी हुलराया, हिये हर्ष अतिभारी ।
चोसठ इंद्र करे वली महोच्छव, करवा भवजल पारी ॥
पारस ०॥२॥

एक कोड साठ लाख सोहे छे, कलस महामनुहारी ।
बारे जोजन पहोला पेटे, पचीस जोजन उंचा धारी ॥
पारस० ॥३॥

नीचा उंचा जोजन पहोला, निर्मल भरीयो वारी ।
फूल चंगेरी बावना चंदन, केशर ने घनसारी ॥पारस० ॥४॥

इणि परे ओछव सुरपति कीनो, जोइजो सूत्र संभारी ।
सुरगिरि ऊपर पांडुकवन में, पांडुशिला अतिप्यारी ॥
पारस० ॥५॥

अश्वसेनराय ओछव कीनो, दान दियो दिल धारी ।
शहेरनी श्रेष्ठता जोवे जुक्ते, बेठा गोखमझारी ॥ पा० ॥६॥

लोक सहु पूजापो लइने, कमठकुं पूजनकारी ।
प्रभुजी पधार्या देखण काजे, नाग जले तिण वारी ॥पा० ॥७॥

काष्ठ फडावी नाग निकाल्यो, संभलाव्यो मंत्र भारी ।
समकित लेइने सुरपति हुवो, धरणेन्द्र एकावतारी । पा० ॥८॥

उगणीसे इगतालीस वर्षे, पोष दशम रढीयाली ।
आहोर नगरमें ओछव कीनो, संघ सकल बलिहारी ॥पा० ॥९॥

सुंदरमूर्ति प्रभुनी बिराजे, भविजनकुं सुखकारी ।
कीर्तिचंद्रसम शोभे जगमें केशरविजय जयकारी ॥ पा० ॥१०॥

पंचासरा पार्श्वनाथ स्तवन

(प्रथम जिनेश्वर प्रणमिये—यह चाल)

परमातम परमेश्वरु जगदीश्वर जिनराज ।
जगबंधव जगभाण बलिहारी तुमतणी, ।
भवजलधिमां रे जहाज ॥ परमा० ॥१॥

तारक वारक मोहनो, धारक निजगुण ऋद्धि ।
अतिशयवंत भदंत रुपाली शिववधू;
परणी लही निजसिद्धि ॥परमा० ॥२॥

ज्ञान दर्शन अनंत छे, वली तुज चरण अनंत ।
एम दानादि अनंत क्षायिक भावे थया,
गुण ते अनंता अनंत ॥परमा० ॥३॥

बत्तीस वरण समाय छे, एकज श्लोकमझार ।
एक वर्ण प्रभु तुज न माये जगतमां,
केम करी थुणिये उदार ॥परमा ॥४॥

तुज गुण कोण गणी शके जो पण केवल होय ।
आविर्भावे तुज सयल गुण माहरे,
प्रच्छन्नभावथी जोय ॥ परमा० ॥५॥

श्री पंचासरा पासजी, अरज करुं एक तुज ।
आविर्भावथी थाय दयाल कृपानिधि,
करुणा कीजे जी मुज ॥परमा० ॥६॥

श्री जिन उत्तम ताहरी, आशा अधिक महाराज ।
पद्मविजय कहे एम लहुं शिवनगरीनुं,
अक्षय अविचलराज ।।परमा० ।।७।।

पार्श्वनाथजिनस्तवन

(राग काफी)

जिनराज नाम तेरा, राखुं हमारे घटमें ।
जागे प्रभाव मेरा, अज्ञान का अंधेरा ।
भाग्या भया उजारा, राखुं हमारे० ।।१।।
मुद्रा प्रमोद कारी, प्रभु पासजी तिहारी ।
मोहे लगत है प्यारी, राखुं हमारे० ।।२।।
सूरत तेरी रागे, देख्यां विभाव त्यागे ।
अध्यातम रूप जागे, राखुं हमारे० ।।३।।
त्रिलोकी नाथ तुम ही, मैं हूं अनाथ गुनहीं ।
करिये सनाथ हम ही, राखुं हमारे० ।।४।।
जिनजी तिहारी साखे, जिनहर्षसूरि भाखे ।
दिलमें हि याही राखे, राखुं हमारे घट में ।
जिनराज० ।।५।।

नवकोडा पार्श्वनाथ स्तवन

(माढ राग)

नवकोडा स्वामी अंतरजामी तारो दीनदयाल ॥
अश्वसेन जी के लाडला रे, वामादेवी माय ।
नगर बनारसी जन्म लियो प्रभु, नील वरण छे कायरे ॥
नवकोडा० ॥१॥
पार्श्वनाथप्रभाव जगतमें, पूजे सुर नर इन्द ।
श्याम मूरत सुंदर जिनजी को, मुखडो छे पूनमचंद रे ॥
नवकोडा० ॥२॥
अरज सुणीजो दर्शन दीजो, मुजरो लीजो मान ।
जन्म मरण दुःख टालो जिनजी, अरज करे छे कान रे ॥
नवकोडा० ॥३॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

(नाथ कैसे गजको बंध छुडायो–यह चाल)

नाथ मेरी वीनतडी अवधारो,
मोए जैसे बने ऐसे तारो, नाथ मेरी० । आं ।
अश्वसेन वामाजीको नंदन, नागकुं तारणहारो । केवल
ज्ञान लही जगभूषण, शिखर समेत शणगारो, नाथ मेरी० ॥१॥
सुर नर नरक निगोद तणा दुख, कहेतां न आवे पारो ।

अनंतकाल मोहे भटकत वीत्यो, तुमसे आन पुकारो
नाथ० ॥२॥

ऐसा कोण दयाल जगतमें, जासे कहिये तारो। अनेक जीव भवजलसे तारे, मुजकुं क्युं न संभारो। नाथ० ॥३॥

मिथ्यामत तम दूर करन कुं, सहस्रकिरण अवतारो। समकित शुद्ध ज्ञान निज दे के भवजल पार उतारो। नाथ० ॥४॥

वीस अधिक ओगणीस सातमें, माघ शुकल सोमवारो। बनारसीमें ओछव होवे, श्री संघ जयजयकारो। नाथ० ॥५॥

रामघाट प्रभु पास बिराजे, समवसरण मनोहारो। हाथ जोड के अरज करत है, मोहन दास तुमारो ॥ नाथ मेरी वीनतडी अवधारो० ॥६॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

(ढुंढ फिरा जग सारा० यह चाल)

पार्श्वनाथ सुखकारा सुखकारा, जिनपति पूजो प्रेमसे। आं०।
ज्ञान अनंतके है प्रभु धारी, कर्म रोग सब दूर निवारी,
सूरज परे तेज धारा तेज धारा, जिनपति० ॥१॥
भवसमुद्रमें पडते बचावे, मोक्षमारग प्रभुजी दिखलावे,
करे जगत उपगारा उपगारा, जिनपति० ॥२॥
कमठ हठीको दूर निवारा, जलती आगसे सर्प उगारा
अहो दयाके प्रभु धारा प्रभु धारा, जिनपति० ॥३॥

पार्श्वयक्षसे पूजित पाया, पद्मावती–धरणेंद्रको भाया।
वंदो ऐसे प्रभु प्यारा प्रभु प्यारा, जिनपति० ॥४॥
एक ही चित्ते नाथ पूजनसे, वार वार फिर ध्यान करनसे,
होवे करम छुटकारा छुटकारा, जिनपति० ॥५॥
महाप्रभावी है इस जुगमें, पूरे मनोरथ सारे छिनमें,
वंदे सौभाग्य दिल धारा दिल धारा, जि० ॥६॥

श्रीमहावीर जिन स्तवन

(राग कड़खेकी)

तार हो तार प्रभु मुज सेवक भणी,
जगतमां एटलुं सुजस लीजे।
दास अवगुण भर्यो जाणी पोता तणो,
दयानिधि दीन पर दया कीजे। तारहो० ॥१॥
राग–द्वेषे भर्यो मोह वैरी नड्यो,
लोकनी रीतिमां घणुंये रातो।
क्रोधवश धमधम्यो शुद्ध गुण नवि रम्यो,
भम्यो भवमांहि हुं विषयमातो। तार० ॥२॥
आदर्युं आचरण लोकउपचारथी,
शास्त्र अभ्यास पण कांइ कीधो।
शुद्ध श्रद्धान वली आत्म अवलंबन विनु,
तेहवो कार्य तिणे को न सीधो। तार० ॥३॥

स्वामीदरिसण समो निमित्त लही निर्मलो,
जो उपादान ए शुचि न थाशे ।
दोष को वस्तुनो अथवा उद्यम तणो,
स्वामीसेवा सही निकट लाशे । तार० ॥४॥
स्वामीगुण ओलखी स्वामिने जे भजे,
दरिसणशुद्धता तेह पामे ।
ज्ञान चारित्र तप वीर्य उल्लासथी,
कर्म झीपी वसे मुक्ति धामे । तार हो० ॥५॥
जगतवत्सल महावीर जिनवर सुणी,
चित्त प्रभुचरणने शरण वासो ।
तारजो बापजी बिरुद निज राखवा,
दासनी सेवना रखे जोशो । तार० ॥६॥
वीनती मानजो शक्ति ए आपजो,
भावस्याद्वार्दता शुद्ध भासे ।
साध्य साधक दशा सिद्धता अनुभवी,
देवचंद्र विमल प्रभुता प्रकाशे । तार० ॥७॥

श्रीमहावीरस्तवन

(आवो आवो पासजी० यह देशी)

वाला प्रभु वीरजी सुखकारा रे, मारा प्राणथकी छो प्यारा ।
वाला० आं० ।

तात सिद्धारथ राया रे, माता त्रिशलाना प्रभु जाया रे।
कांचनवरणी छे जस काया। वाला० ॥१॥
बालपणाथी छो बलधारी रे, परण्या यशोदा नारी रे।
रह्या तीस वरस घरबारी। वाला० ॥२॥
लेइ संजम वनमां वसिया रे, बार वरस लगे तप रसियारे,
पाम्या केवल भवदुख खसिया। वाला० ॥ प्रभु० ॥३॥
प्रभु तार्या मेघकुमारा रे, कर्या चंडकोशिक उद्धारा रे।
तारो मुजने प्रभु हितकारा। वाला० ॥४॥
शरणे आव्यो प्रभु ताहरे रे, चरणकमल वंदूं तुमारे रे,
सौभाग्यविजय दिल प्यारे। वाला० ॥ प्रभु० ॥५॥

श्रीमहावीरस्तवन

मने तो मलियो मारो नाथ, पूरवना पुण्य प्रभावे रे।
मने तो मलियो० ॥
प्रीति अनादिनी, भूली गया छो स्वामी।
हवे नही छोडुं तारो साथ, नही छोडु कदापि रे।
मने तो मलियो० ॥१॥
काल अनादिनो, हुं रखडुं छुं प्रभु जी,
भ्रमण करुं छुं गति चार, दुखबहु तेथी पामुं रे।
मने तो मलियो० ॥२॥
हवे तुमे मलिया स्वामी, दुःख अमारुं कापो।

आपो ने शिवरमणीनो साथ, आपो प्रीत करीने रे ।
मने तो मलियो० ॥३॥

सुलसादिक नवने आपे, जिनपद दीधुं व्हाला ।
चंदनबालानुं काप्युं दुख, तेम अमारुं कापो रे ।
मने तो मलियो० ॥४॥

त्रिशलाना नंदन जिनजी, वीनति अवधारो व्हाला ।
प्रीतेथी खेंची ल्योने हाथ, नाथ मैं तमने धार्या रे ।
मने तो मलियो० ॥५॥

शामजी कहे छे व्हाला, वीर प्रभुना गुणनी राशि ।
गावाथी तरिये आ संसार, वात छे तेहज साची रे ।
मने तो मलियो० ॥६॥

श्रीमहावीरस्तवन

वाला वीर जिनेश्वर जन्म–जरा निवारजो रे,
प्यारा प्रभुजी प्रीते मुज शिर पर कर थापजो रे वा० ॥

तीन रतन आपो प्रभु मुजने,
खोट खजाने को नही तुजने ।
अरजी उर धरी कर्मकटक संहारजो रे । वाला० ॥१॥

कुमति डाकण वलगी मुजने,
नमी नमी वीनवुं हे प्रभु तुजने ।
ए दुखथी दूर करवा व्हेला आवजो रे । वाला० ॥२॥

आ अटवीमां भूलो पडियो,
तूं साहिब साचो मने मलियो ।
सेवकने शिवपुरनी सडक देखाडजो रे । वाला० ॥३॥
अरजी उचरीने जिन आगे,
महावीरमंडल प्रभुपद मागे ।
महेर करी महाराज प्राण ने तारजो रे ।
वाला वीरजिनेश्वर० ॥४॥

श्रीमहावीरस्तवन

(राग–इंद्रसभाका)

महावीर महावीर मैं जपुं, और नित्य करूं प्रणाम ।
प्रभुजी तुमारुं मुखडुं देखी, सफल हुआ सब काम ॥१॥
तेरे अंग पर पुष्प चढावुं, भात भात के जात ।
गुलाब चंपेली जासुद डमरो, मालती मोगर साथ ॥२॥
हीरे जडेलो मस्तके मुगट, कानमें कुंडल सार ।
बांहे बाजुबंद बेरखा, ओर गले मोतिनको हार ॥३॥
ऐसी अंगी महावीर प्रभुकी, दर्शन करे नरनार ।
प्रभु तोरा चरणकमल पसायसे, भविजन पामे भवपार ।
महावीर० ॥४॥

श्री लघुआदिजैनगोष्ठी, गावे गीत रसाल ।
सेवक पर करुणा करी, प्रभु देजो सुख विशाल ।
महावीर० ॥५॥

श्रीमहावीरजिनस्तवन

(राग-कानूडा तारी कामण०)

वीरजी तारी पावनकरनारी, मनमां आंखलडी लागी।
मीठी वली सेवकमनवशकरनारी, मनमां० ॥
भवभय हरनारी तुम सुणवा, वाणी सुखकारी।
हूं चाहूं हूं चाहूं जिनवर थइने हुंसियारी, मनमां ॥१॥
दर्शन नर नारी तुम करवा, आवे दिल धारी।
तूं दाता तूं दाता शिवसुख थइने शिवचारी, मनमां०॥२॥
अघहर उपकारी प्रभु तुम छो, आतमहितकारी।
हूं मागुं हूं मागुं सुखकर वल्लभ भव पारी,
मनमां आंखलडी लागी० ॥३॥

श्री चौवीसजिनस्तवन

ऊठ प्रभाते आदिजिननुं, चेतन समरण कीजे रे। दिन दिन आनंद मंगल वाधे, जगमां जस बहु लीजे रे॥ऊठ०॥१॥

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमतिनी सेवा कीजे रे। पद्म सुपार्श्व प्रभुता आपो, चंद्रप्रभु सुख दीजे रे॥ ऊठ० ॥२॥

सुविधि शीतल श्रेयांस ध्यावो, वासुपूज्य विख्याता रे। विमल अनंत धर्मजिन शांति, अनुभव सुखना दाता रे॥ ऊठ० ॥३॥

कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्रत, नमि नेमि जयकारी रे। पार्श्व वीरप्रभु समरण करतां, आपो शिववधू सारी रे॥ ऊठ० ॥४॥

पुंडरीक पमुहा मुनिवर वंदूं, गुणवंता ऋषिराज रे। सोल सतीनां समरण करतां, सीझे वंछित काज रे॥ ऊठ० ॥५॥

थावर जंगम तीरथ जगमें, जे वंदे नरनारी रे। कीर्ति-कमला ते भवि पामे, मोक्षतणा अधिकारी रे ऊठ० ॥६॥

श्री सीमंधरजिनस्तवन

श्रीसीमंधर साहिबा, हुं किम आवुं तुम पास हो मुणिंद। दूर विचे अंतर घणो, मुने मिलवानी घणी आश हो मुणिंद॥ श्रीसीमंधर० ॥१॥

हुं इण भरतने छेहडे, तुमे प्रभु विदेहमझार हो मुणिंद। डुंगर वली नदियांघणी, तिहां कोश तो केइ हजार हो मुणिंद। श्रीसी० ॥२॥

प्रभुजी देता होशो देशना, कांइ सांभले जिहांना लोग हो मुणिंद। धन्य ते गाम नगर पुरी, ज्यां वर्ते पुन्यसंयोग हो मुणिंद। श्रीसी० ॥३॥

धन्य ते श्रावक श्राविका, कांइ निरखे प्रभु मुखचंद हो मुणिंद। मुज़ मनोरथ मनतणा, कांइ फलशे भाग्य अमंद हो मुणिंद। श्रीसी० ॥४॥

वरतारो वरती रह्यो, कांइ जोशी मांडयुं लगन्न हो मुणिंद। कहे सीमंधर कद भेटशुं, मुज मन लागी लगन्न हो मुणींद। श्रीसी० ॥५॥

पिण जोशी नही एहवो, कांइ भांजे मननी भ्रांत हो मुणींद। णइ भव तात कृपा करी, मुज आण मिलावो एकांत हो मुणींद। श्रीसी० ॥६॥

वीतराग भावे सदा तुमे, वर्तो छो जगनाथ हो मुणींद। मैं जाण्युं तुम केडथी, हवे हुं थयो स्वामी सनाथ हो मुणींद श्रीसी० ॥७॥

पुक्खलवइविजया वसे, कांइ नयरी पुंडरिगिणी स्वाम हो मुणींद। सत्यकीनंदन वंदना, कांइ अवधारो गुणना धाम हो मुणींद। श्रीसी० ॥८॥

राय श्रेयांसकुलचंदलो, राणी रुकमणीकेरो कंत हो मुणींद। वाचक रामविजय कहे, तुम ध्याने हुवो मुज चित्त हो मुणींद। श्रीसी० ॥९॥

श्रीयुगमंधर जिनस्तवन

काया पामी अतिकूडी, पांख नहीं आवुं ऊडी, लब्धि नही कोय रूडी रे। श्रीयुगमंधरने कहेजो, दधिसुत वीनतडी सुणजो रे। श्री युग० ॥१॥

तुम सेवामांहे सुरकोडी, ते इहां आवे इक दोडी, आश फले पातक मोडी रे। श्री० ॥२॥

दुष्षम समयमां इण भरते, अतिशयनाणी कोइ नवि वरते, कहीये कहो कोण सांभलते रे। श्री० ॥३॥

श्रवणो सुखिया तुम नामे, नयणा दर्शन नवि पामे, एतो झगडाने ठामे रे। श्री० ॥४॥

चार आंगल अंतर रहेवुं, शोकलडीनी परे दुख सहेवुं, प्रभु विना कोण आगल कहेवुं रे। श्री० ॥५॥

महोटा महेर करी आपे, बेहुनो तोल करी थापे, सज्जन जस जगमां व्यापे रे। श्री० ॥६॥

बेहुनो एकमतो थावे, केवल नाणजुगल पावे, तो सवि वात बनी आवे रे। श्री० ॥७॥

गजलांछन गजगतिगामी, विचरे विप्राविजय स्वामी, नयरी विजया गुणधामी रे। श्री० ॥८॥

मात सुताराये जायो, दृढरथनरपतिकुल आयो, पंडित जिनविजये गायो रे। श्री० ॥९॥

श्री चंद्राननजिनस्तवन

चंद्रानन जिन, सांभलीये अरदास रे।
मुज सेवक भणी, छे प्रभुनो विसासो रे। चंद्रा० ॥१॥
भरत क्षेत्र मानवपणो रे, लाधो दुष्षमकाल।
जिन पूरवधर विरहथी रे, दुलहो साधन चालो रे।
चंद्रानन० ॥२॥

द्रव्यक्रियारुचि जीवडा रे, भावधरमरुचिहीन ।
उपदेशक पण तेहवा रे, शुं करे जीव नवीन रे । चं ॥३॥
तत्त्वागम जाणग तजी रे, बहु जन सम्मत जेह ।
मूढ हठी जन आदर्यो रे, सुगुरु कहावे तेह रे । चं० ॥४॥
आणा साध्य विना क्रिया रे, लोके मान्यो रे धर्म ।
दंसण नाण चारित्रनो रे, मूल न जाण्यो मर्म रे। चं० ॥५॥
गच्छकदाग्रह साचवे रे, माने धर्म प्रसिद्ध ।
आतमगुण अकषायता रे, धर्म न जाणे शुद्ध रे। चं० ॥६॥
तत्त्वरसिक जन थोडला रे, बहुलो जनसंवाद ।
जाणो छो जिनराजजी रे, सघलो एह विनोद रे । चं० ॥७॥
नाथचरणवंदनतणो रे, मनमां घणो उमंग ।
पुण्य विना केम पामिये रे, प्रभु सेवननो संग रे। चं० ॥८॥
जगतारक प्रभु वंदिये रे, महाविदेहमझार ।
वस्तुधर्म स्याद्वादता रे, सुणि करिये निरधार रे । चं० ॥९॥
तुज करुणा सहु उपरे रे, सरखी छे महाराय ।
पण अविराधक जीवने रे, कारण सफलो पाय रे।चं० ॥१०॥
एहवा पण जग जीवने रे, देव भगति आधार ।
प्रभु समरण थी पामिये रे, देवचंद्र पद सार रे। चं० ॥११॥

श्री आदिशांतिनाथजिनस्तवन

मैं अरज करूं शिरनामी, प्रभु कर जोड जोड जोड ॥
मैं भववन में जा फसिया, वहां काल अनंता वसिया ।
मुझे लोभ सर्प आ डसिया, अखियां खोल खोल खोल ।
मैं अरज० ॥१॥

क्रोधानलने अतिबाला, मेरा अंग पड गया काला ।
मुझे पिला दे प्रेमरस प्याला, अमृत घोल घोल घोल ।
मैं अरज ० ॥२॥

मान अजगर मुझ को खावे, मेरा प्राण पलक में जावे ।
जडी जीवन कौन पिलावे, वनमें घोल घोल घोल ।
मैं अरज० ॥३॥

तुम नाम मंत्र से साजा, कछु हो गया प्रभु ताजा ।
कठोरगाम महाराजा, आया डोल डोल डोल ।
मैं अरज० ॥४॥

श्री आदि शांतिजिन स्वामी, हंसो मागे शिरनामी ।
गुण मुक्ताफल दो धामी, प्रभु विन मोल मोल मोल ।
मैं अरज० ॥५॥

सामान्य जिन स्तवन

(राग कवाली)

गतास्ते दुःखमयदिवसा, गता सा दीनता कष्टा ।
समाप्ताऽनादिभवयात्रा, गतोऽस्मि स्वं पदं कुशली ॥१॥
अहो संसारकान्तारे, मयाऽद्य भ्राम्यताऽदर्शि ।
जगद्धितकारिसद्बुध्धि,-र्जिनाख्यः सार्थपतिरेषः ॥२॥
अलोक्याऽऽलोकनाऽपूतं, ममेदं दृष्टियुगमद्य ।
पवित्रीभावमापन्नं, जिनेश्वर दर्शनाद् भवतः ॥३॥
त्वदीया भक्तिरल्पापि, विधत्ते पातकं विफलम् ।
यथा वह्नेर्लवो दारु,-च्चयं क्षणमात्रतो दहति ॥४॥
भव दाताऽथवा कृपण,-स्तथापि मे त्वमेवासि ।
तवाग्रे सत्यमिति भाषे, कदाचिन्नैव याचेऽन्यम् ॥५॥
न मेऽर्थो वैबुधैर्लाभै,-र्न वा भूपालभोगाद्यैः ।
इदं तु याच्यते भगवन् ! वसेर्मम मानसे सततम् ॥६॥
यदि त्वन्नामदीपोऽयं, मदीयं द्योतयेद् हृदयम् ।
तदा निजरूपसंसिध्धे,-र्भवेत्कल्याणपदगमनम् ॥७॥

सामान्य जिन स्तवन

अब तो प्रभुजी का लेलो शरन, लेलो शरन
प्यारे लेलो शरन । अबतो ०॥
आरज देश उत्तम कुल जाति,

मानव भव अब पायो रतन । अबतो ० ॥१॥
द्रव्य भाव से पूजा प्रभुकी,
महानिशीथे जिनवरवचन । अबतो ० ॥२॥
गृही को पूजा दोनों ही सुंदर,
भाव पूजासे साधु लगन । अबतो ० ॥३॥
अष्ट द्रव्य से द्रव्य पूजा है,
भाव पूजा करो प्रभु नमन । अब तो ० ॥४॥
जिनप्रतिमा जिन सरखी मानो,
आतम वल्लभ तारन तरन ।
अब तो प्रभुजी का ० ॥५॥

श्री परमात्मस्तवन

सकल समता सुरलतानो, तूंही अनोपम कंद रे ।
तूंही कृपारस कनक कुंभो, तूंही जिणंद मुणिंद रे ॥१॥
प्रभु तूंही तूंही तूंही तूंही तूंही करता ध्यान रे ।
तुज स्वरूपी जे थया, तेणे लह्यं ताहरुं तान रे । प्रभु० ॥२॥
तूंही अलगो भव थकी पण, भविक ताहरे नाम रे ।
पार भवनो तेह पामे, एह अचरिज ठाम रे । प्रभु० ॥३॥
जन्म पावन आज माहरो, निरखियो तुज नूर रे ।
भवो भव अनुमोदना जी हुओ आप हजूर रे । प्रभु० ॥४॥

एह माहरे अखयं आतम असंख्यात प्रदेश रे।
ताहरा गुण जे अनंता किम करुं तास निवेश रे। प्रभु० ॥५॥
एक एक प्रदेश ताहरे गुण अनंतनो वास रे।
एम करी तुज सहज मीलत हुए ज्ञान प्रकाश रे। प्रभु ॥६॥
ध्यान ध्याता ध्येय एके एकीभाव होय एम रे।
एम करतां सेव्य सेवक भाव होए क्षेम रे। प्रभु० ॥७॥
शुध्ध सेवा ताहरी जे होय अचल स्वभाव रे।
ज्ञानविमल सुरींद प्रभुता, होय सुजस जमाव रे। प्रभु० ॥८॥

जिन-स्तवन

(तर्ज-हे प्रभु आनंद दाता०)

छोड जिनवर को, दुनीसे दिल लगा कर क्या करूं।
हाथ हीरा मिल गया, कंकर को ले कर क्या करूं ॥आं०॥
भवार्णव के ताप से, जलता फिरूं कइ कालसे।
कल्पछाया मिल गइ, छाते को सिर पर क्या धरूं ॥१॥
मोह अंधेरी रैन में, चलते ही खाई ठोकरें।
ज्ञान दिनकर देख फिर, बत्ती जलाकर क्या करूं ॥२॥
काल अनादि कर्म के हूं, रोग से पीडित हुआ।
धर्म बूंटी मिल गई, वैद्यों से मिल कर क्या करूं ॥३॥
देव देवी सेव से, जलता रहा संसार में।
मोक्ष दाता अब मिला, पर की पूजा कर क्या करूं ॥४॥

गा रहा हूं प्रेम से, प्रभु गुण प्रभु के सामने।
'प्राण' ही होवे खुशी, औरों को रिझा कर क्या करूं ॥५॥
छोड जिनवर को०॥

जिन–स्तवन

है जगत में नाम ये रोशन, सदा तेरा प्रभु।
तारते उसको सदा जो, ले शरण तेरा प्रभु ॥
लाख चोरासी में घेरा, कर्मोंने मारा मुझे।
ले बचा अब तो सहारा, है मुझे तेरा प्रभु। है० ॥१॥
सेंकडों को तारते हो, मेहेर की करके नजर।
क्यों नहीं तारा मुझे है, क्या गुना मेरा प्रभु ॥
है जगत में० ॥२॥
हाल जो तन का हुआ है, आप विन किसको कहूं।
मोहराजाने मुझे, चारों तरफ घेरा प्रभु ॥
है जगत में० ॥३॥
आप से हरदम तिलक की, तो यही अरदास है।
आप चरणों में रहे, मेरा सदा डेरा प्रभु ॥
है जगत में० ॥४॥

जैनधर्मकी महत्ता पर स्तवन

(तर्ज—कमली वाले ने)

सब धर्मों में यह आला है,
आला है जैन निराला है।
सब चुन चुन कर लेय रहे,
तत्त्वों का यहीं मसाला है ॥आं०॥
ऐसे हैं जिनवर देव जिन्हें,
नहीं पक्षपात से चारा है।
आठों कर्मों को दूर किया,
शिवपुर में घर कर डाला है ॥सब०॥१॥
गुरु जैनी हैं सत्यवादी ये,
नहीं पाप पथिक या रागी हैं।
कंचन कामिनी को त्याग सदा,
महा पांच व्रतों को पाला है ॥सब०॥२॥
नहीं दुर्गति में गिरने देवे,
सद् रस्ता धर्म बताता यह।
सम्यक् दर्शन और ज्ञान क्रिया से,
'धीरज' जैन उजाला है ॥सब०॥३॥

प्रभु पूजा गायन

भर लावो रे कटोरा केसर का,
नव अंग पूजो परमेश्वर का। भर०॥
असल कस्मीरी केसर मंगाया,
कीच बनाया कीस्तूरी का। भर० ॥१॥
सती द्रौपदी चंदण चर्च्यो,
ज्ञान सुणो सूत्र ज्ञाता का। भर० ॥२॥
नर नारी मिल मिल के पूजो,
ज्युं सुख पावो मुक्ति का। भर० ॥३॥
आज आनंद मोए हर्ष वधावो,
ज्ञान चाकर प्रभु चरणों का।
भर लावो रे कटोरा केसर का ॥४॥

प्रभु भक्ति उपदेश पद

ध्यान में जिन के सदा, लयलीन होना चाहिये।
ज्ञान गुन ज्ञान शैली, परवीन होना चाहिये। ध्यान०॥
राह संयम की पकड, कल्याण की सूरत मिले।
काल गफलत में सज्जन, नाहक न खोना चाहिये।
ध्यान में० ॥१॥
धर्म खेती किया चाहे, जमीन कुं साफ रख।

बीज समकित का हृदय में, रुचि से बोना चाहिये ।
ध्यान में० ॥२॥

कामना मन की सफल, आनंद से पूरन भई ।
अब तो समतासेज ऊपर, सुख से सोना चाहिये ।
ध्यान में० ॥३॥

दास चूनी अपने घर, आनंद से फुलेगा कल्प ।
भवस्थिति पकने से, मुगताफल सही लेना चाहिये ।
ध्यान में० ॥४॥

प्रभु प्रार्थना पद

साहेब तेरी बंदगी मैं भूलता नहीं,
भूलता नहीं मैं बिसरता नहीं । साहेब०॥
अष्टादश दोष रहित देव है सही,
अन्य देव शंकरादि मानता नहीं । साहेब० ॥१॥
मुनि है निग्रंथ सद्गुरु हैं सही,
अन्य गुरु वेशधारी मानता नहीं । साहेब० ॥२॥
दान शीयल तप भाव धरम है सही,
अन्य धर्म विषय को मैं मानता नहीं । साहेब० ॥३॥
मुक्ति रूप सिद्धि सुख वांछता सही,
संसार दुख जाल रूप जाचता नहीं । सा० ॥४॥
कहे मुनि कीर्तिवान तारिये सही,
आवागमन भवभ्रमण का मेटिये सही । साहेब० ॥५॥

प्रभु गुण गायन

सुसंगी सुसंगी सुसंगी प्रभु मिल गये,
सफल भये मोरे नैन। सुसंगी० ॥१॥
एक तो मैं दरिसन, मैं दरिसन, मैं दरिसन प्यासी,
दरिसन विना नहीं चेन । सुसंगी प्रभु० ॥२॥
एक तो मैं पापी, मैं पापी, मैं पापी हूं प्राणी ।
तारण वाले भगवान् । सुसंगी० ॥३॥
एक तो मैं माया, मैं माया, मैं माया का लोभी,
झूठी माया मेरी जान । सुसंगी प्रभु० ॥४॥
एक तो मैं आया, मैं आया, मैं आया तोरे चरणे,
जैनमंडली गुण गाय । सुसंगी प्रभु मिल गये ॥५॥

जिनप्रतिमास्थापनास्तवन

श्री जिनप्रतिमा हो जिनसरखी कही, दीठां आणंद अंग ।
समकित बिगडे हो शंका कीजंता, जिम अमृत विष संग
श्री० ॥१॥

आज नहीं कोइ तीर्थंकर इहां, नही कोइ अतिशयवंत । जिन-
प्रतिमानो हो एक आधार छे, आपे मुक्ति एकंत । श्री० ॥२॥
सूत्र सिद्धांत हो तर्क व्याकरण भण्या, पंडित पण कहे लोक ।

जिनप्रतिमाने हो जे माने नहीं, तेहनो सघलो फोक ।
श्री० ॥३॥

प्रतिमाने आगे हो नमुत्थुणं कहे, पूजा सत्तर प्रकार ।
फल पिण बोल्यां हो हित सुख मोक्षनां, द्रौपदीने अधिकार ।
श्री० ॥४॥

रायपसेणी हो ज्ञाता भगवती, जीवाभिगमादिमांझ ।
ए सूत्र माने हो प्रतिमा माने नही, माहरी माय ने वांझ ।
श्री० ॥५॥

साधुने बोल्यो हो भावस्तव भलो, श्रावक ने द्रव्य भाव ।
ए बेहु करणी हो करतां निस्तरे, श्रीजिनप्रतिमा प्रभाव ।
श्री० ॥६॥

पारसनाथ हो तुज प्रसादथी, सद्दहणा मुज एह ।
भव भव हो जो हो समयसुंदर कहे, श्रीजिनप्रतिमासुं नेह ।
श्री० ॥७॥

दीवाली वीरप्रभु स्तवन

मारग देशक मोक्षनो रे, केवल ज्ञान निधान ।
भाव दया सागर प्रभु रे, पर उपगारी प्रधानो रे ।
वीर प्रभु सिद्ध थया, संघ सकल आधारो रे,
हवे इण भरतमां, कोण करशे उपगारो रे । वीर० ॥१॥

नाथविहुणुं सैन्य ज्युं रे, वीरविहुणो रे संघ ।
साधे कोण आधारथी रे, परमानंद अभंगो रे । वीर० ॥२॥
मातविहुणो बाल ज्युं रे, अरहो परहो अथडाय ।
वीरविहुणा जीवडा रे, आकुल व्याकुल थाय रे । वीर० ॥३॥
संशयछेदक वीरनो रे, विरहो केम खमाय ।
जे दीठे सुख उपजे रे, ते विण केम रहेवाय रे ।
वीर० ॥४॥
निर्यामक भवसमुद्रनो रे, भव–अडवी–सथ्थवाह ।
ते परमेश्वर विण मले रे, केम वाधे उत्साहो रे ।
वीर० ॥५॥
वीर थकां पण श्रुततणो रे, हतो परम आधार ।
हवे इहां श्रुत आधार छे रे, अहो जिनमुद्रा सार रे ।
वीर० ॥६॥
त्रण काले सवि जीवने रे, आगमथी आणंद ।
सेवो ध्यावो भविजना रे, जिनपडिमा सुखकंदो रे ।
वीर० ॥७॥
गणधर आचारज मुनि रे, सहुने इणि परे सिद्ध ।
भव भव आगम संगथी रे, देवचंद्र पद लीध रे
वीर० ॥८॥

दीवाली महावीरजिन स्तवन

म्हारे दीवाली थइ आज, जिनमुख जोवाने ॥आं०।
महावीर स्वामी मुगते पहोता, गौतम केवल ज्ञान रे।
धन अमावस दीवाली म्हारे, वीर प्रभु निर्वाण।
जिनमुख० ॥१॥
चारित्र पाली निरमलुं ने, टाली विषय कषाय रे।
एहवा मुनिने वांदिये तो, उतारे भवपार। जिन० ॥२॥
बाकुला वहोराव्या वीरजीने, तारी चंदन बाला रे।
केवल लहीने मुगते पहोता, पाम्या भवनो पार। जिन० ॥३॥
एहवा मुनिने वांदिये, जे पंचम ज्ञानने धरता रे।
समवसरण दइ देशना, प्रभु तार्या नर ने नार। जिन० ॥४॥
चोवीसमा जिनेश्वरु ने, मुक्ति तणा दातार रे।
कर जोडी कवि इम भणे, प्रभु भवनो फेरो टाल। जिन ॥५॥

श्री पर्युषणा स्तवन

(आंखडीये में आज शेत्रुंजो दीठो रे यह चाल)

सुणजो साजन संत पजूसण आव्यां रे।
तुमे पुण्य करो पुण्यवंत, भविक मन भाव्यां रे ।आं०।
वीर जिणेसर अति अलवेसर, वाला मोरा परमेश्वर एम बोले रे।
पर्व मांहे पजूसण मोटा, अवर न आवे तोले रे। पजू० ॥१॥

चोपगमांहे जेम केशरी मोटो, वाला मोराखगमां गरुड ते कहिये रे।
नदीमांहे जेम गंगा मोटी, नगमां मेरु लहिये रे। पजू० ॥२॥
भूपतिमां भरतेश्वर भाख्यो, वा० देव मांहे सुर इंद्र रे।
सकल तीरथ मांहे शेत्रुंजो दाख्यो, ग्रहगणमां जेम चंद्र रे
पजू० ॥३॥

दशरा दीवाली ने वली होली, त्रा० आखातीज दिवासो रे।
बलेव प्रमुख बहुलां छे बीजां, पण ए मुक्तिनो वासो रे।
पजू० ॥४॥

ते माटे अमार पलावो, अट्ठाइ महोच्छव कीजे रे।
अट्ठम तप अधिकाइये करीने, नर भव लाहो लीजे रे।
पजू० ॥५॥

ढोल दुंदुंभि भेरी नफेरी, वा० कल्पसूत्र जगावे रे।
झांझरनो झमकार करीने, गोरीनी टोली मली आवे रे।
पजू० ॥६॥

सोना रूपाने फूलडे वधावी, वा० कल्पसूत्र ने पूजे रे।
नव वखाण विधिए सांभलतां, पाप मेवासी धूजे रे। पजू० ॥७॥
ए अट्ठाहिनो महोच्छव करतां, वा० बहु जगजन उद्धर्या रे।
विबुध विनीत वरसेवक एहथी, नवनिधि ऋद्धि सिद्धि वर्या रे।
पजू० ॥८॥

श्री सिद्धाचल स्तवन

(तीरथनी आशातना नवि० यह देशी)

विमल गिरिने भेटतां सुख पायो, हांरे सुख पायो रे सुख पायो, हांरे आनंद घणो दिल छायो, हांरे नमतां गिरि-राज । विमल० ।आं०।

मूल मंदिर प्रभु ऋषभनी अतिप्यारी, हांरे सोहे मूरत मोहनगारी । हांरे जस महिमा छे अतिभारी, हांरे मानुं मोह-नवेल । विमल० ॥१॥

आस पास जिन बिंबने दिल धरिये, हांरे रायण पगलां न विसरिये । हांरे पुंडरीक गणधर गुण वरिये, करिये जन्म पवित्र । विमल० ॥२॥

ऋषभ प्रभुजी आविया दिल धारी, हांरे इहां पूर्व नवाणुं वारी । हांरे मुनि ध्यान कर्युं अतिभारी, तीर्थ नमुं गुणखाण । विमल० ॥३॥

पुंडरीकाचल नामथी ओलखायो, हांरे ज्ञातासूत्रमें तीर्थ बतायो । सीमंधरजिन मुख से गवायो, नाम लियां दुख जाय । विमल० ॥४॥

तीर्थ प्रतापी भेटीयो मनुहारो, हांरे रूडो देश सोरठ शणगारो । सौभाग्यविजय दिल प्यारो, नमिये वारं वार । विमल० ॥५॥

श्री सिद्धाचल स्तवन

जिनंदा तोरे चरण कमलकी रे,
हु चाहुं सेवा प्यारी, तो नाशे कर्म कठारी,
भव भ्रांति मिट गइ सारी । जिनंदा० ॥१॥

विमलगिरि राजे रे, महिमा अति गाजे रे ।
वाजे जग डंका तेरा, तूं सच्चा साहिब मेरा ।
हुं बालक चेरा तेरा । जिनंदा० ॥२॥

करुणा कर स्वामी रे, तूं अंतरजामी रे ।
नाभि जग पूनमचंदा, तूं अजर अमर सुखकंदा ।
तूं नाभिरायकुल नंदा । जिनंदा० ॥३॥

इणगिरि सिद्धा रे मुनि अनंत प्रसिद्धा रे ।
श्री पुंडरीक गणधारी, पुंडरीकगिरि कहारी,
ए सहु महिमा तारी । जिनंदा ॥४॥

तारक जग दीठा रे, पाप पंक सहु निठा रे ।
इच्छा मो मन में भारी, में कीधी सेवा तारी ।
हुं मास रही शुभ चारी । जि० ॥५॥

बिरुद निहारो रे, अब मोहे तारो रे ।
तीर्थ जिनवर तो भेटी, जन्म जरा दुःख मेटी ।
हुं पायो गुणनी पेटी । जिनंदा० ॥६॥

द्राविडं वारिखिल्ला रे, दश क्रोडि मुनि मिल्ला रे।
हुआ भक्ति रमणी भरतारा, कार्तिक पूनम दिन सारा।
जिनशासन जग जयकारा। जि० ॥७॥

संवत शशि चारा रे, निधि इंदु उदारा रे।
आतम को आनंदकारी, जिनशासन की बलिहारी।
पाम्या भवजल पारी। जिनदा० ॥८॥

श्री शत्रुंजय स्तवन

शेत्रुंजानो वासी प्यारो लागे मोरा राजिंदा,
लागे मोरा राजिंदा जी लागे मोरा० ॥

इण डुंगरीयारी जीणी जीणी कोरणी,
उपर शिखर विराजे मोरा राजिंदा। शेत्रुं० ॥१॥

चोमुंख बिंब अनुपम विराजे,
अद्भुत दीठां दुख भागे मोरा राजिंदा०। शे० ॥२॥

चुवा चंदन ओर अरघजा,
केशर तिलक बिराजे मोरा राजिंदा०। शे० ॥३॥

मस्तके मुकट कान में कुंडल,
बांहे बाजुबंद छाजे मोरा राजिंदा०। शे० ॥४॥

ज्ञान विमल प्रभु इणि परे बोले,
आभव पार उतारो मोरा राजिंदा० शे० ॥५॥

श्रीपुंडरीकस्वामिस्तवन

(राग वणजारा की)

पुंडरीक गणधर स्वामी, पूछे आदिजिनंद सिरनामी ।
आंकणी ।
संसार समुद्र है भारी, प्रभु कैसे हुवे झट पारी ।
कर्म कटे कब मेरा, मिटे जन्म मरण का फेरा । पुंडरी० ॥१॥
कहे प्रभु सिद्ध गिरि जाना, जहां मोक्षगति तुम पाना ।
अजर अमर होइ जावे, निज कर्म पटल टल जावे । पुं० ॥२॥
सुण कर के तिहां जावे, किया ध्यान करम गल जावे ।
पांच क्रोड मुनिवर साथे, लिया मुक्ति वधू सुख हाथे । पुं० ॥३॥
चैत्री पूनम दिन पूजा, करतां नर भव हो दूजा ।
ध्यान धरो दिल रंगे, गुणगान करो उछरंगे । पुंड० ॥४॥
तीन भुवन में यह भारी, नामे सिद्धगिरि सुखकारी ।
सौभाग्यविजय दिल ध्यावे, भवसागर पार लहावे ।
पुंडरीक० ॥५॥

गहुंली

आज हमारे रे मंगल रंग वधाई, जय जय श्रीमहावीर जिनेश्वर
जगगुरु जगहितकारी, तुम शासन जगमां जयवंतुं
वरते मंगलकारी। आज हमारे रे मंगल रंग वधाई ॥१॥

स्वामि सुधर्म गणीश—परंपर—नंदनवन सुरशाखी।
जगच्चंद्रसूरीश्वरराजे, तपगच्छ कीर्ति दाखी। आ० ॥२॥

हीरविजयसूरि जगहीरो, जेणे अवपथ प्रतिरोध्यो।
अद्‌भुतशक्ति—कलापरिचयथी, अकबर भूपति बोध्यो।
आ० ॥३॥

तास परंपर गुणमणिरोहण, मणिविजय गुरुराया।
शमदम त्यागवृत्ति धरी दुष्कर, संघ सकल मनभाया। आ० ॥४॥

तास शिष्य श्रीसिद्धिविजयगणि, शिष्यगणे परिवरिया।
संघतणा शुभ आग्रहवशथी, महेशाणे पाउधरिया। आ० ॥५॥

अद्‌भुत तपगुण अद्‌भुत जपगुण, अद्‌भुत शमगुण परख्यो।
शास्त्रबोध पण अद्‌भुत निरखी, संघ सकल बहु हरख्यो।
आ० ॥६॥

देशदेशांतर कुंकुमपत्री, मोकली संघ तेडावे
सूरिपद देवाने कारण, होंश घणी मन लावे। आ० ॥७॥

देशदेशांतरथी आवीने, संघ चतुर्विध मलियो।
शासनशोभा अंग विचारी, जिनसम गुणमणिकलियो। आ० ॥८॥

विजयकमलसूरीश्वरराजा, तपगच्छधोरी कहाया ।
मोकले वास देइ गण साथे, दानविजयगणिराया । आ० ॥९॥

ओगणीस सो पंचोत्तेर माघनी, शुदि पंचमी बुधवारे ।
गच्छपतिपद पाम्या गुरुवरजी, संघना जय जयकारे ।
आ० ॥१०॥

गुरु घणुं जीवो वली जसदीवो, प्रगटावो जगमांहे ।
करी कल्याण संघनुं निशदिन, पर उपकार उच्छाहे । आ० ॥११॥

४ सज्झाय-संग्रह

श्री धन्नाजी की सज्झाय

धन्ना मुनि धन मानव भव पायो, श्रीमुख इम फरमायो हो । धन्ना० आंकणी ॥

श्रेणिक पूछे वीरजिन भाषे, उत्तम मुनीश्वर सारा । रज मांहे तज तरतम योगे, धन धन्नो अणगारा हो ॥ धन्ना० ॥१॥

नारी बत्तीस तजी अपछरसी, धन बत्तीसय कोड । यह संसार असार जाणीने, शिवपुरी साहामा दोड हो ॥धन्ना० ॥२॥

निरन्तर तप बेले बेले, आंबिल उचित आहार । जेह मुख काग श्वान नवि चाहे, किम तमे कंठे उतारो हो ॥धन्ना०॥३॥

वार इकवीश धोइ जलमांहे, तेह पिंड खाइ जल पीवो। एहवो तप सुणतां जीव कंपे, धन धन थांरो जीवो हो ॥धन्ना० ॥४॥

चउद सहस मुनीश्वर मांहे, आपने वीरजी वखाण्या। दरिशन नितप्रते पुण्यवंत पावे, अमे पण आज पिछाण्या हो धन्ना० ॥५॥

नव मास लगे संजम पाली, सर्वार्थसिद्धिमें जाय। राम कहे ऐसे मुनीश्वर, निश्चे मुक्ति पद पाय हो ॥धन्ना० ॥६॥

सद्गुरुसदुपदेशसज्झाय

इम सद्गुरु जीवने समझावे, नरभव अथिर देखावे रे। सो तो साचा सेंण कहावे, जे जिनधर्म शुणावे रे ॥ इम० ॥१॥

हुंती ते कुंकुमवरणी देही, उपमा दीजे केही रे। व्हाला मिलिया सगा स्नेही, बाले घोचा देइ रे ॥ इम० ॥२॥

केना काका ने केनी काकी, कांइ म जाणे बाकी रे। स्वारथ विण सहु जावे थाकी, भगवन् इण परे भाखी रे ॥ इम० ॥३॥

पहेरण मलिया कडा ने मोती, वाग बेस ने धोती रे। घणी ज मेली आथी ने पोथी, धर्म विना सहु थोथी रे ॥ इम० ॥४॥

आवे काल फिरे यम दोला, हुवे सितांगा खोला रे।
नाडयां तूटे काढे यम डोला, जीवडो खाय हिलोला रे॥
इम० ॥५॥

सहु मिलि अपणो रोणो रोवे, तेहनी गति कुण जोवे रे।
जो स्वारथ पूग्यो नवि होवे, तो पूठे ही विगोवे रे॥ इम० ॥६॥

म्हारो म्हारो करी रह्यो घेलो, जग स्वारथनो मेलो रे।
ऊठी चलेगो हंस अकेलो, विछडयां मिलवो दोहेलो रे॥
इम० ॥७॥

धन संपद बादल जिम छाया, चंदने चरची काया रे।
एह संसारनी काची माया, छोडीने शिवपद पाया रे॥
इम० ॥८॥

धर्म तणो शरणो ले मोटो, छोड दे मारग खोटो रे।
दया धर्मनो ले तूं ओठो, कदी न आवे त्रोटो रे॥ इम० ॥९॥

राजा चक्रवर्ती महाबलिया, काले अनंता गलिया रे।
कर्मज तूटे शिवसुख मलिया, अवर संसार में कलिया रे॥
इम० ॥१०॥

रात दिवस जिनजी सम ध्यावे, मन वांछित फल पावे रे।
प्रेम ने राज सदा सुख पावे, विजयरत्न गुण गावे रे॥
इम० ॥११॥

समकितभेदे भावनारूप सज्झाय

चाखो नर समकित सूखडली, दुःख भूखडली भाजे रे। घार सद्दहणा सवैया लाडु, तीन लिंग फीणा छाजे रे ॥ चाखो० ॥१॥

दशविध विनय दोठा मीठा, त्रण शुद्धि सखर सुहाली रे। आठ प्रभावक जनने रागी, वली दोषे करी टाली रे ॥ चाखो० ॥२॥

भूषण पांच जलेबी कूंली, छव्विह जयणा खाजा रे। लक्षण पांच मनोहर घेवर, छठाण गुंदवडा ताजा रे॥ चाखो० ॥३॥

छ आगार नागोरी पेंडा, छ भावना पण पूडी रे। सत सठ भेद ए नव नवी थाणी, समकित सूखडी रूडी रे ॥ चाखो० ॥४॥

श्री जिनशासन चोवटे मांडी, सिद्धांत थाली सारी रे। ए चाखे अजरामर थावे, शिष्य सुदर्शन प्यारी रे। चाखो० ॥५॥

मुनिगुणसज्झाय

ऐसे मुनिजन देखे वनमें, ए तो समतारस लीननमें। ऐसे मुनिजन० ॥१॥

धूप सहे शिखरन के ऊपर, मगन रहे ज्ञानन में। ऐसे० ॥२॥

पावस ऋतु वरसत रहे टाढे, बुंद सहे छिन छिनमें ॥
ऐसे० ॥३॥

शीत सहे दरियावकिनारे, धीरज धरे ध्याननमें ॥
ऐसे० ॥४॥

'राम' मनावत ऐसे मुनिको, राग द्वेष नही मनमें ॥
ऐसे० ॥५॥

माया अथिर की सज्झाय

काया माया दोनुं कारमी परदेशी रे,
कबहु अपनी न होय, मित्र परदेशी रे ।
इनको गर्व न कीजिये परदेशी रे,
छिनमें देखावे छेह, मित्र परदेशी रे ॥१॥

जैसो रंग पतंगको परदेशी रे,
छिनमें फीको होय, मित्र परदेशी रे ।
मणि माणक मोती हीरला परदेशी रे,
तास शरण नही कोय, मित्र परदेशी रे ॥२॥

जिस घर हय गय घूमते परदेशी रे,
होता छत्तीस राग, मित्र परदेशी रे,
सो मंदिर सूना पडचा परदेशी रे,
बेसण लागा काग, मित्र परदेशी रे ॥३॥

मणि माणिक मोती पूरती परदेशी रे,
राजा हरिश्चन्द्र घर नार, मित्र परदेशी रे।
एक दिन ऐसा हो गया परदेशी रे,
परघर की पनीहार, मित्र परदेशी रे॥४॥
हाथे पर्वत तोलते परदेशी रे,
करते नरपति सेव, मित्र परदेशी रे।
सो भी नर सब गल गये परदेशी रे,
तेरी क्या गिनती होय, मित्र परदेशी रे ॥५॥
छोडके मंदिर मालिया परदेशी रे,
करले जिनसुं राग, मित्र परदेशी रे ।
वादिनकी कर शोचना परदेशी रे,
लगसी इन तन आग, मित्र परदेशी रे॥६॥
झूठो सब संसार है परदेशी रे,
सुपना का सौ खेल, मित्र परदेशी रे ।
नग कहे तास समझ के परदेशी रे,
करले प्रभुसुं मेल, मित्र परदेशी रे ॥७॥

वैराग्यउपदेशक सज्झाय

इक मरना इक जाना, यारो इक० ।
को मत करना गुमाना, यारो इक० । आंकणी ।
ओढण माटी पेरण माटी, माटी का है सराना ।

वसतिमें से बार निकाला, जंगल किया ठिकाना।
यारो हक मरना० ॥१॥

हाथी चढते घोडे चढते, और आगें निशाना।
नीली पीली बेरख चलती, उत्तर किया पयाना।
यारो हक मरना० ॥२॥

नरपति हो के तखतपर बैठे, भरिया भारी खजाना।
सांझ सवेरे मुजरा लेते, उपर हाथ बेकाना।
यारो हक मरना० ॥३॥

पोथी पढकर हिंदु भूले, मुसलमीन कुराना।
रूपचंद कहे सुनो भाइ संतो, हरदम प्रभु गुण गाना।
यारो हक मरना० ॥४॥

एकादशी की सज्झाय

आज म्हारे एकादशी रे, नणदल मौन करी मुख रहिये।
पूछयानो पडुत्तर पाछो, केहने कांइ न कहिये।
आज म्हारे० ॥१॥

महारो नणदोइ तुजने वाहलो, मुजने ताहरो वीरो।
धूआडाना बाचका भरतां, हाथ न आवे हीरो।
आज म्हारे० ॥२॥

घरनो धन्धो घणो कर्यो पण, एक न आवे आडो।

परभव जातां पल्लव झाले, ते मुजने देखाडो । आ० ॥३॥
मगसिर शुद इग्यारस महोटी, नेउ जिनने निरखो ।
दोढसो कल्याणक म्होटा, पोथी जोइने हरखो । आ० ॥४॥
सुव्रत शेठ थयो शुध्ध श्रावक, मौन करी मुख रहिओ ।
पावक पुर सघलो परजाल्यो, तेहनो कांइ न दहिओ । आ० ॥५॥
आठ पहोर पोसो ते करिये, ध्यान प्रभुनुं धरिये ।
मन वच काया जो वश करिये, तो भवसायर तरिये । आ० ॥६॥
ईर्यासमिति भाषा न बोले, आडुं अवलुं पेखे ।
पडिकमणासुं प्रेम न राखे, कहो केम लागे लेखे । आ० ॥७॥
कर ऊपर तो माला फरती, जीभ फरे मुखमांही ।
चित्तडुं तो चिहुं दिसि डोले, इण भजने सुख नाही । आ० ॥८॥
पौषध शाला भेगां थइने, चार कथा वली सांधे ।
कांइक पाप मिटावण आवे, बारगणुं वली बांधे । आ० ॥९॥
एक उठंती आलस मोडे, बीजी उंघे बेठी ।
नदियां मांहेथी कंइक निसरती, जइ दरियामां पेठी । आ० ॥१०॥
आई बाई नणंद भोजाइ, नानी मोटी वहूने ।
सासु ससरो मा ने मासी, शीखामण छे सहुने । आ० ॥११॥
उदयरतन वाचक उपदेशे, जे नर नारी रहेशे ।
पोसा साथे प्रेम धरीने, अविचल लीला लहेशे ।

आज म्हारे० ॥१२॥

मरुदेवी माता की सज्झाय

तुज साथे नहीं बोलुं ऋषभ जी, तें मुजने विसारी जी। अनन्तज्ञाननी तुं ऋध्धि पाम्यो, तो जननी न संभारी जी। तुज० ॥१॥

मुजने मोह हतो तुज ऊपर, ऋषभ ऋषभ करी जपती जी अन्न उदक मुजने नवि रुचतुं, तुज मुख जोवाने तपति जी। तुज० ॥२॥

तुं बेटो शिर छत्र धरावे, सेवे सुर नर नारी जी। तो जननी ने केम संभारे, जाणी जाणी प्रीति ताहरी जी। तुज० ॥३॥

तुं केहनो ने हुं वली केहनी, नथी रहां कोइ केहनुं जी। ममता मोह धरे जे मनमां, मूर्ख पणुं सहि तेहनुं जी। तुज० ॥४॥

अनित्य भावनाए चढ्या मरुदेवा, बेठां गयवर खंधो जी। अन्तगड केवली थइ गया मुक्तें, ऋषभने मन आणंदो जी। तुज० ॥५॥

रहनेमि की सज्झाय

काउसग्ग ध्याने मुनि रहनेमि नामे,
रह्या छे गुफामां शुभपरिणाम रे।

देवरिया मुनिवर ध्यानमां रहेजो,
ध्यानथकी होय भवनो पार रे, देवरिया० । आं० ॥
वरसादे भीनां चीवर मोकलां करवा,
राजुल आव्या तेणे ठाम रे, देवरिया० ॥१॥
रूपे रति रे वस्त्रे वरजित बाला,
देखी खोभाणो तेणे काम रे, देवरिया० ।
दिलडुं क्षोभाणुं जाणी राजुल भाषे,
राखो थिर मन गुणना धाम रे, देवरिया० ॥२॥
जादवकुलमां जिनजी नेम नगीना,
वमन करी छे मुजने तेण रे, देवरिया० ।
बंधव तेहना तुमे शिवादेवी जाया,
एवडो पटन्तर कारण केण रे, देवरिया० ॥३॥
परदारा सेवी प्राणी नरकमां जावे,
दुर्लभ बोधि प्राय होय रे, देवरिया० ।
साधवी साथे जे पाप ज बांधे,
तेहनो छुटकारो कदीय न थाय रे, देव० ॥४॥
अशुचि काया रे मलमूत्रनी क्यारी,
तमने केम लागी एवडी प्यारी रे, देव० ।
हुं रे संयती तमे महाव्रत धारी,
कासे महाव्रत जाशो हारी रे, देव० ॥५॥

भोग वम्या रे मुनि मनथी न इच्छे,
नाग अगंधन कुलना जेम रे, देव० ।
धिक कुल नीचा थइ नेहथी निहाले,
न रहे संजम शोभा एम रे, देवरिया० ॥६॥
एवा रसीला राजुल वयण सुणीने,
बुझ्या रहनेमि प्रभुजीपास रे, देव० ।
पाप आलोइ फरी संजम लीधुं,
अनुक्रमे पाम्या शिववास रे, देवरि० ॥७॥
धन्य धन्य जे नर नारी शीयलने पाले,
समुद्रतर्यासम व्रत छे एह रे, देव० ।
रूप कहे तेहना नामथी होवे,
अम मन निर्मल सुन्दर देह रे, देव० ॥८॥

अरणिक मुनि सज्झाय

अरणिक मुनिवर चाल्या गोचरी, तडके दाझे सीसोजी । पाय अलवाणो रे वेलु परजले, तनसुकुमाल मुनीशो जी । अर० ॥१॥

मुख कमलाणुं रे मालती फूल ज्युं, उभा गोखनी हेठो जी । खरी बपोरे रे दीठा एकला, मोही मानिनी ठेठो जी । अर० ॥२॥

वयणरंगीली रे नयणे वींधीया, मुनि थंभ्या तेणे ठाणो जी। दासीने कहे जा रे उतावली, मुनि तेडी घर आणो जी। अर० ॥३॥

पावन कीजे रे मुज घर आंगणुं, वहोरो मोदक सारो जी। नवयौवनरस काया क्युं दहो, सफल करो अवतारो जी। अर० ॥४॥

चन्द्रवदनीए चारित्र चूकव्युं, सुख विलसे दिन रातो जी। एक दिन रमतां रे गोखे सोगठे, तव दीठी निज मातो जी। अर० ॥५॥

अरणिक अरणिक करती मा फिरे, गलिए गलिए मझारो जी। कहो कोणे दीठो रे मारो अरणिलो, पूछे लोक हजारो जी। अर० ॥६॥

हुं कायर छुं रे मारी मावडी, चारित्र खांडानी धारो जी। धिक धिक विषया रे मारा जीवने, में कीधो अविचारो जी। अर० ॥७॥

गोखथी उतरी रे जननीपाय पड्यो, मनसुं लाज्यो अपारो जी। वछ तुज न घटे रे चारित्र चूकवुं, जेहथी शिव-सुख सारो जी। अर० ॥८॥

एम समजावी रे पाछो वालिओ, आण्यो गुरुनी पासो जी। सद्गुरु दिये रे शीख भली परे, वैरागे मन वासो जी। अर० ॥९॥

अग्नि धखन्ती रे शिला उपरे, अरणिके अणसण कीधो जी। रूपविजय कहे धन्य ते मुनिवरु, जेणे मनवांछित फल लीधो जी। अर० ॥१०॥

श्री स्थूलभद्र सज्झाय

श्रीस्थूलभद्र मुनिगणमां शिरदार जो,
चोमासुं आव्या कोशा आगार जो।
चित्रामणशालाए तप जप आदर्यां जो ॥१॥

आदरियां व्रत आव्या छो अम गेह जो,
सुन्दरी सुन्दर चंपकवरणी देह जो।
हम तुम सरिखो मेलो आ संसारमां जो ॥२॥

संसारे में जोयुं सकल स्वरूप जो,
दर्पणनी छायामां जेहवुं रूप जो।
स्वपनानी सुखडली भूख भागे नही जो ॥३॥

ना कहेशो तो नाटक करशुं आज जो,
बार वरसनी माया छे मुनिराज जो।
ते छोडी हुं जाउं केम आशाभरी जो ॥४॥

आशा भरिओ चेतन काल अनादि जो,
भम्यो धर्मने हीण थयो परमादी जो।
न जाणी में सुखनी करणी जोगनी जो ॥५॥

जोगी तो जङ्गलमां वासो वसिया जो,
वेश्याने मंदिरियें भोजनरसिया जो ।
तुमने दीठा एहवा संयम साधता जो । ॥६॥

साधशुं संयम इच्छारोध विचारी जो,
कूर्मापुत्र थया नाणी घरबारी जो ।
पांणीमांहे कोरुं पङ्कज जाणिये जो ॥७॥

जाणिये तो सघळी तमारी वात जो,
मेवा मीठाइ रसवंता बहुभात जो ।
अंबर भूषण नव नवली भाते लावता जो ॥८॥

लावता तो तुं देती आदरमान जो,
काया जाणुं पतंगरंग समान जो ।
ठालीने शी करवी एहवी प्रीतडी जो ॥९॥

प्रीतलडी करता ते रंगभर सेज जो,
रमता ने देखाडंता घणुं हेज जो ।
रीसाणी मनावी मुजने सांभरे जो ॥१०॥

सांभरे तो मुनिवर मनडुं वाले जो,
ढांक्यो अग्नि उघाड्यो परजाले जो ।
संजममांहे ए छे दूषण मोटकुं जो ॥११॥

मोटकुं तो आव्युं तुं नन्दनुं तेडुं जो,
जातां न वहे कांइ तमारुं मनडुं जो ।
मैं तमने त्यां कोल करीने मोकल्या जो ॥१२॥

मोकल्या तो मारगमांहे मलिया जो,
संभूति आचारज ज्ञाने बलिया जो।
संयम दीधुं समकित तेणे शीखव्युं जो ॥१३॥

शीखव्युं तो कही देखाडो अमने जो,
धर्म करन्तां पुण्य वडेरुं तमने जो।
समताने घर आवी वेश्या इम कहेजो ॥१४॥

कहे मुनीश्वर शंकाने परिहार जो
समकित मूले श्रावकनां व्रत बार जो।
प्राणातिपातादिक स्थूलथी उच्चरे जो ॥१५॥

उच्चरे तो वीत्युं छे चोमास जो,
आणा लइने आव्या गुरुनी पास जो।
श्रुतनाणी कहेवाणा चौदे पूरवी जो ॥१६॥

पूरवी थइने तार्या प्राणी थोक जो,
उज्ज्वलध्याने ते गया देवलोक जो
ऋषभ कहे नित्य तेहने करिये वंदना जो ॥१७॥

आत्मप्रबोध-सज्झाय

पूरव पुण्यसंयोग पामी, नरभव उत्तम जात।
शुद्ध देव गुरु धर्म लहीने, म करो प्रमादनी बात रे प्राणी,
आतम साधन कीजे ॥१॥

एह संसार असार दुखागर,

श्री जिनधर्म भजीजे रे प्राणी, आतमसाधन कीजे ।

तन यौवन आउखो दिन दिन, अंजलि जल जिम छीजे । तूं निश्चिंत थइ रह्यो भोला, तुज ऊपर जम खीजे रे, । प्राणी । आतम० ॥२॥

मात पिता सुत भाइ भगिनी, कांतादिक परिवार । आप स्वारथ खावाने कारण, मलियो छे निरधार रे प्राणी । आ० ॥३॥

पाप करी बहु धन तूं मेले, खासी सघलोइ साथ । पाप तणा फल तूं भोगवशे, दुर्गति एकलो अनाथ रे प्राणी । आ० ॥४॥

क्रोध मान मद मत्सर मातो, जातो काल न जाणे । संत साधुनी निंदा करतां, हियडे शंका न आणे रे प्राणी । आ० ॥५॥

इंद्र धनुष जिम जलपरपोटो, जेहवो संध्यानो राग । जिम चंचल सौदामिनी झबको, तिम धन यौवन लाग रे । प्राणी । आ० ॥६॥

म्हारुं म्हारुं तुं करी रह्यो भोला, ताहरुं शरीर न होइ । आव्यो एकिलो ने जाशे एकिलो, ज्ञान दृष्टि करी जोइ रे प्राणी । आ० ॥७॥

थोडिसी ऋद्धि मुख आगल देखी, झूठो करे अभिमान । जे सुरपति ज्यां जेहने हुंता, बत्तीस लाख विमान रे प्राणी । आ० ॥८॥

लाख चोरासी हय गय रथ जस, सहस चोसठ तस राणी। नव निधि चौद रयण जस मंदिर, लोपे न को तस वाणी रे प्राणी। आ० ॥९॥

सहस बत्तीस नृप सेवा करता, पायक छिन्नु कोड। ते चक्रवर्ती इण भूमि समाणा, आ जग महोटी खोड रे प्राणी। आ० ॥१०॥

त्रण से साठ संग्रामे शूरा, पूरा जस घरे भोग। ते वासुदेव दैवगति हुआ, मूकी वर सुख जोग रे प्राणी। आ० ॥११॥

तीन भुवनमांहे कंटकी हुंतो, नामथी डरता देवा। ते रावण राजाने पूठे, कोइ न रह्यो जळ देवा रे प्राणी। आ० ॥१२॥

किहां ते राम किहां बलदेवा, पांच पांडव किहां देख। किहां ते नल कौरव कर्णादिक, ए सहु हुवा कथाशेष रे प्राणी। आ० ॥१३॥

जिण घर कनक तोलाता बहुला, कनक तरु तिहां वास। जिण घर रमणी रमती हरिणाक्षी, हरिण चरे तिहां घास रे प्राणी। आ० ॥१४॥

जिण घर मणि माणक मुकवानो, तिल भर न होतो माग। ते घर हुवा रान बरोबर, बेसे घुहड काग रे प्राणी। आ० ॥१५॥

एह संसार स्वरूप विचारी, सारी अकल करीजे। जेणे प्राणी थावे सुखियो, सो विधि मनमें धरीजे रे प्राणी। आ० ॥१६॥

जो वांछो सुख कीर्ति इण भव, पर भव शिवपुर वास। दान शीयल तप भावना भेदे, करो जिनधर्म उल्लास रे प्राणी। आ० ॥१७॥

वाचकवर श्री सुमति विजय गुरु, नेमविजय शिशु भाखे। सो जिनधर्म करो मन शुद्धे, दुर्गति पडतां राखे रे प्राणी। आ० ॥१८॥

श्रीमेतारज मुनि सज्झाय

(सोना रूपा के सोगठे यह देशी)

धन धन मेतारज मुनि, जेणे संयम लीधो।
जीवदयाने कारणे, तेणे कोप न कीधो। धन० ॥१॥
मासखमणने पारणे, गोचरीये जाय।
सोवनकार तणे घरे, पहोता मुनिराय। धन० ॥२॥
सोवन जव श्रेणिकना, ऋषि पासे मुकी।
घर भीतर ते नर गयो, एक वात न चुकी। धन० ॥३॥
जव सघला पंखी गले, मुनिवर ते देखे।
तव सोनी घर आवियो, जव तिहां नही देखे। धन० ॥४॥

कहो मुनिवर जव क्यां गया, कहो ने केणे लीधा ।
मुनि उत्तर आपे नही, तव चपेटा दीधा । धन० ॥५॥
मुनिवर उपशमरसभर्या, पंखी नाम न भाषे ।
कोप करीने इम कहे, जव छे तुम पासे । धन० ॥६॥
जव चोर्या राजातणा, तूं तो मोटो चोर ।
आला चर्मतणो करी, बांध्यो मस्तक दोर । धन० ॥७॥
नेत्रयुगलतणी वेदना, निकलीया ततकाल ।
केवलज्ञान ते निर्मलुं, पामी कीधो काल । धन० ॥८॥
शिव नगरी ते जइ चढचो, एहवो साधु सुजाण ।
गुणवंतना गुण जे जपे, तस घर कोड कल्याण । धन० ॥९॥
नव कन्या तेणे तजी, तजी कंचन कोडी ।
नव पूरवधर वीरना, प्रणमुं कर जोडी । धन० ॥१०॥
सिंहतणी परे आदरी, सिंहनी परे शूरो ।
संयम पाली शिव लही, जस जगमें पूरो । धन० ॥११॥
भारी काष्टतणी तिहां, उंचेथी नाखे ।
धडकी पंखी जव वम्या, ते देखी आंखे । धन० ॥१२॥
तव सोनी मन चिंतवे, कीधुं खोटुं काम ।
वात राजा जो जाणशे, तो टालशे ठाम । धन० ॥१३॥
तव ते मनमां चिंतवे, भयथी निजहाथे ।
सोवनकार दीक्षा लिये, निज कुटुंब संघाते । धन० ॥१४॥
श्रीकनकविजय वाचकवरु, शिष्य बोले राम ।
साधुतणा गुण गावतां, लहिये उत्तम ठाम । धन० ॥१५॥

श्री स्थूलिभद्र सज्झाय १

(देशी आछेलाल)

बोली गयो मुख बोल, चार घडीनो कोल,
आछेलाल हजीय न आव्यो वालहो जी ।
देइ गयो दुखदाह, पाछो नाव्यो नाह,
आछेलाल के सही केणे भोलव्यो जी ॥१॥
रहे तो नही क्षण एक, रें दासी सुविवेक,
आछेलाल जाइ जुओ दशे दिशाजी ।
एम बोलंती बाल, एहनी उत्तम चाल,
आछेलाल छेल गयो मुज छेतरी जी ॥२॥
उलस वालस थाय, अंग उकालो थाय,
आछेलाल नयणे नावे नींदडी जी ।
चोखा चंपकशरीर, नणदलना हो वीर,
आछेलाल नयणे में दीठा नही जी ॥३॥
जेम बपैया मेह, मच्छने जलसुं नेह,
आछेलाल भमराने मन केतकी जी ।
चकवो चाहे चंद, इंद्राणी मन इंद,
आछेलाल अहनिश तमने ओलगुं जी ॥४॥

तुम विण घडीए छ मास, ते मुज नाखी पास ।
आछेलाल निठुरपणुं नर तें कर्युं जी ।
भाखो कोइक दोष, मुकी मननो रोष,
आछेलाल कांइक तो करुणा करो जी ।.५॥

हुं निराधार नार, ऐली गयो भरतार
आछेलाल उभी करुं आलोचना जी ।
एम वलवलती कोश, देती करमनो दोष,
आछेलाल दासी आवी रे दोडती जी ॥६॥
सांभल स्वामीनी वात, लाछिलदेनो जात,
आछेलाल स्थूलिभद्र आव्यो रे आंगणे जी ।
वनिता सांभली वात, हियडे हरख न मात ।
आछेलाल प्रीति पावन प्रभु तें करी जी ॥७॥

पधारो घर मुज, मुनि भाख्यो सवि गुज,
आछेलाल उठ हाथ अलगी रहे जी ।
माता आगे मुसाल, तिम मुज आगल ख्याल ।
आछेलाल एह प्रपंच किहां भण्या जी ॥८॥
चित्रशाली चोमास, निहाली मुख तास,
आछेलाल वनिता विधिसुं आलोचवे जी ।
मादल ताल कंसाल, भुंगल भेरी रसाल,
आछेलाल गावे नव नव रागसुं जी ॥९॥

बाले विधिसुं अंग, फरती फुदडी चंग,
आछेलाल हाव भाव बहु हेतसुं जी ।
सांभल स्वामीनी वात, सिंहने घाले घात,
आछेलाल राइनो पाड राते गयो जी ॥१०॥

सो बालक साथे रोइ, पावइयाने पानी न होय,
आछेलाल पथ्थर फाटचो ते किम मलेजी ।
समुद्र मीठो न थाय, पृथ्वी रसातल जाय,
आछेलाल सूर्य उगे पश्चिमदिशे जी ॥११॥

तिबोधी इम कोश, छोडी रागने रोष,
आछेलाल द्वादश व्रतने उचरे जी ।
पूरण कीधो चोमास, आव्या श्री गुरुपास,
आछेलाल दुक्कर दुक्कर तू सही जी ॥१२॥

त्रीस वरस घर वास, पुरी सहुनी आस,
आछेलाल पञ्च महाव्रत पालता जी ।
धन्य मात धन्य तात, नागर न्याति कहात,
आछेलाल चारु वंश दिपावियो जी ॥१३॥

जे नर नारी गाय, तस घर लच्छी सवाय,
आछेलाल पभणे शांति मयाथकी जी ॥१४॥

श्रीस्थूलभद्र सज्झाय २

(देशी–भेष रे उतारो राजा०)

वेष स्वामी जोइ आपनो, लागी मारा तनडामां लाय जी ।
अणघार्युं रे स्वामी आ शुं कर्युं, लाजे सुन्दर काय जी ।
कोणे रे धुतारे तमने भोलव्या ॥१॥
आवी खबर जो होत तो, जावा देत नही नाथ जी ।
छेतरी छेह दीधो मने, पण छोडुं नही साथ जी ।
कोणे रे धुतारे० ॥२॥
बोध सुणी सुगुरु तणो, लीधो संजमभार जी ।
मात पिता परिवार सहु, झूठो आल पंपाल जी ।
नथी रे धुतारे मने भोलव्यो ॥३॥
एहवुं जाणी कोश्या सुन्दरी, धर्यो साधु नो वेष जी ।
आव्यो गुरुनी आज्ञा लई, देवा तने उपदेश जी ।
नथी रे धुतारे० ॥४॥
काले सवारे भेगा रही, लीधां सुख अपार जी ।
ते मने बोध देवा आविया, जोग धरीने आ वार जी ।
जोग रे स्वामी जी अहीं नही रहे ॥५॥
कपट करीने मने छोडवा, आव्या तमे निरधार जी ।
पण छोडुं नही कदी नाथ जी, नथी नारी गमार जी ।
जो रे० ॥६॥

छोड्यां मात पिता वली, छोड्यो सहु परिवार जी।
ऋद्धि सिद्धि रे मैं तो तजी दीधी, मानी सघलुं असार जी।
छेटी रही रे कर वात तूं।।७।।

जोग धर्यो रे अमे साधुनो, छोड्यो सघलानो प्यार जी।
मात समान गणुं तने, सत्य कहुं निरधार जी।
छेटी रही० ।।८।।

बार बरसनी प्रीतडी, पलमां तूटी जाय जी।
पस्तावो पाछलथी थशे, कहुं लागीने पाय जी।
जोग रे० ।।९।।

नारीचरित्र जोइ नाथ जी, तुरत छोडशो जोग जी।
माटे चेतो प्रथम तमे, पछी हसशे लोक जी।
जोग रे० ।।१०।।

चाला जोइ तारा सुन्दरी, डगुं नही हुं लगार जी।
काम शत्रु कबजे कर्यो, जाणी पाप अपार जी।
छेटी रही रे गमे ते करो ।।११।।

छेटी रही रे गमे ते करो, मारा माटे उपाय जी।
पण तारा सामुं हुं जोउं नही, शाने करे छे हाय जी।
छेटी रही रे० ।।१२।।

माछी पकडे छे जालमां, जलमांथी जेम मीन जी ।
तेम मारा नेत्रना बाणथी, करीश हुं तमने आधीन जी ।
जोग रे० ॥१३॥

ढोंग करवा तजी दइ, प्रीते ग्रहो मुज हाथ जी ।
कालजुं कपाय छे माहरुं, वचनो सुणीने नाथ जी ।
जोग रे० ॥१४॥

बार बरस तुज आगले, रह्यो तुज आवास जी ।
विध विध सुख मैं भोगव्यां, कीधा भोगविलास जी ।
आशा रे तज हवे माहरी ॥१५॥

त्यारे हतो अज्ञान हुं, हतो कामथी अन्ध जी ।
पण हवे ते रस मैं तज्यो, सुणी शास्त्रना बन्ध जी ।
आशा रे० ॥१६॥

ज्ञानी ऋषि ने मुनियो, मोटा विद्वान भूप जी ।
ते पण दास बनी गया, जोई नारीनुं रूप जी ।
जोग रे० ॥१७॥

साधुपणुं रे स्वामी नही रहे, मिथ्या कहुं नही लेश जी ।
देखी रे नाटारम्भ माहरो, तजशो साधुनो वेष जी ।
जोग रे० ॥१८॥

विध विध भूषणो धारीने, सजी रूडा शणगार जी ।
प्राण काढी नाखे ताहरो, कुदी कुदी आ वार जी ।
जोग रे० ॥१९॥

तो पण सामुं जोवुं नही, गणुं विष समान जी ।
सूर्य उगे पश्चिम कदी, तो पण छोडुं न मान जी ।
आशा रे० ॥२०॥

भिन्न भिन्न नाटक मैं कर्या, स्वामी आपनी पास जी ।
तो पण सामुं जोइ तमे, पूरी नही मन आश जी ।
हाथ रे ग्रहो हवे माहरो ॥२१॥

हाथ जोडी रे हवे वीनवुं, प्यारा प्राणजीवन जी ।
बार वरसनी प्रीतडी, याद करो तुम मन जी ।
हाथ रे० ॥२२॥

चेत चेत रे कोश्या सुन्दरी, शुं कहुं वारंवार जी ।
आ संसार असार छे, नथी सार लगार जी ।
सार्थक करो हवे देहनुं ॥२३॥

जन्म धरी आ संसारमां, नही ओलख्यो धर्म जी ।
विध विध वैभव भोगव्या, कीधां घणां कुकर्म जी ।
सार्थक० ॥२४॥

ते सहु भोगववुं पडे, मुआ पछी तमाम जी ।
अधर्मी प्राणीने मले नही, शरणुं कोई ठाम जी ।
सार्थक० ॥२५॥

सिंधुरूपी आ संसारमां, मानव मीनरूपधार जी ।
जञ्जाल जालरूपी गणो, कालरूपी मच्छीमार जी ।
सार्थक करो० ॥२६॥

विषय रस वाहालो गणी, कीधा भोगविलास जी ।
धर्मनां कार्य कर्यां नही, राखी भोगनी आश जी ।
उद्धार करो मुनि माहरो ॥२७॥

व्रत चुकाववा आपनुं, कीधा नाच ने गान जी ।
छेड करी रे मुनि आपनी, बनी छेक अज्ञान जी ।
उद्धार करो० ॥२८॥

श्रेय करो रे मुनिवर मुजने, बतावीने शुभज्ञान जी ।
धन्य धन्य छे आपने, दीसो मेरुसमान जी । उद्धा० ॥२९॥
बार वरस सुख भोगव्युं, खरची खूब दीनार जी ।
तो हुं तृप्त थई नही, धिक धिक मुज विकार जी । उद्धा० ॥३०॥
छोडी मोह संसारनो, रूडो शीयल व्रत धार जी ।
तो सुख शांति सदा मले, पामो भवजल पार जी ।
सार्थक करो० ॥३१॥

धन्य छे मुनिवर आपने, धन्य शकडालतात जी।
धन्य संभूतिविजय मुनि, धन्य लाछलदे मात जी।
मुक्त करी रे मोहजालथी ॥३२॥

आज्ञा दियो रे हवे मुजने, जाउं मुज गुरुपास जी।
चोमासुं पूरुं थया पछी, साधु छण्डे आवास जी।
रुडी रीते शीयल व्रत पालजो ॥३३॥

दर्शन आपजो मुजने, करवा अमृतपान जी।
सूर इन्दु कहे स्थूलभद्रजी, बन्या सिंह समान जी।
धन्य छे मुनिवर आपने ॥३४॥

मूर्ख प्रतिबोध सज्झाय

ज्ञान कदी नवि थाय मूरखने, ज्ञान कदी नवि थाय,
कहेतां पोतानुं पण जाय, मूरखने० ॥१॥

श्वान होय ते गङ्गाजलमां, सो वेला जो न्हाय।
अडसठ तीर्थ फरी आवे पण, श्वानपणुं नवि जाय। मू० ॥२॥

क्रूर सर्प पयपान करन्तां, शान्तपणुं नवि थाय।
कस्तूरीनुं खातर जो कीजे, वास लसण नवि जाय। मू० ॥३॥

वर्षाकाले सुग्री ते पक्षी, कपि उपदेश कराय।
ते कपिने उपदेश न लाग्यो, सुग्री घर विखराय। मू० ॥४॥

नदीमांहे निश दिन रहे पण, पाषाणपणुं नविं जाय ।
लोहधातु टंकण जो लागे, अग्नि तुरत झराय । मू० ॥५॥

कागकण्ठमां मुक्ताफलनी, माला ते न धराय ।
चन्दन चर्चित अंग करीजे, गर्दभ गाय न थाय । मू० ॥६॥

सिंह चरम कोइ सियालसुतने, धारे वेष बनाय ।
सियालसुत पण सिंह न होवे, सियालपणुं नही जाय । मू० ॥७॥

ते माटे मूरखथी अलगा, रहे ते सुखीया थाय ।
उखर भूमि बीज न होवे, उलटुं बीज ते जाय । मूरखने० ॥८॥

समकितधारीसंग करीजे, भवभयभ्रांति मिटाय ।
मयाविजय सद्गुरु सेवाथी, बोधिबीज सुख पाय । मूर० ॥९॥

लोभ की सज्झाय

लोभ न करिये प्राणीया रे, लोभ बूरो संसार । लोभ समो जगमां नही रे, दुर्गतिनो दातार भविकजन, लोभ बूरो संसार । करजो तुमे निरधार भवि० जिम पामो भवपार । भवि० ॥१॥

अतिलोभे लक्ष्मीपति रे, सागर नामे शेठ । पूरपयोनिधिमां पड्यो रे, जइ बेठो तस हेठ । भविक० ॥२॥

सोवनमृगना लोभथी रे, दशरथ सुत श्रीराम ।

सीता नारी गमावीने रे, भमियो ठामो ठाम। भविक० ।३।

दशमा गुणठाणा लगे रे, लोभतणुं छे जोर।
शिवपुर जातां जीवने रे, एहज महोटो चोर। भविक० ।।४।।

क्रोध मान माया लोभथी रे, दुर्गति पामे जीव।
परवश पडियो बापडो रे, अहोनिश पाडे रीव। भविक० ।५।

परिग्रहना परिहारथी रे, लहिये शिवसुख सार।
देव दानव नरपति थइ रे, जाशे मुक्ति मझार। भविक० ।।६।।

भावसागर पंडित भणे रे, वीरसागरबुध शिष्य।
लोभतणे त्यागे करी रे, पहोचे सयल जगीश।
भविकजन० ।।७।।

देवानन्दा की सज्झाय।

जिनवररूप देखी मन हरखी, स्तनमें दूध झराया। तव गौतमकुं भया रे अचंभा, प्रश्न करनकुं आया हो गौतम ! वो तो हमेरी अम्मा ।।१।।

तस कूखे तुम काहुं न वसिया, कवण किया इणे कम्मा। तव श्री वीर जिणंद इम बोले, एह किया इणे कम्मा, हो गौतम०।।

त्रिशलादे देराणी हुंती, देवानंदा जेठाणी। विषयलोभ करी कांइ न जाण्यो, कपट वात मन आणी हो, गौतम० ।।३।।

देराणीकी रतनडाबडी, बहुलां रतन चुरायां । झगडो करंतां न्याय हुओ जब, तब कछुं नाणा पाया, हो गौतम०।४।

ऐसा शराप दिया देराणी, तुम संतान न होजो । कर्म आगल कोइनुं नवि चाले, इंद्र चक्रवर्ती जोजो, हो गौतम० ।५।

भरतराय जब ऋषभने पूछे, एहमां कोइ जिणंदा । मरीचि पुत्र त्रिदण्डी तेरो, चोवीसमो जिनचंदा हो, गौतम० ॥६॥

कुलनो गर्व कियो मैं गौतम, भरतराय जब वांद्या । मन वचन कायाए करीने, हरख्यो अति आणंदा, हो गौतम० ॥७॥

कर्मसंयोगे भिक्षुककुल पाम्यो, जन्म न होवे कबहु । इंद्रे अवधे जोतां अपहरियो, देव भुजंगमबाहु, हो गौतम० ।८।

ब्यासी दिन हुं तिहां कणे वसीयो, हरिणिगमैषी जब आया । सिद्धारथ त्रिशलादेराणी, तस कूखे छटकाया, हो गौतम० ॥९॥

ऋषभदत्त ने देवानंदा, लेशे संयम भारा । तब गौतम ए मुक्ते जाशे, भगवती सूत्र विचारा, हो गौतम० ॥१०॥

सिद्धारथ त्रिशलादे राणी, अच्युत देवलोक जाशे । बीजे खंधे आचारांगे, एह वात कहेवाशे, हो गौतम० ॥११॥

तपगच्छ श्री हीरविजयसूरि, दियो मनोरथ वाणी । सकलचंद प्रभु गौतम पूछे, उलट मनमां आणी, हो गौतम०।१२।

जम्बूस्वामी का चोढालिया

दुहा—

सरस्वती पदपङ्कज नमी, पामी सुगुरुपसाय ।
गुण गातां जम्बूस्वामीना, मुज मन हर्ष न माय ॥१॥
यौवनवय व्रत आदरी, पाले निरतिचार ।
मन वच काया शुद्धसुं, जाउं तस बलिहार ॥२॥

ढाल पहली—

राजगृही नगरी भली रे लाल, बार जोजन विस्तार रे भविकजन । श्रेणिक नामे नरेसरु रे लाल, मन्त्री अभयकुमार रे भविकजन, भाव धरी नित्य सांभलो रे लाल ॥१॥

ऋषभदत्त व्यवहारियो रे लाल, वसे तिहां धनवन्त रे भविकजन । धारणी तेहनी भारिया रे लाल, शीलादिक गुणवन्त रे भविकजन । भाव धरी० ॥२॥

सुख संसारनां विलसतां रे लाल, गर्भ रह्यो शुभ दिन रे भवि० । सुपन लही जम्बूवृक्षनुं रे लाल, जन्म्यो पुत्र रतन रे भविकजन, भाव० ॥३॥

जम्बूकुमर नाम थापियुं रे लाल, सुपनतणे अनुसार रे भवि० । अनुक्रमे यौवन पामियो रे लाल, हुओ गुणभण्डार रे भविक०, भाव० ॥४॥

ग्रामानुग्रामे विचरता रे लाल, आव्या सोहमस्वाम रे भवि० । पुरजन वांदण आविया रे लाल, साथे जम्बू गुणधाम रे, भविक०, भाव० ॥५॥

भविकजनना हित भणी रे लाल, दिये देशना गणधार रे भवि० । चारित्र चिंतामणिसारिखुं रे लाल, भवदुखभञ्जण-हार रे भविक०, भा० ॥६॥

देशना सुणी जम्बू रीझिया रे लाल, गुरुने कहे कर जोड रे भवि० । अनुमति लेइ मात तातनी रे लाल, संयम लेउं मन कोड रे भवि०, भा० ॥७॥

ढाल दूसरी—

गुरु वांदी घर आविया रे, पामी मन वैराग । मात पिता प्रते वीनवे रे, करसुं संसारनो त्याग माताजी अनुमति द्यो मुज आज, जिम सीझे वंछित काज माताजी । अनुमति० ॥१॥

चारित्र पन्थ छे दोहिलो रे, व्रत छे खांडानी धार । लघु वय छे वत्स तुम तणुं रे, किम पले पञ्चाचार कुमरजी, व्रतनी म करो वात, तुं मुज एक अंगजात कुमरजी, व्रतनी म करो वात ॥२॥

एकलविहारे विचरवुं रे, रहेवुं वन उद्यान । भूमि संथारे पोढवुं रे, धरवुं धर्मनुं ध्यान । कुमरजी, व्रत नी० ॥३॥

पाय अलवाणे चालवुं रे, फरवुं देश विदेश। नीरस आहार लेवो सदा रे, परीसह केम सहीश, कुमरजी, व्रतनी० ॥४॥

कुमर कहे माता प्रते रे, ए संसार असार। तन धन यौवन कारिमां रे, जातां न लागे वार, माताजी, अनुमति० ॥५॥

माता कहे आल्हादथी रे, वत्स परणो शुभ नार। जोवन वय सुख भोगवी रे, पछे लेजो संजमभार, कुमरजी, व्रतनी० ॥६॥

मात पिताए आग्रह करी रे, परणावी आठे नार। जलथी कमल जिम भिन्न रहे रे, तिम रहे जम्बूकुमार, कुमरजी व्रतनी० ॥७॥

ढाल तीसरी—

प्रीतमने कहे कामिनी कामिनी, सुणो स्वामी अरदास सुगुणिजन सांभलो। सनेही अमृतस्वाद मूकी करी मूकी करी, कहो कोण पीवे छास, सुगु० ॥१॥

सनेही कामकलारस केलवो केलवो, मूको जी व्रतनो धन्ध, सुगु०। सनेही परणीने शुं परिहरो परिहरो, हाथ मेल्यानो संबन्ध, सुगु० ॥२॥

सनेही चारित्र वेलुकवल जिस्युं कवल जिस्युं, तेमां किस्यो छे सवाद, सुगु०। सनेही भोग सामग्री पामी करी पामी करी, भोगवो भोग आल्हाद, सुगुणि० ॥३॥

सनेही भोग ते रोग अनादिनो अनादिनो, पीडे छे आतम अङ्ग, सु० । सनेही ते रोगने शमाववा शमाववा, चारित्र छे रे रसांग, सु० ॥४॥

सनेही किंपाकफल अति फूटरां फूटरां, खातां लागे मिष्ट सु० । सनेही विष पसरे ज्यारे अङ्गमां अङ्गमां, त्यारे होवे अनिष्ट, सु० ॥५॥

सनेही दीपग्रही निज हाथमां हाथमां, कोण झंपावे कूप सु० । सनेही नारी ते विषवेलडी वेलडी, विषफल विषय विरूप, सु० ॥६॥

सनेही जो मुजसुं तुम स्नेह छे स्नेह छे, तो व्रत ल्यो थइ उजमाल, सु० । सनेही एहवुं जाणीने परिहरो परिहरो, संसार मायाजाल, सु० ॥७॥

ढाल चोथी—

एहवे प्रभवो आवियो, पांचसे चोरनी साथ रे । विद्याए तालां उघाडियां, धन लेवाने उमङ्ग रे, नमो नमो श्री जम्बूस्वामीने ॥१॥

जम्बूए नवपदध्यानथी, थंभ्या ते सवि चोर रे । थंभ तणी परे थिर रह्या, प्रभवो पाम्यो अचम्ब रे । नमो नमो० ॥२॥

प्रभवो कहे जम्बू प्रते, दो विद्या मुज एह रे । कुमर कहे ए गुरुकने, छे विद्यानुं गेह रे । नमो नमो० ॥३॥

पांच से चोर ते बुझवी, बुझव्या माय ने ताय रे । सासु ससरा नारी बूझवी, संजम लेवाने जाय रे, नमो नमो० ॥४॥

पांच से सत्तावीससुं, परिवर्यो जम्बूकुमार रे सोहम गणधरने कने, लीये चारित्र उदार रे, नमो० ॥५॥

वीरथी वीसमें वर्षे, थया युगप्रधान रे । चौद पूरव अवगाहीने, पाम्या केवलज्ञान रे, नमो० ॥६॥

वरस चोसठ पदवी भोगवी, थापी प्रभव स्वामी रे । अष्ट करमनो क्षय करी, थया शिवगति गामी रे, नमो नमो० ॥७॥

वरस अढार तेरोत्तरे, रह्या पाटण चोमास रे । चरमकेवली ने गावतां, होय लील विलास रे, नमो नमो० ॥८॥

महिमासागर सद्गुरु, तास तणे सुपसाय रे । जम्बू स्वामी गुण गाइया, सौभाग्ये धरिय उच्छाह रे, नमो नमो० ॥९॥

आठ मद की सज्झाय

मद आठ महामुनि वारिये, जे दुर्गतिना दातारो रे ।
श्री वीर जिणेसर उपदिशे, भाखे सोहम गणधारो रे ।
मद आठ० ॥१॥

हांजी जातिनो मद पहेलो कह्यो, पूर्वे हरिकेशीए कीधो रे। चण्डालतणे कुल उपन्यो, तपथी सवि कारज सीधो रे।
मद० ॥२॥

हांजी कुलमद बीजो दाखियो, मरीचिभवे कीधो प्राणी रे। कोडाकोडीसागर भव भम्यो, मद म करो एम मन जाणी रे। मद० ॥३॥

हांजी बलमदथी दुख पामिया, श्रेणिक वसुभूति जीवो रे। जइ भोगव्यां दुख नरकतणां, मुख पाडंता नित रीवो रे। मद० ॥४॥

हांजी सनतकुमार नरेसरु, सुर आगल रूप वखाण्युं रे। रोम रोम काया बिगडी गई, मद चोथानुं ए टाणुं रे। मद० ॥५॥

हांजी मुनिवर संयम पालतां, तपनो मद मनमांहि आयो रे। थया कूरगडु ऋषि राजिया, पाम्या तपनो अंतरायो रे। मद० ॥६॥

हांजी देश दशारणनो धणी, राय दशार्णभद्र अभिमानी रे। इन्द्रनी ऋद्धि देखी बूझीयो, संसार तजी थयो ज्ञानी रे। मद० ॥७॥

हांजी स्थूलिभद्रे विद्यानो कर्यो, मद सातमो जे दुखदायी रे। श्रुत पूरण अर्थ न पामिया, जुओ मानतणी अधिकाई रे। मद० ॥८॥

राय सुभूम षट्खंडनो धणी, लाभनो मद कीधो अपारो रे। हय गय रथ सवि सायर गयुं, गयो सातमी नरक मझारो रे। मद० ॥९॥

इम तन धन जोवन राजनो, म धरो मनमां अहंकारो रे। एह अथिर असत्य सवि कारमुं, विणसे क्षणमां बहुवारो रे। मद० ॥१०॥

मद आठ निवारो व्रतधारी, पालो संयम सुखकारी रे। कहे मानविजय ते पामशे, अविचल पदवी नरनारी रे। मद० ॥११॥

बाहुबली की सज्झाय

राजतणा अतिलोभिया, भरत बाहुबली जूझे रे। मुठी उपाडी मारवा, बाहुबली प्रतिबूझे रे ॥१॥

वीरा मोरा गजथकी उतरो, गज चढे केवल न होय रे। ऋषभ जिनेसर मोकली, बाहुबलीनी पासे रे। वीरा मोरा गजथकी उतरो ब्राह्मी सुन्दरी इम भाषे रे। वीरा० ॥२॥

लोच करी चारित्र लियो, वली आयो अभिमानो रे। लघु बन्धव वांदुं नहीं, काउस्सग्ग रह्या शुभ ध्यानो रे। वीरा० ॥३॥

वरस दिवस काउस्सग्ग रह्या, वेलडीये वींटाणा रे। पंखीये माला घालिया, तापशीते सूकाणा रे। वीरा० ॥४॥

साधवी वचन सुणी करी, चमक्या चित्त मझारो रे। हय गय रथ सहु परिहर्या, वली आव्यो अहंकारो रे। वीरा० ॥५॥

वैरागे चित्त वालियो, मूकी निज अभिमान रे। पग उपाड्यो वांदवा, उपन्युं केवलज्ञान रे, वीरा मोरा० ॥६॥

पहोता केवली परखदा, बाहुबली ऋषिरायो रे। अजरामर पदवी लही, समयसुन्दर वन्दे पायो रे। वीरा० ॥७॥

मायासज्झाय

माया कारमी रे, माया म करो चतुर सुजाण।

आंकणी।

माया वाह्यो जगत् विलुद्धो, दुखीयो थाय अजाण।
जे नर मायाए मोही रह्यो तेणे, स्वप्ने नहीं सुख ठाण।
माया कारमी रे० ॥१॥

नाना मोटा नरने माया, नारीने अधिकेरी।
वली विशेषे अतिघणी व्यापे, घरडाने झाझेरी।
माया कार० ॥२॥

जोगी जती तपसी संन्यासी, नग्न थइ परिवरिया।
ऊंधे मस्तक अग्नि धखन्ती, मायाथी न उगरिया।
माया कार० ॥३॥

माया मेली करी बहु मेली, लोभे लक्षण जाय।
भयथी धन धरतीमां गाडे, उपर विषधर थाय। मा० ॥४॥

माया कारण दूर देशांतर, अटवी वनमां जाय।
जाझ बेसीने द्वीप द्वीपान्तर, जइ सायर झंपलाय। मा० ॥५॥

शिवभूति सरखो सत्यवादी, सत्यघोष कहेवाय।
रतन देखी तेहनुं मन चलियुं, मरीने दुर्गति जाय। मा० ॥६॥

लब्धिदत्त मायाए नडियो, पडियो समुद्र मझार।
मुख मारवणीयो थइने मरियो, पडियो ते नरक दुवार। मा० ॥७॥

इंद्रे तो सिंहासन थापी, संभूये माया राखी।
नेमीसर तो माया मेली, मुक्तिमां थया साखी। मा० ॥८॥

मन वचन कायाए माया, मेली वनमां जाय।
धन्य धन्य तेह मुनीश्वर जेहना, तीन भुवन गुण गाय।
माया० ॥९॥

एहवुं जाणी ने भवि प्राणी, माया मूको अलगी।
समयसुन्दर कहे सार छे जगमां, धर्म रंगसुं वलगी।
माया कारमी रे० ॥१०॥

वयरस्वामी सज्झाय

सांभलजो तुमे अद्भुत वातो, वयरकुमर मुनिवरनी रे ॥आं०॥

षट्महिनाना गुरुझोलीमां, आवे केली करन्ता रे।
तीन वरसना साधवी मुखथी अङ्ग अग्यार भणंता रे। सां० ॥१॥

राजसभामां नही क्षोभाणा, मातसुखडली देखी रे।
गुरुए दीधो ओघो मुहपत्ति, लीधो सर्व उवेखी रे। सां० ॥२॥

गुरु संघाते विहार करे मुनि, पाले शुद्ध आचार रे। बाल-
पणाथी महाउपयोगी, संवेगी शिरदार रे। सां० ॥३॥

कोलापाक ने घेवर भिक्षा, दोय ठामे नवि लीधी रे।
गगनगामिनी वैक्रिय लब्धि, देवे जेहने दीधी रे।
सांभलजो० ॥४॥

दश पूरव भणीया जे मुनिवर, भद्रगुप्तगुरुपासे रे।
क्षीराश्रवप्रमुख जे लब्धि, परगट जास प्रकाशे रे।
सां० ॥५॥

कोडी सेंकडा धनने संचये, कन्या रुक्मिणी नामे रे।
शेठ धनावह दिये पण न लिए, वधते शुभपरिणामे रे।
सांभ० ॥६॥

दइ उपदेश ने रुक्मिणी नारी, तारी दीक्षा आपी रे। युग-प्रधान जे विचरे जगमां, सूरजतेजप्रतापी रे। सां० ॥७॥

समकित शीयल तुम्ब धरी करमां, मोहसागर कर्यो छोटो रे। ते केम बूडे नारीनदीमां, एतो मुनिवर महोटो रे। सां० ॥८॥

जेणे दुर्भिक्षे संघ लइ ने, मूक्यो नगर सुकाल रे। शासन शोभा उन्नति कारण, पुष्फपद्म विशाल रे। सां० ॥९॥

बौद्धरायने पण प्रतिबोध्यो, कीधो शासनरागी रे। शासन शोभा जयपताका, अंबर जइने लागी रे। सां० ॥१०॥

विसर्यो शुंठ गांठिओ काने, आवश्यकवेला जाण्यो रे। विसरे नही पण एह विसरीयो, आयु अल्प पिछान्यो रे। सां० ॥११॥

लाख सोनैये हांडी चढे जेने, बीजे दिन सुकाल रे। इम संभलावी वज्रसेनने, जाणी अणसण-काल रे। सां० ॥१२॥

रथावर्त गिरि जइ अणसण कीधुं, सोहम हरि तिहां आवे रे। प्रदक्षिणा पर्वतने दइने, मुनिवर वन्दे भावे रे। सां० ॥१३॥

धन सिंहगिरि सूरि उत्तम, तेहना ए पटधारी रे। पद्म विजय कहे मुनिपदपङ्कज, नित नमीये नरनारी रे। सां० ॥१४॥

नन्दिषेण मुनिसज्झाय

ढाल पहली—

राजगृही नगरीनो वासी,
श्रेणिकनो सुत सुविलासी हो, मुनिवर वैरागी ।
नन्दीषेण देशना सुणी भीनो,
ना ना कहेतां व्रत लीनो हो, मुनिवर० ॥१॥
चारित्र नित्य चोखुं पाले,
संजम-रमणीसुं महाले हो, मुनिवर० ।
एक दिन जिनपाय लागी,
गोचरीनी आज्ञा मांगी हो, मुनिवर० ॥२॥
पांगरियो मुनि वेरवा,
क्षुधा वेदनी कर्म हरेवा हो, मुनिवर० ।
उंच नीच मध्यम कुल महोटा,
अटतो सञ्जमरस लोटा हो, मुनिवर० ॥३॥
एक उंचो धवल घर देखी,
मुनिवर पेठो शुद्धगवेषी हो, मुनिवर० ।
तिहां जइ दीधो धर्मलाभ,
वेश्या कहे यहां अर्थलाभ हो, मुनिवर० ॥४॥

मुनि मन अभिमान आणी,
खंड करी नाख्यो तरणुं ताणी हो, मुनिवर० ।

सोवन वृष्टि हुइ बार कोडी,
वेश्या वनिता कहे कर जोडी हो, मुनिवर० ॥५॥

ढाल दूसरी

थे तो उभा रहीने अरज, अमारी सांभलो साधुजी ।
थे तो म्होटा कुलना जाणी, मूकी द्यो आंमलो साधुजी ॥१॥

थे तो लइ जाओ सोवन कोड, गाडां उंटे भरी साधुजी,
थां रे केसरीये कसबीने कपडे, मोही रही साधु जी ।

थांरी मूर्ति मोहनगारी, जगतमां सोही रही सा०,
थांरी आखंडीयारो नीको, पाणी लागणो सा० ॥२॥

थांरो नवलो जोवन वेष, विरहदुखभाजणो सा०,
ए तो जंत्र जटित कपाट, कुंची मैं कर ग्रही सा० ।

मुनि वलवा लागो जाम, के आडी उभी रही सा०,
में तो ओछी स्त्रीनी जात, मति कही पाछली सा०,
थे तो सुगुणा चतुर सुजाण, विचारो आगली । सा० ॥३॥

थे तो भोगपुरंदर, हुं पण सुंदरी । सा०,
थे तो पहेरो नवला वेष, घरेणा जरतरी । सा० ।

मणि मुक्ताफल मुगट, विराजे हेमना । सा०,
अमे सजीये सोल शणगार, के पिउरस अङ्गना । सा० ॥४॥

जे होय चतुर सुजाण के, कदीय न चूकशे सा०,
एहवो अवसर साहिब, कदीय न आवशे सा० ।
इम चिंते चित्त मझार, नन्दीषेण वाहलो सा०,
रहेवा गणिकाने धाम के, थइने नाहलो सा० ॥५॥

ढाल तीसरी—

भोगकरम उदय तस आव्यो,
शासन देवीये संभलाव्यो, हो मुनिवर वैरागी ।
रह्यो बार बरस तस आवासे,
वेष मेल्यो एकणपासे, हो मुनिवर० ॥१॥
दश नर प्रतिदिन प्रतिबूझे,
दिन एक मूरख नवि बूझे, हो मुनि० ।
बूझवतां हुई बहु वेला,
भोजन नी थइ अवेला हो मुनिवर० ॥२॥
कहे वेश्या उठो स्वामी,
एह दशमो न बूझे कामी, हो मुनिवर० ।
वेश्या वनिता कहे धसमसती,
आज दशमा तुम ही ज हसती, हो मुनि० ॥३॥

एह वयण सुणीने चाल्यो,
फरी संजमसुं मन वाल्यो, हो मुनि० ।
फरी संजम लियो उल्लासे,
वेष लेइ गयो जिनपासे, हो मुनि० ॥४॥
चारित्र नित चोखु पाली,
देवलोक गयो देइ ताली, हो मुनि० ।
तप जप संयम किरिया साधी,
घणा जीवने प्रतिबोधी, हो मुनिवर० ॥५॥
जयविजयगुरुसीस,
तस हरख नमे निशदीस, हो मुनि० ।
मेरुविजय इम बोले,
एहवा गुरुने कुण तोले, हो मुनिवर० ॥६॥

प्रसन्नचन्द्र मुनिसज्झाय

प्रणमुं तुमारा पाय प्रसन्नचन्द प्रणमुं तुमारा रे पाय । आं० ।
राज छोडी रलीयामणुं रे, जाणी अथिर संसार ।
वैरागें मन वालीयुं रे, लीधो संजमभार प्रसन्न० ॥१॥
शमसाने काउस्सग्ग रही रे, पग उपर पग चढाय ।
बाहु बेउ उंचा करी रे, सूरजसामी दृष्टि लगाय प्रस० ॥२॥

दुर्मुखदूत वचन सुणी रे, कोप चढ्यो ततकाल ।
मनसुं संग्राम मांडीयो रे, जीव पड्यो जंजाल । प्र० ॥३॥

श्रेणिक प्रश्न पूछे तिहां रे, एहनी कुण गति थाय ।
भगवन्त कहे हमणां चवे तो, सातमी नरके जाय । प्र० ॥४॥

क्षण एक अन्तरे पूछियुं रे, सर्वार्थसिद्ध विमान ।
वाजी देवनी दुन्दुभिरे, मुनि पाम्या केवलज्ञान । प्र० ॥५॥

प्रसन्नचन्द मुनि मुगते गया रे, श्री महावीरना शिष्य ।
रूपविजय कहे धन्य धन्य छे एहने, मैं तो जोया
सूत्र प्रत्यक्ष प्रसन्न० ॥६॥

श्री दशवैकालिक सज्झाय

धम्मो मङ्गल महिमानिलो, धर्मसमो नहीं कोय ।
धर्मे सानिध देवता, धर्मे शिवसुख होय । धम्मो० ॥१॥

जीवदया नित पालिये, संजम सत्तरप्रकार ।
बारे भेदे तप तपो, धर्मतणो ए सार । धम्मो० ॥२॥

जिम तरुवरने फूलडे, भमरो रस ले जाय ।
तिम संतोषे आतमा, जिम फूल पीडा न थाय । धम्मो० ॥३॥

इण विधि विचरे गोचरी, लेवे शुद्ध आहार ।
ऊंच नीच मध्यम कुले, धन धन ते अणगार । धम्मो० ॥४॥

मुनिवर मधुकर सम कह्या, नहीं निश्रा नहीं दोष।
लाधे भाडो देहने, अणलाधे सन्तोष। धम्मो० ॥५॥
अध्ययन पहिले दुमपुप्फे, सखरा अर्थ विचार।
पुण्यकलशशिष्य जेतसी, धरमे जय जयकार। धम्मो० ॥६॥

पञ्चमी की सज्झाय

ढाल पहली

श्री वासुपूज्यजिनेश्वरवयणथी रे, रूपकुम्भ कञ्चन कुंभ मुनि दोय। रोहिणीमन्दिरसुन्दर आविया रे, नमी भव पूछे दम्पती सोय, चउनाणी वयणे रे दम्पती मोहिया रे ॥१॥

राजा राणी निज सुत आठनो रे, तप फल निजभव-धारी सम्बन्ध। विनय करी पूछे महाराजने रे, चार सुताना भवप्रबन्ध। चउ० ॥२॥

रूपवती शीलवती ने गुणवती रे, सरस्वती ज्ञानकला भण्डार। जन्मथी रोग शोग दीठो नही रे, कुण पुण्ये लीधो एह अवतार। चउ० ॥३॥

ढाल दूसरी

गुरु कहे वैताढ्य गिरिवरू रे, पुत्री विद्याधरी चार। निज आयु ज्ञानीने पूछियो रे, करवा सफल अवतार, अव-धारो अम वीनती रे ॥१॥

गुरु कहे ज्ञान उपयोगथी रे, एक दिवसनुं आय । एहवा वचन श्रवण सुण्या रे, मनमां विमासण थाय । अव० ॥२॥

थोडामां कार्य धर्मनां रे, किम करिये मुनिराज । गुरु कहे जोग असंख्य छे रे, ज्ञानपंचमी तुज काज । अव० ॥३॥

क्षण आराधे सवि अघ टले रे, सूत्र परिणामे साध्य । कल्याणक नव जिनतणां रे, पंचमीदिवसे आराध्य । अव० ॥४॥

ढाल तीसरी

चैत्रवदि पंचमी दिने, सुण प्राणिजी रे ।
चविया चंद्रप्रभ स्वाम, लहे सुखठाम । सुण प्रा० । आं० ।

अजित संभव अनंतजी, सुण प्राणिजी रे, पंचमी शुदि शिवधाम शुभपरिणाम । सुण० ॥१॥

वैशाखसुदि पंचमी दिने, सुण०, संजम लिये कुंथुनाथ बहुनर साथ, सुण० । जेठसुदि पंचमीदिने, सुण०, सुगति पाम्या धर्मनाथ, शिवपुरीसाथ, सुण प्राणि० ॥२॥

श्रावण सुदि पंचमी दिने सुण०, जन्म्या नेमि सुरंग अतिउछरंग, सु० । मगसरवदि पंचमी दिने, सु०, सुविधि-जन्म शुभसंग पुण्य अभंग । सु० ॥३॥

कार्तिकवदि पंचमी तिथि सु०, संभवकेवलज्ञान करो बहुमान, सु० । दशक्षेत्रे नेउजिणंदना सु०, पंचमीदिनना कल्याण सुखना निधान । सुण प्राणिजी रे ॥४॥

ढाल चोथी

हांरे मारे ज्ञानीगुरुना वयण सुणी हितकार जो,
चार विद्याधरी पंचमी विधिसुं आदरे रे लो। आं। ॥१॥

हांरे मारे शासनदेव पंचज्ञानमनोहार जो,
टाली रे आशातना देववंदन सदा रे लो ॥२॥

हांरे मारे तप पूरणथी उजमणानो भाव जो,
एहवे विद्युत् योगे सुरपदवी वर्यां रे लो ॥३॥

हांरे मारे धर्म मनोरथ आलस तजतां होय जो,
धन्य ते आतम अवलंबी कारज कर्यां रे लो ॥४॥

हां रे मारे देवथकी तुम कूखे लियो अवतार जो,
सांभल रोहिणी ज्ञान आराधन फल घणां रे लो ॥५॥

हांरे मारे चारे चतुरा विनय विवेक विचार जो,
गुण केता आलखिये तुम पुत्री तणारे लो ॥६॥

ढाल पांचमी

ज्ञानीना वयणथी चारों बहेनी,
जातिस्मरण पामी रे। ज्ञानी गुणवंता।
त्रीजा भवमां धारण कीधी,
सीध्यां मननां कामो रे। ज्ञानी गुणवंता ॥१॥

श्री जिनमंदिर पंच मनोहर,
पंचवर्ण जिनपडिमा रे । ज्ञानी० ।

जिनवर आगमना अनुसारे,
करिये उजमणानो महिमा रे । ज्ञानी० ॥२॥

पंचमी आराधनथी पंचम,
केवलज्ञान ते थाय रे । ज्ञानी० ।

विजयलक्ष्मीसूरि अनुभव नाणे,
संघ सकल सुखदाय रे । ज्ञानी० ॥३॥

नागिला की सज्झाय

भवदेव भाइ घरे आविया रे,
प्रतिबोधवा मुनिराज रे ।
हाथमां ते दीधुं घृतनुं पातरुं रे,

भाइ मने आघेरो वलाव रे,
नवी रे परणी ते गोरी नागिला रे ॥१॥

इम करी गुरुजी पासे आविया रे,
गुरुजी पूछे दीक्षानो कांइ भाव रे ।
लाजे नाकारो तेणे नवि कर्यो रे,
दीक्षा लीधी भाइनी पास रे, नवी रे० ॥२॥

बार वरस संजममां रह्या रे,
हैये धरता नागिलानुं ध्यान रे।
हुं मूरख में आ शुं कर्युं रे,
नागिला तजी जीवनप्राण रे, नवी रे० ॥३॥

मात पिता एने नही रे,
एकली अबला नार रे।
तास उपर करुणा करी रे,
हवे तेनी करवी संभाल रे, नवी रे० ॥४॥

शशिवयणी मृगलोयणी रे,
चलवलती मेली घरनी नार रे।
सोल वरसनी सा सुंदरी रे,
सुंदरतनु सुकुमार रे, नवी रे० ॥५॥

उमर पाकेल व्रत जे करे रे,
हरखे ग्रही करमांहि रे।
पाम्या ते शुभमति जेहनी रे,
हुं तो पडीयो दुख जंजाल रे, नवी रे० ॥६॥

भवदेव भांगे चित्ते आवियो रे,
अणओलखी पूछे घरनी नार रे।
कोइए दीठी ते गोसि नागिला रे,
अमे छीये व्रत छोडणहार रे, नवी रे० ॥७॥

नारी कहे सुणो साधुजी रे,
वम्यो न लीए कोइ आहार रे।

हस्ती चढीने खर पर कोण चढे रे,
तमे छो कांइ ज्ञानना भंडार रे, नवी रे० ॥८॥

एडकीए वम्यो आहार जे करे रे,
ते नवि मानव आचार रे,

जे तमे घर घरणी तज्या रे,
हवे तेनी करो शी संभाल रे, नवी रे० ॥९॥

धन्य बाहुबली शालिभद्रजी रे,
धन्य धन्य मेघकुमार रे।

स्त्री तजीने संजम जिणे लियो रे,
धन्य धन्य तेह अणगार रे, नवी रे० ॥१०॥

देवकी सुलसा सुत सागरूरे,
नेमतणी सुणी वाणि रे।

बत्तीस बत्तीस प्रिया तणा रे,
परिहर्या भोगविलास रे, नवी रे० ॥११॥

अंकुशवश गज आणीयो रे,
राजुलमति रहनेम रे।

वचन अंकुशे तिहां वारियो रे,
नागिला भवदेव तेम रे, नवी रे० ॥१२॥

नारी ते नरकनी खाण छे रे,
नरकनी देवणहार रे ।

ते तमे तजो मुनिराजजी रे,
जिम पामो भवजल पार रे, नवी रे० ॥१३॥

नागिलाए नाथने समजावियारे,
पछी लीधो संजम भार रे ।

कर्म खपावी मुगते गया रे,
हुवा हुवा शिव भरतार रे, नवी रे० ॥१४॥

पांचमे भवे जंबू स्वामी जी रे,
परण्या पदमिणी नार रे ।

क्रोड नवाणुं कंचन लाविया रे,
कल्पसूत्र मांहि अधिकार रे, नवी रे० ॥१५॥

प्रभव साथे चोर पांचसे रे,
पदमणी आठे नार रे ।

कर्म खपावी मुगति गया रे,
समय सुंदर सुखकार रे, नवी रे० ॥१६॥

सामायिक के बत्तीस दोष की सज्झाय

चोपाई—

शुभ गुरु चरणे नामी सीस, सामायिकना दोष बत्तीस। कहीसुं त्यां मना दश दोष, दुश्मन देखी धरतो रोष ॥१॥
सामायिक अविवेके करे, अर्थ विचार न हइडे धरे। मन उद्वेग इच्छे यश घणो, न करे विनय वडेरा तणो ॥२॥
भय आणे चिंते व्यापार, फल संशय नियाणा सार। हवे वचनना दोष निवार, कुवचन बोले करे तूंकार ॥३॥
लइ कुंची जा घर उघाड, मुखे लवी करतो वढवाड। आवो आवो बोले गाल, मोह करी हुलरावे बाल ॥४॥
करे विकथाने हास्य अपार, ए दश दोष वचनना वार। काया केरा दूषण बार, चपलासन जोवे दिशि चार ॥५॥
सावद्य काम करे संघात, आलस मोडे उंचे हाथ। पग लांबे बेसे अविनीत, ओठिंगण ले थांभो भीत ॥६॥
मेल उतारे खरज खणाय, पग उपर चढावे पाय। अति उघाडुं मेले अंग, ढांके तेम वली अंग उपांग ॥७॥
निद्राए रस फल निर्गमे, करहा कंटक तरुये भमे। ए बत्तीसे दोष निवार, सामायिक करजो नर नार ॥८॥
समता ध्यान घटा उजली, केशरी चोर हुओ केवली। श्रीशुभवीर वचन पालती, स्वर्गे गई सुलसा रेवती ॥९॥

मन भमरा की सज्झाय

भूल्यो मन भमरा तूं क्यां भम्यो, भम्यो दिवस ने रात ।
मायानो बांध्यो प्राणियो, भमे परिमल जात ।। भूल्यो० ।।१।।
कुम्भ काचो रे काया कारमी, तेनो करो रे जतन ।
विणसतां वार लागे नहीं, निर्मल राखो रे मन्न । भू० ।।२।।
केना छोरु ने केना वाछरु, केना माय ने बाप ।
अन्त समय जासी एकलो, साथे पुण्य ने पाप ।। भू० ।।३।।
आशा तो डुंगर जेवडी, मरवुं पगलांरे हेठ ।
धन संची संची कांइ करो, करो देवनी वेठ ।। भू० ।।४।।
धन्धो करी धन जोडियो, लाखां उपर क्रोड ।
मरतांनी वेला मानवी, लीधो कन्दोरो छोड ।।भूल्यो० ।।५।।
मूरख कहे धन माहरो, धोके धान न खाय ।
वस्त्र विना जई पोढवुं, लखपति लाकडा मांय ।। भू० ।।६।।
भवसागर दुःखजले भर्यो, तरवो छे रे तेह ।
वचमां भय सबलो थयो, कर्म वायरो ने मेह ।। भू० ।।७।।
लखपति छत्रपति सब गया, गया लाख बे लाख ।
गर्व करी गोखे बेसता, सर्व थया बली राख ।। भू० ।।८।।
धमण धखन्ती रही गई, बूझ गई लाल अङ्गार ।
एरण को ठपको मटचो, उठ चल्यो रे लुहार ।। भू० ।।९।।

उवट मारग चालतां, जावुं पेले रे पार ।
आगल हाट न वाणीयो, शंबल लेजो रे सार ॥ भू० ॥१०॥
परदेशी परदेशमें, कुणसुं करो रे सनेह ।
आया कागल उठ चल्यो, न गणे आंधी ने मेह ॥भू० ॥११॥
केइ चाल्या ने चालशे, केइ चालणहार ।
केइ बेठा रे बुढा बापडा, जाये नरकमझार ॥भू० ॥१२॥
जिणघर नोबत बाजती, थातां छत्तीस राग ।
खण्डेर थइ खाली पड्या, बेठण लागा छे काग ॥भू० ॥१३॥
भमरो आव्यो रे कमलमां, लेवा कमलनुं नूर ।
कमलनी वांछाए मांहे रह्यो, जिम आथमते सूर ॥भू० ॥१४॥
सद्गुरु कहे वस्तु वहोरिये, जे कोइ आवे रे साथ ।
आपणो लाभ उगारिये, लेखुं साहिब हाथ ॥ भू० ॥१५॥

५ पद-संग्रह

लघुता भावना पद

लघुता मेरे मन मानी, लही गुरुगम ज्ञान निशानी ।
मद आठ जिन्होने धारे, ते दुर्गति गये बिचारे ।
देखो जगत में प्राणी, दुख लहत अधिक अभिमानी ॥
लघुता मेरे० ॥१॥

शशी सूरज बडे कहावे, ते राहु के वश आवे ।
तारागण लघुताधारी, स्वर्भानुभीति निवारी। लघुता० ॥२॥

छोटी अति जोजनगन्धी, लहे षट्रसस्वाद सुगन्धि ।
करटी मोटाई धारे, ते छार शीश निज डारे ॥ लघु० ॥३॥

जब बालचन्द होइ आवे, तब सहु जन देखण धावे ।
पूनम दिन बडा कहावे, तब क्षीणकला होइ जावे । लघु०॥४॥

गुरुवाइ मनमें वेदे, नृप श्रवण नासिका छेदे ।
अङ्गमांहे लघु कहावे, ते कारण चरण पूजावे । लघु० ॥५॥

शिशु राजधाममें जावे, सखि हिल मिल गोद खिलावे ।
बडा होय जाण नवि पावे, जावे तो सीस कटावे । लघु० ॥६॥

अन्तर मदभाव वहावे, तब त्रिभुवननाथ कहावे ।
इह चिदानन्द यह गावे, रहणी विरला कोउ पावे । लघु०॥७॥

रहेणी कहेणी स्वरूप पद

कथनी कथे सब कोइ, रहणी अति दुर्लभ होइ।
शुक रामको नाम वखाणे, नवि परमारथ तस जाणे।
या विध भणी वेद सुणावे, पण अकल कला नवि पावे। क० ॥१॥
छत्तीस प्रकारे रसोइ, मुख गिणतां तृप्ति न होइ।
शिशु नाम नहीं तस लेवे, रस स्वादत सुख अति लेवे। क० ॥२॥
बन्दी जन कडखा गावे, सुणी सूरा सीस कटावे।
जब रूण्ड मुण्डता भासे, सहु आगल चारण नाशे। क० ॥ ३॥
कहणी तो जगत मजूरी, रहणी है बन्दी हजूरी।
कथनी साकर सम मीठी, रहणी अति लागे अनीठी। क० ॥४॥
जब रहणीका घर पावे, तब कथनी गिनती आवे।
चिदानन्द इम जोइ, रहणी की सेज रहे सोइ। कथ० ॥५॥

भिन्न भिन्न मत स्वरूप पद

मारग साचा को न बतावे।

जासुं जाय पूछियें ते तो, अपनी अपनी गावे। मारग०।
मतवारा मतवाद वाद धर, थापत निज मत नीका।
स्यादवाद अनुभव बिन ताका, कथन लगत मोहे फीका।
मारग साचा० ॥१॥

मत वेदांत ब्रह्मपद ध्यावत, निश्चय पख उर धारी ।
मीमांसक तो कर्म वदे ते, उदय भाव अनुसारी ।
मारग साचा० ॥२॥

कहत बौद्ध ते बुद्ध देव मम, क्षणिक रूप दरसावे ।
नैयायिक नयवाद ग्रही ते, करता कोउ ठेरावे ।
मारग साचा० ॥३॥

चारवाक निज मनःकल्पना, शून्यवाद कोउ ठाणे ।
तिनमें भये अनेक भेद ते, अपनी अपनी ताणे ।
मारग साचा० ॥४॥

नय सरवंग साधना जामें, ते सरवंग कहावे ।
चिदानंद ऐसा जिन मारग, खोजी होय सो पावे ।
मारग साचा० ॥५॥

जैनस्वरूप पद

(राग धन्याश्री)

परमगुरु जैन कहो क्युं होवे,
गुरुउपदेश विना जन मूढा, दर्शन जैन विगोवे ।
परमगुरु० ॥१॥

कहत कृपानिधि शमरस झीले, कर्म मेल जे धोवे ।
बहुलपापमल अंग न धोवे, शुद्ध रूप निज जोवे ।
परमगुरु० ॥२॥

स्याद्‌वाद पूरन जो जाणे, नयगर्भित जस वाचा ।
गुण पर्याय द्रव्य जो बूझे, सोइ जैन है साचा । परमगुरु० ॥३॥
क्रियामूढमति जो अज्ञानी, चालत चाल अपूठी ।
जैन दशा उनमें ही नाही, कहे सो सब ही झूठी ।परम०॥४॥
परपरणति अपनी कर माने, किरियागर्वे घहिलो ।
उनकुं जैन कहो क्युं कहिये, सो मूरखमें पहिलो ।
परमगुरु० ॥५॥
ज्ञान भावज्ञान सबमांही, शिव साधन सद्‌हिये ।
नाम भेषसे काम न सीझे, भाव उदासे रहिये । परमगुरु० ॥६॥
ज्ञान सकलनयसाधन साधो, क्रिया ज्ञानकी दासी ।
क्रिया करत धरत है ममता, याही गले में फांसी ।
परमगुरु० ॥७॥
क्रिया विना ज्ञान नहीं कबहुं, क्रिया ज्ञान विना नांही ।
क्रिया ज्ञान दोउ मिलत रहत है,
ज्यों जलरस जलमांहि । परमगुरु० ॥८॥
क्रिया–मगनता बाहिर दीसत, ज्ञानशक्ति जस भांजे ।
सद्‌गुरु शीख सुने नहीं कबहु, सो जन जनतें लाजे ।
परमगुरु० ॥९॥
तत्त्वबुद्धि जिनकी परिणति है, सकलसूत्रकी कुंची ।
जग जसवाद वदे उन ही को, जैन दशा जस उंची ।
परमगुरु० ॥१०॥

चेतन उपदेश पद

(राग धन्याश्री)

चेतन जो तूं ज्ञान अभ्यासी, आप ही बांधे आप ही छोडे,
निजमति शक्ति विकासी । चेतन० ॥१॥
जो तूं आप स्वभावे खेले, आशा छोडी उदासी ।
सुर-नर-किन्नर-नायकसंपत्ति, तो तुज घरकी दासी ।
चेतन० ॥२॥
मोहचोर जनगुण धन लूटे, देत आस गल फांसी ।
आशा छोड उदास रहे जो, सो उत्तम संन्यासी । चेतन० ॥३॥
जोग लइ पर आश धरत है, याही जगमें हांसी ।
तू जाने मैं गुणकुं संचुं, गुण तो जावे नाशी । चेतन० ॥४॥
पुद्गल की तूं आश धरत है, सो तो सब ही विनाशी ।
तूं तो भिन्न रूप है उन से, चिदानंद अविनाशी । चेतन० ॥५॥
धन खरचे नर बहुत गुमाने, करवत लेवे कासी ।
तो भी दुःख को अंत न आवे, जो आशा नहीं घासी । चेतन० ॥६॥
सुख जल विषमविषय तृष्णा, होत मूढमति प्यासी ।
विभ्रम-भूमि भई पर-आसी, तूं तो सहज विलासी ।
चेतन० ॥७॥
याको पिता मोह दुःख भ्राता, होत विषयरति मासी ।
भव सुत भरता अविरत प्रानी, मिथ्यामति है हांसी ।
चेतन० ॥८॥

आशा छोड रहे जो जोगी, सो होवे शिववासी।
उनको सुजस वखाने ज्ञाता, अंतरदृष्टि प्रकासी। चेतन० ॥९॥

उपशम पर पद

(राग धन्याश्री)

जब लगे उपशम नांही रति, तब लगे जोग धरे क्या होवे, नाम धरावे जति। जब लगे० ॥१॥

कपट करे तूं बहुविध भाते, क्रोधे जले छति। ताको फल तू क्या पावेगो, ग्यान विना नाही बति। जब लगे० ॥२॥

भूख तरस और धूप सहतु है, कहे तूं ब्रह्मव्रती। कपट केलवे माया मंडे, मनमें धरे कती। जब लगे० ॥३॥

भस्म लगावत ठाडो रहेव्रत, कहत है हूं वसती। जंत्र मंत्र जडी बूटी भेषज, लोभवश मूढमति। जब लगे० ॥४॥

बडे बडे बहु पूर्वधारी, जिनमें शक्ति हती। सो भी उपशम छोडी बिचारे, पाये नरक गति। जब लगे० ॥५॥

कोउ गृहस्थ कोउ वैरागी, जोगी जगत जति, अध्यातम भावे उदासी रहेगो, पावेगो तबही मुगति। जब लगे० ॥६॥

श्री नयविजय विबुधवर राजे, जाने जगको रति।
श्री जसविजय उवज्झायपसाये, हेमप्रभु सुख संतति।
जबलगे० ॥७॥

शरीररथपर पद

(राग आशावरी)

पांचो घोडे एक रथ जूता, साहिब उसका भीतर सूता।
खेड़ू उसका मदमतवारा, घोडेकुं दोरावनहारा।पांचो घोडे० ॥१॥

घोडे झूठे ओर ओर चाहे, रथकुं फिरि फिरि उबर वाहे।
विषम पन्थ चिहुं ओर अंधियारा, तो भी न जागे साहिब प्यारा।
पांचो घो० ॥२॥

खेड़ू रथकुं दूर दोरावे, बेखबर साहिब दुख पावे। रथ जङ्गलमां जाय असूझे, साहिब सोचा कछुअ न बूझे। पांचो घोडे० ॥३॥

चोर ठगोरे वहां मली आये, दोनुंकुं मद प्याला पाये।
रथ जङ्गलमें जीरण कीना, मालधनीका उदारी लीना।
पांचो० ॥४॥

धनी जग्या तब खेड़ू बांध्या, रासी परांना ले सिर सांध्या। चोर भगे रथ मारग लाया, अपना राज विनय जिउ पाया। पांचो घोडे० ॥५॥

कायामन्दिर पर पद

(राग ठुमरी)

मंदिर एक बनाया हमने । मंदिर० ॥१॥

जिस मंदिरके दश दरवाजा, एक बुन्दकी माया रे। नानो पंखी जाके अन्दर, राज करे चित्त लाया रे। मन्दिर एक० ॥१॥

हाड मांस जाके नहीं दीसे, रूप रङ्ग नही जाया रे। पङ्ख न दीसे कैसे पिछानुं, षट्रस भोगी भाया रे। मन्दिर एक० ॥२॥

जातो आतो नही कोइ देखे, नही कोइ रूप बतावे रे। सब जग खाया तो पण भूखो, तृप्ति कबही न पावे रे। मन्दिर एक० ॥३॥

जालम पंखी तालम मंदिर, पाछी कोन बतावे रे। उस पंखी को जो कोइ जाने, सो ज्ञानानन्दनिधि पावे रे। मंदिर एक० ॥४॥

उपदेश पद

(काम छे दुष्ट विकारी० यह राग)

मस्त भयो तन धनमें। मुसाफिर मस्त भयो तन धन में। उठ जाना एक छिनमें। मुसाफर०। आं० ॥

इस तन डेरा छोड चलेगा, हंसा परभववनमें। मुसा० ।
मट्टीका मठ फुंक दियेगा, मनकी रहेगी मनमें ॥ मु० ॥१॥
अक्कड फक्कड मूछ मरोडत, त्रास पडावत जनमें। मु० ।
पर्णकुटी जालवतां आखर, गिर पडेगी पवनमें । मु० ॥२॥
तन धन वैभव सुपना जैसा, संध्या रंग गगन में । मु० ।
पलकी खबर नहीं प्राणीने, राव रंक होय छिन में ॥ मु० ॥३॥
क्या अभिमान करे मन मर्कट, सांकलचन्द स्वजन में ।
तन धन अर्पण कर परमारथ, मन धर प्रभु के भजन में ॥
मुसाफर० ॥४॥

समय की दुर्लभता पर पद

(राग-नाथ कैसे गज को बन्ध०)

कदी नहीं समय गयो फरि मलशे,
भव भ्रमण कर्ये शुं वलशे, कदी नहीं० आं० ॥
आ काया छे काचनो कूपो, तटक दइने तटके ।
पाणीना परपोटा सरखी, फटक दइने फटके । कदी० ॥१॥
क्रूर कषाय क्रूरताधारी, पाप कूपमें पटके ।
आ भवसागर पार उतरतां, अधवच जातां अटके ॥
कदी नहीं० ॥२॥

मारुं तारुं करी शुं मोह पामे, क्षणमां मरी जवुं मटके।
चर्म चुंथे शुं चतुर बनीने, चतुरा केरे चटके॥
कदी नहीं० ॥३॥

आ मानवतन चिंतामणि सम, ते कयम व्यर्थ गुमावे।
काल अचानक आवी लेशे, तो पछी नहीं कांइ फावे॥
कदी नहीं० ॥४॥

समकित सुन्दर धारी धरामां, धर्मनुं साधन करजे।
जिनवर नाम जपी समतामां, सहज गुणे तूं ठरजे॥
कदी नहीं० ॥५॥

करी निर्जरा तपथी सारी, कर्म जालने हरजे।
आश्रव दूर करी अंतरथी, शिवपद सहेजे वरजे॥
कदी नहीं० ॥६॥

चेतन उपदेश पद

(गाफिल तूं शोच दिल में)

चेतन तूं चेत जलदी, कर ले सुधार अपना।
दिखता नहीं है तुज को, इस जींदगी का घटना॥
चेतन तूं० ॥१॥

माता पिता वो भाई, निजस्वार्थ के हैं सारे।
छिनमें विछोड तुजको, होते हैं सर्व न्यारे। चेतन० ॥२॥

लक्ष्मी है वीजच्चपला, यौवन भी दिन चारा।
क्षणनाशी जिंदगानी, कर देह का सुधारा। चेतन० ॥३॥
सुंदर महेल वाडी, गाडी तुरंग हाथी।
आखिर ये छोड जाना, नहीं होय कोई साथी। चेतन० ॥४॥
मोटर घोडेकी गाडी, लाडी बहोत प्यारी।
सब शौक की ये चीजें, छिनमें विनाशहारी। चे० ॥५॥
बलवन्त चक्रवर्ती, राजे प्रसिद्ध नामी।
सब राज पाट छोडी, परलोक पंथ गामी। चे० ॥६॥
दुनिया का मोह छोडो, लेवो प्रभु का शरणा।
विनशे ज्युं कर्म फंदा, पावो सौभाग्य झरणा।
चेतन तूं चेत० ॥७॥

उपदेश पद

(देशी भर्तृहरि की)

सार नही है संसारमां, करो मनमां विचार जी।
नेत्र उघाडी जोइये, करिये आत्मसुधार जी।
सार नही है० ॥१॥
जाग जाण भवि प्राणिया, आयु झटपट जाय जी।
वखत गये फरी नावशे, कारज कंइय न थाय जी।
सार नही है० ॥२॥

दश दृष्टान्ते दोहिलो, पामी नर अवतार जी।
देव गुरु जोग पामी ने, करिये जन्मसुधार जी।
सार नही है० ॥३॥

मारुं मारुं करी जीव तूं, फरियो सघले ठाण जी।
आश फली नहीं क्यांइये, पाम्यो दुखनी खाण जी।
सार नही है० ॥४॥

मात पिता सुत बांधवा, चढती समे आवे पास जी।
पडती समे कोइ नवि रहे, देखो स्वार्थ विकास जी।
सार नही है० ॥५॥

रावण सरखो रे राजवी, लंकापति जे कहाय जी।
तीन जगत में गाजतो, मन अभिमान धराय जी।
सार नही है० ॥६॥

अन्त समये गयो एकलो, नहीं गयुं कोइ तस साथ जी।
एम जाणी धर्म सेवीये, रहेशे परभव साथ जी।
सार नही है० ॥७॥

मोहनिद्राथी जागीने, करो धर्मसुं प्रेम जी।
विजयसौभाग्यनी वाणीने, धारो मन धरि प्रेम जी।
सार नही है० ॥८॥

आत्म उपदेश पद

(अवधू ऐसा ज्ञान विचारी–यह देशी)

अवधू आतमरूप पिछानो, जामें तीनजगतसुख मानो ।
अवधू आतम० ॥
पुद्गल के संग पडके चेतन, दुख अनन्ते पाया ।
तृष्णा पिशाचिन के वश पडके, बार बार अथडाया ।
अवधू आतम० ॥१॥
सुमति सुहागण छोडके प्यारे, कुमतिसे प्रेम लगाया ।
दास बना कर अपना तुजको, बहुत ही नाच नचाया ।
अवधू आतम० ॥२॥
परवशता दुःख है अतिभारी, चेतन उसको निवारो ।
दीपकपरवश देखो पतङ्गा, छिनमें प्राण विडारो । अ० ॥३॥
आशापाशमें जकडा चेतन, सर्वदिशामें फिरायो ।
काजसिद्धि कछु नाहीं पावत, निष्फल जन्म गुमायो ।
अवधू आतम० ॥४॥
शुद्धस्वरूपी तूं है सदा का, गुण अनन्ते धारी ।
पर परभावदशा को धरके, करि निज ऋद्धि खुवारी । अ० ॥५॥
बाह्य वस्तु सब नेह निवारी, हो निजभावविलासी ।
सौभाग्यविजय कहे सुनो मेरे सन्तो, छिनमें शिवपुरवासी ।
अवधू आतम० ॥६॥

आशात्याग पर पद

(देशी—मान मायाना करनारा रे०)

दुखकारी सतत दुखकारी रे, चित्त ! आश तजो दुखकारी, सर्वज्ञानतणी हरनारी । चित्त० ॥

आशावशे परघरमां रहीने,
काम कर्युं बहुवारा ।
मान रहित त्यां भोजन कीधुं,
काक परे शक धारा रे । चित्त आशा० ॥१॥

द्रव्यनी आशा दिलमांहि धारी,
नित्य सुणी शठवाणी ।
जी जी करीने आजीजी कीधी,
अन्ते हुई मानहाणी रे । चित्त आशा० ॥२॥

श्रीमन्तपासे नित्य रहीने,
सेवा करी कर जोडी ।
शेठ शेठ कही कंठ सुकायो,
पाई नही एक कोडी रे । चित्त आशा० ॥३॥

तीनजगतना स्वामी विसारी,
कोटिपति मन ध्यावे ।

जास अगल देखो वानर ज्युं नाचे,
आशातणे परभावे रे । चित्त आशा० ॥४॥

बाहिरमाया छण्डी ने केई,
योगीतणा व्रत धारा ।
शंकर ! शंकर ! शब्द को ध्याया,
आशा नहीं पण टारा रे । चित्त आशा० ॥५॥

कलमां कुराननी भणीने सारी,
सांइ बन्या केइ भारी ।
अल्ला अल्ला करी काल गुमायो,
आशा नहीं पण वारी रे । चित्त आशा० ॥६॥

वेद पुराण ने आगम जाणी,
त्यागी बन्या जग नामी ।
ते पण आश तजी न मनथी,
अन्ते रही तस स्वामी रे । चित्त आशा० ॥७॥

आशा तजे जे सर्वप्रकारे,
ईश सदा मन धारा ।
पूज्य थई ते जगमांहे गाजे,
पावे सौभाग्य अपारा रे । चित्त आशा० ॥८॥

गुरु उपदेश पद

सद्गुरु ने मोए भांग पिलाई, मोरी अखियोंमें आगई
लाली, सद्गुरु० ॥
भाव की भांग मरम की मिरचां,
शीयल की साफी बनाई। सद्गुरु ने० ॥१॥
क्रिया की कुण्डी ज्ञान का घोटा,
घुंटनवाला मेरा सांई। सद्गुरु ने० ॥२॥
ऐसी भांग पीवत सुघर नर,
अजर अमर होइ जाई। सद्गुरु० ॥३॥
सद्गुरु कहत मेल मन ममता,
मोक्ष महा निधि पाई। सद्गुरु ने० ॥४॥

प्राणिप्रार्थना

गौ—रोगनिकंदनकरनेहारा दूध अनोपम मैं देती,
बछडे बछडी संतति मेरी जिसपर निर्भर है खेती।
मरने पर भी चमड़ा मेरा तुम चरणोंका है त्राता,
फिर मुझ गोजातिका रक्षण क्यों नहीं करते हे भ्राता! ॥१॥
व्रजवासी वह कानकनैया था प्यारा हम पालनहार,
प्राणोंसे भी गौका त्राता था दिलीपक्षत्रिय सरदार।

उनको मुरखा कहनेवाले वृथा तुम्हारा दोर दमाम,
क्षय जाता है वंश हमारा तुम करते एशोआराम ॥२॥

बकरी—नदीनालोंका पानी पीकर छूटी हम चरती जंगल,
दूध बाल बच्चे देकर हम सबका करती हैं मंगल।
फिर भी प्यारे पुत्र हमारे हाथ कसाइयों के जाते,
तनिक लोभ के खातिर देखो रंक मौतका दुख पाते ॥३॥

बकरा—माता है जब जगदंबा तब हम भी इसके पूत हुए,
मामा है सबका वह तब हम बकरेभी भानजे हुए।
ये कैसे खावेंगे हमको लोगो! तुम कुछ गौर करो,
वामपंथियोंकी भ्रमणा से तुम हमको क्यों ख्वार करो
॥४॥

मुर्गा—कुक्कुट नाम जगतमें मेरा कालज्ञानी कहलाता हूं,
अंधेरी बादलियों में भी ठीक समय बतलाता हूं।
कुदरतकी मैं घडी बना हूं मुझ जीवनकी कदर करो,
पैसेकी बरबादी जिनसे उन घडियों को दूर धरो ॥५॥

सबसाथ—सतजुगमें राजा थे रक्षक अब ये भक्षक हुए करूर,
इनसे नहीं जीवनकी आशा ये तो हैं हमही पर शूर।
तुम अर्जी हम पशुपक्षीकी सुनकर हे लक्ष्मी के पूत!,
दया धर्मका ज्ञान जगतको देवो ज्यों भागे जमदूत
॥६॥

जीवदयाका ज्ञानप्रसारक मंडल जग चिरकाल रहो,
हम जैसे रंकोंको जीवनप्राणदान कर पुण्य लहो।
दया धर्मका मूल जानकर सबजनता सहकार करो,
ऐ धनवंत सज्जनो! इनमें धन दे तुम कल्याण वरो
॥७॥

धर्मी और कर्मीका संवाद

धर्मी—चालो बंधु जाइये, जिनवरजी के गुण गाइये।
आनंद पाइए, भवदुःख से बेडा पार है ॥आं.॥

कर्मी—बात तुम्हारी सची, पिण कई कई बातें कची।
हम को जची, दमडा बडा कलदार है ॥१॥

धर्मी—दमडा देखो नयन परेखो, नरकमांहिं ले जावे।
प्रभु भक्ति विना यह जीव कछु, शुभगति नहिं पावे।
मेरे बंधु प्रभुपूजा परमाधार है ॥२॥

क०—विना द्रव्य दुनिया में देखो, कछु काम ना होवे।
धर्मकर्म करके सहु जग में, अपनी मिल्कत खोवे।
मेरे बंधु दमडा बडा कलदार है ॥३॥

ध०—दमडा दमडा करे दिवाना, फिरे जगत में ज्यादा।
दमडे कारण करे जो अनरथ, तजे धर्ममर्यादा।
मेरे बंधु प्रभुपूजा परमाधार है ॥४॥

क०—प्रभुपूजा करने जावे तो, व्यापार सब ही खोवे ।
फुरसत नहीं पलभर मरने की, धर्मकर्म कुण जोवे ।
मेरे बंधु दमडा बडा कलदार है ॥५॥

ध०—पुन्य कमाई करी पूर्व में, इस भव पाया दमडा ।
इस भव में कछु नहीं करेगा, जवाब लेगा जमडा ।
मेरे बंधु प्रभुपूजा परमाधार है ॥६॥

कर्मी—लाडी वाडी गाडी दमडा, मोटर मौज मनावे ।
खान पान गुलतान ऐश हो, ऐसी इच्छा होवे ।
मेरे बंधु दमडा बडा कलदार है ॥७॥

धर्मी—दास बनो नहीं दमडा के भाई, लो लक्ष्मी को ल्हावो।
दश दृष्टांते दुर्लभ नरभव, निष्फल मत गुमावो ।
मेरे बंधु प्रभुपूजा परमाधार है ॥८॥

धर्मी—समझ आई सब सत्य बातकी, जग जंजाल है कच्ची ।
'नागर' भव तरवा दीपक ज्युं, प्रभुपूजा है सच्ची ।
मेरे बंधु प्रभु पूजा परमाधार है ॥९॥

दोनों—सब मिल आवो जिनगुण गावो, लो नरभव को
ल्हावो । ओसियां-वीरमंडली प्रभु ध्यावो, अजरामर
पद पावो । मेरे बंधु प्रभुपूजा परमाधार है ॥१०॥

रावण के प्रति सीता का वाक्य

अरे रावण तूं धमकी दिखाता किसे,
मुझे मरने का खोफ खतर ही नहीं ।
मुझे मारेगा क्या अपनी खेर मना,
तुझे होने की अपने खबर ही नहीं ॥आं०॥

क्या तूं सोने की लंका का मान क़रे,
मेरे आगे यह मिट्टी का घर ही नहीं ।
मेरे मन का सुमेरु हिलेगा नहीं,
मेरे मन में किसी का भी डर ही नहीं ॥अरे०॥१॥

तूने सहस अठारा जो रानी वरी,
हाय उन पे भी तुज को सबर ही नहीं ।
परतिरिया पे तूने जो ध्यान दिया,
क्या निगोदो नरक का खतर ही नहीं । अरे० ॥२॥

आवे इंद्र नरेंद्र जो मिलके सभी,
क्या मजाल जो शीलको मेरे हरे ।
तेरी हस्ती है क्या शिव राम पिया,
मेरी नजरों में कोइ बशर ही नहीं । अरे० ॥३॥

क्यों ना जीत स्वयंवर तूं लाया मुझे,
मेरी चाह थी मनमें जो तेरे वसी।
था तूं कौन शहेर मुझे दे तो बता,
क्या स्वयंवर की पहोची खबर ही नहीं। अरे० ॥४॥

हुवा सो तो हुआ अब मान कहा,
मुझे रामपे जलदीसे दे तूं पठा।
कहे न्यामत वगर न तूं देखेगा वह,
तेरे सर की कसम तेरा सिर ही नहीं॥
अरे रावण तूं० ॥५॥

श्री जैनज्ञान-गुणसंग्रह

परिशिष्ट १

श्री गोलनगरीय-पार्श्वनाथ-प्रतिष्ठा-प्रबन्ध।

लेखक श्री रेवतीराम जैन

१ स्थान-परिचय

मारवाड-जोधपुर राज्य में एरनपुरा स्टेशन से पश्चिम की ओर जालोर से १४ मील के फासले पर सुकडी नदी के किनारे 'गोलनगर' बसा हुआ है। पंडित सर सुखदेवप्रसादजी की अमलदारी का यह गांव है। गांव के चारों तरफ विविध-वृक्षों की घटा होने से बहुत ही सुहावना और हराभरा दीखता

है। जल यहां का मीठा और तंदुरस्ती को बढानेवाला है। गांव के आसपास कूँए, वाव, रहटों की बहुतायत होने से यहां जल की कमी किसी समय नहीं मालूम होती।

यहां पर गांव में वीसा ओसवालों के दो सौ घर हैं। वे सब संपप्रिय और समानधर्मी हैं। सब मूर्तिपूजक शुद्धसनातन चार थुई मानने वाले जैन हैं। उन का रहन सहन रीत रसम बिलकुल सादा है। मनुष्यों की वेश-भूषा भी ज्यादहतर स्वदेशी खादीमय है। फेशन को वे अपने पास तक नहीं फटकने देते। बिलकुल प्राचीन पद्धति को मान देने में ही वे अपनी इज्जत समझते हैं। धंधा रोजगार अधिकांश में यहां पर ही लेन देन (धीर धार) का है, परन्तु अभी अभी उनमें से कुछ भाग परदेशों में मद्रास तक पहुंच गया है और अच्छा द्रव्योपार्जन कर रहा है। बाललग्न, वृद्धविवाह और कन्याविक्रय का प्रचार यहां बहुत ही कम नजर आता है जिस से इन लोगों की शारीरिक संपत्ति सदा उत्तम बनी रहती है। हर प्रकार से इन का जीवन सदाचारी और निर्दोष है।

यहां पर दो जिन मंदिर हैं। एक पुराना ऋषभदेव भगवान का और दूसरा पार्श्वनाथ का, जो नवीन है। दो जैन श्वेताम्बर धर्मशालायें हैं जिनमें एक हाल ही में बनी है। पुराना एक उपाश्रय भी है जो दोनों जैनमंदिरों के बीच में आया हुआ है। यहां पहले अच्छे अच्छे प्रतिष्ठित तपागच्छ के यति हो

गये हैं। पं० यति श्री भक्तिसोमजी भी जो अभी थोडे ही समय पर स्वर्गवासी हो गये हैं अच्छे तपस्वी यति थे। इस समय यहां भक्तिसोमजी के शिष्य सुमतिसोमजी यति रहते हैं।

२ पार्श्वनाथ का मंदिर

यों तो गोल में भगवान् ऋषभदेव का मंदिर भी बडा है परन्तु पार्श्वनाथ का मंदिर जो 'नया मन्दिर' के नाम से प्रसिद्ध है बडा आलीशान है। द्वार पर झरोखा, भीतर मण्डप, दूसरे खण्ड पर चौमुखजी और चारों तरफ विशाल जगती की वजह से मन्दिर की शोभा अधिक बढ गयी है।

इस मंदिर की नींव विक्रमसंवत् १९५३ की साल में पडी थी और संवत् १९७५ में यह संपूर्ण भी हो गया था, परन्तु प्रतिष्ठा जल्दी कराने का विचार होते हुए भी अनुकूल संयोग न मिलने से बातें करते करते १५ वर्ष व्यतीत हो गये। सच कहा है—

"वृक्षः फलति कालेन, काले धान्यं च जायते" अर्थात् 'समय आने पर वृक्ष फलता है और समय पर ही धान्य होता है'। आखिर गोल के मंदिर की प्रतिष्ठा का समय भी आ पहुंचा। भांडुआ महावीरजी यात्रा जाते हुए पंन्यास श्री हिम्मतविमलजी गणि गोल पहुंचे और असेंसे तैयार हुए

मंदिर की प्रतिष्ठा करा देने की श्रावकों को प्रेरणा की। प्रतिष्ठा कराना निश्चित हुआ और इस कार्य के लिये मुहूर्त और विज्ञप्ति करने को मुनि महाराज श्रीकल्याणविजयजी सौभाग्यविजयजी के पास लुणावे जाने के लिये पंच मुकरिर हुए।

३ लुणावा के लिये पंचों का प्रयाण

सं० १९९० का महाराज साहब का वर्षा चौमासा लुणावा (मारवाड) में था, जो गोलसे करीब बत्तीस कोस दूर था। महाराज अभी वहीं विराजते थे। पंच गोलसे रवाने हो कर मिगसर शुदि १३ को लुणावा पहुंचे और सब वृत्तान्त निवेदन पूर्वक विनति की कि 'आप हमें मंदिरजी की प्रतिष्ठा का मुहूर्त निश्चित कर फरमायें और गोल पधारने की विनति स्वीकार कर उधर विहार करने की कृपा करें।' महाराज साहब ने कहा-'क्या यह निश्चय कर लिया है कि प्रतिष्ठा अवश्य ही करायंगे?। पंचों ने उत्तर दिया-'अब हमारा दृढ निश्चय है कि प्रतिष्ठा अवश्य करानी।'

इस के बाद महाराजश्रीने पंचाङ्ग देखकर सं. १९९१ के द्वितीय वैशाख शुदि ५ का शुभ मुहूर्त बताया।

इस के बाद पंचों ने अर्ज की कि 'गुरुदेव! हमलोगों की इच्छा अंजनशलाका कराने की है सो आज्ञा फरमाइये और

किन किन भगवान की किस प्रमाण की मूर्तियों की हमारे जरूरत है सो भी बतावें ता कि उन के बनाने का ऑर्डर दे दिया जाय !'

इस पर महाराजश्रीने कहा-'आप लोगों की भावना अच्छी है परन्तु मेरी रायमें तो प्राचीन मूर्तियों को कहीं से प्राप्त कर प्रतिष्ठा कराना ही अच्छा है। क्यों कि नवीन मूर्तियों की अपेक्षा प्राचीन मूर्तियां कई कारणों से अच्छी हैं।'

उत्तर में पंचों ने कहा-'हम को कुल ११ मूर्तियों की जरूरत है जो मनपसंद मिलनी कठिन हैं, इसलिये हमारी इच्छा तो नवीन बिंब मंगवा कर अंजनशलाका कराने की ही है फिर तो जैसी आप की आज्ञा।'

महाराज ने कहा-'ठीक है, एक वार आप मूर्तियों की तलाश में कहीं बाहर तो जायं। इस पर भी पता न लगेगा तो फिर देखा जायगा।'

पंचों ने महाराज साहब की सलाह मंजूर की और गोल की तरफ जल्दी विहार करने की प्रार्थना की।

महाराज ने फर्माया-'आगामी माघ शुदि ५ से यहां पर उपधान होने वाले हैं और यह काम भी हमारे आधार पर उठाया गया है इसवास्ते उपधान की समाप्ति तक उधर विहार नहीं हो सकेगा। इस कार्य को समाप्त होते करीब आधा

चैत्र यहां पूरा हो जायगा, फिर यहां से गोल की तरफ विहार करेंगे।'

मिगसिर शुदि १५ पूर्णिमा के प्रभात समय में पंच वापस गोल के लिये रवाने हुए और पौष वदि ६ के दिन मुनिमहाराज भी कुछ समय के लिये लुणावा से बाली की तरफ विहार कर गये। बाली में करीब १७ वर्ष से जैनसंघ में बडा भारी क्लेश चल रहा था सो महाराज साहब के पुण्य प्रभाव से तीन ही दिन में उस का अंत आ गया और संप हो गया। वहां से आप खुडाला, सांडेराव, दूजाना, बलाना होते हुए तखतगढ पधारे।

४ अंजनशलाका का निश्चय

जो कि मुनिमहाराजने पंचों को प्राचीन मूर्तियों की तलाश करने के लिये कहा था परंतु गोल के श्रीसंघने तो दृढनिश्चय कर लिया था कि गोल में अंजनशलाका ही करायेंगे। महाराज तखतगढ पधारे उस वक्त फिर गोल के पंच सूत्रधार सोमपुरा थानजी कबीरजी हरजीवाले को साथ में लेकर तखतगढ गये और मूर्तियों के नाम और परिमाण देने की प्रार्थना की। महाराज साहबने इस वक्त भी प्राचीन मूर्तियोंकी खोज में जाने को कहा परन्तु आये हुए सज्जनोंने कहा कि हमारे गांववालों का निश्चय अंजनशलाका कराने का ही है

इसवास्ते आप आज्ञा फरमावें। तब महाराजश्रीने धारणागति-यंत्रानुसार गोल के लिये मूलनायक पार्श्वनाथ भगवान् तथा अन्य मूर्तियों के नामों का लिस्ट करके दिया। वहांसे दो जने गजधर सोमपुरा के साथ जयपुर मूर्तियों का ओर्डर देने गये और दो जने गांव चांदराईवाले मिस्त्री दानाजी लोहार को साथ ले सुमेरपुर दंड कलशों का सामान लेने गये।

महाराज साहब तखतगढ में कुछ समय तक ठहर कर फिर वहां से विहार कर पौष शुदि ४ लुणावे पधारे।

५ महाराज साहब का लुणावा से गोल के लिये विहार

चैत्रवदि में उपधान की माला के उत्सव पर फिर गोल के पञ्च लुणावे गये और वहां से जल्दी विहार कर पञ्चों के साथ पधारने की प्रार्थना की, जिसके उत्तर में महाराजश्री ने फरमाया कि 'हमारे साथ किसी के रहने की जरूरत नहीं है। हम चैत्रवदि अमावस्या तक यहां से विहार नहीं करेंगे। चैत्रशुदि १ के दिन यहां से विहार होगा और चैत्रशुदि १० को गोल पहुंचेंगे और उसी दिन नोकारसियों के चढावे बोले जायंगे।'

शांतिपूर्वक उपधान की समाप्ति चैत्रवदि में हो गयी। चैत्रशुदि १ के दिन दोनों मुनिमहाराजों ने लुणावा से विहार किया और वीसलपुर, सुमेरपुर, वांकली, पावटा, अगवरी, आहोर, लेटा, जालोर और पिंजोपुरा इन गांवों में एक एक

दिन की स्थिरता की । चैत्रशुदि ९ मी से गोल में महाराज साहब की अगवानी की तैयारियां हो रही थीं । चैत्रशुदि १० के प्रातःसमय महाराज साहब ने पिंजोपुरा से गोल के लिये विहार किया ।

जालोर से पिंजोपुरा तक जालोर का श्रावकसमुदाय और पिंजोपुरा से केसवणा तक पिंजोपुरा तथा केसवणा के श्रावक तो साथ में थे ही परन्तु केसवणा के नजदीक पहुंचते पहुंचते गोल के भी बहुत से श्रावक सामने आ मिले थे । केसवणा के मन्दिरजी में दर्शन कर श्रावकों को माङ्गलिक सुना महाराज ने आगे विहार किया । अब तक सेंकडों मनुष्यों का मेला जम चुका था और केसवणा तथा गोल के बीच भाविक मनुष्यों का खासा तांता सा लग गया था ।

लगभग आठ बजे मुनिमहाराज गोल पहुंचे । जैनसंघ तो क्या सारा गांव ही महाराजसाहबों के दर्शनार्थ बाहर निकल आया था । बडे ठाठ और उत्सवपूर्वक नगरप्रवेश हुआ । नवीनधर्मशाला में मुकाम किया और माङ्गलिक सुन कर सभा विसर्जन हुई ।

६ मुहूर्त विषयक शंका-निराकरण

जब गोल के पंच लुणावा से मुहूर्त पूछ कर अपने स्थान गोल आये और आगामी द्वितीयवैशाखशुक्ल ५ मी का मुहूर्त

जाहिर किया तो सारा गांव आनंदित हुआ, परन्तु यह धार्मिक कार्य भी कतिपय ईर्षालुओं को पसंद नहीं आया। गोल के चोमासी पं० भक्तिसोमजी प्रतिष्ठा कराने का निश्चय हुआ उस समय पालिताणे में थे, पंचों ने चिट्ठी देकर उन को भी गोल बुलाया। परन्तु विघ्नसंतोषी ईर्षालु लोगोंने उन को भी बहकाया कि द्वितीय वैशाखशुदि ५ का मुहूर्त अच्छा नहीं है। यतिजी सरलस्वभावी थे, उन में स्वयं सच झूठ की परीक्षा करने का सामर्थ्य नहीं था अतएव लोगों की बातें सुन कर शंकाकुल हो गये, मुहूर्तविषयक अपना अभिप्राय उन्होंने गोल के श्रावकों को भी दर्शाया, परन्तु श्रावक महाराज पर बडे श्रद्धालु और विश्वासी थे, उन्होंने उत्तर दिया 'मुनिमहाराज कल्याणविजयजीने अगर काली अमावस्या का दिन भी बताया होता तो हमको मंजूर था।' श्रावकों की यह दृढता देख बातें बनानेवाले चुप हो जाते थे।

महाराज गोल पहुंचे उसी दिन दो पहर को पं. भक्तिसोमजी को अपने पास बुलवाया और पूछा कि क्या मुहूर्त के विषय में आप को कुछ शंका है?।

भक्तिसोमजी—हां मेरे विचार में वैशाख शुदि ३ अथवा ६ के दिन ठीक जंचते हैं।

महाराज—शुदि ५ मैं क्या कमी है और ३ तथा ६ में विशेषता सो बताइये।

भक्तिसोमजी-आप की आज्ञा हो तो पं. गौरीशंकरजी को बुलवा लूं ?

महाराज—खुशी से बुलवाइये और किसी अन्य विद्वान् पर श्रद्धा हो तो आप उस को भी बुला सकते हैं। इस पर पंडित गौरीशंकरजी श्रीमाली बुलाये गये जो १० मिनट में ही आ गये। जोषीजी कुछ ज्योतिष की पुस्तकें भी साथ ले आये थे।

महाराजश्रीने पूछा-कहिये पंडितजी! प्रतिष्ठासंबन्धी मुहूर्त के विषय में आप का क्या मत है?।

पंडितजी—पंचमी से षष्ठी का दिन मुझे ठीक जंचता है, क्योंकि उस दिन 'रवियोग' है और वास्तुचक्र (कलश-चक्र) भी मिलता है।

महाराज—प्रतिष्ठा के मुहूर्तमें रवियोग अवश्य होना ही चाहिये ऐसा कोई नियम नहीं है। कलशचक्र के संबन्धमें भी एकान्त नहीं है कि उसके सिवा प्रतिष्ठा हो ही न सके। कलशचक्र एक नक्षत्रयोग है, और केवल नक्षत्रबल पर ही प्रवेशादिकार्य करते समय इस का होना जरूरी माना गया है। जहां पंचांगशुद्धि की गवेषणा की जाती है, वहां कलशचक्र पर आधार नहीं रहता। इसी कारण प्राचीन ज्योतिषशास्त्रोंमें कलशचक्र की चर्चा ही नहीं है।

पंडितजी—'अच्छा, इस में क्या लिखा है पढ़िये तो' यह कहते हुए उन्होंने पुस्तकमें से नोट किये हुए एक दो श्लोक महाराज के हाथ में दिये।

महाराज—इस में पंचम रवियोगात्मक उपग्रह का फल लिखा है और यह ठीक भी है, परंतु यह दोष सर्वत्र वर्जना ही चाहिये ऐसा एकान्त नियम नहीं है।

पंडितजी—आप इस का परिहार बतायंगे तो मेरी शंका दूर हो जायगी। इस पर महाराजने आरंभसिद्धिवार्तिक और मुहूर्तचिन्तामणि की पीयूषधारा टीका में से श्लोक बता कर कहा देखो इस में स्पष्ट लिखा है कि 'उपग्रह' का दूषण 'कुरु' और 'बाल्हीक' देश में ही माना है (उपग्रहः स्यात्कुरुबा-ल्हिकेषु) अन्यत्र उपग्रह शुभ है (अन्यत्र शुभमेव)

ऊपर का खुलासा सुन कर पंडितजी बोले–अब मेरे मन में कोई शंका नहीं रही। अब मैं निस्संकोचभाव से स्वी-कार करता हूँ कि पंचमी का दिन श्रेष्ठ है। उस में दोष की मुझे जो शंका थी वह निकल गयी।

इस प्रकार पं. भक्तिसोमजी और पंडित गौरीशंकरजी जो कि मुहूर्त विषयमें शंकाशील थे, दो ही घंटों में निश्शंक हो गये, इस घटना से श्रावकसंघ भी आश्चर्यचकित हुआ कि दो ही घडी में महाराजने क्या जादू कर दिया कि मुहूर्त के संब-

न्धमें विरुद्ध बातें करने वाले भी सहमत और अनुकूल हो गये।

७ अंजनशलाका कौन करा सकता है?

मुहूर्तकी ही तरह ईर्षालु लोगोंने यह भी शंका खडी कर रक्खी थी कि 'अंजनशलाका आचार्य ही कर सकते हैं, तो मुनि कल्याणविजयजी यह कार्य कैसे करेंगे।' गोल के श्रावकों से इस बात का कोई जिकर करता तो वे तो यही उत्तर देते कि 'यह बात महाराज को पूछो, हम को तो इस में कुछ शंका ही नहीं है, क्योंकि उनको करने का अधिकार होगा तभी वे अंजनशलाका का कार्य करना स्वीकार करते हैं'। ईर्षालु लोग इस विषय में तरह तरह की गप्पें हांकते थे, परन्तु पूज्य मुनिमहाराज के सामने आकर पूछने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी। और तो क्या, सुनने मुजब तपगच्छ के प्रसिद्ध आचार्य श्रीविजयनेमिसूरिजी तक यह कहते थे कि आचार्य के सिवा दूसरा अंजनशलाका नहीं कर सकता, परन्तु मुनिराज की विद्वत्ता और बहुश्रुतता सभी को मालूम थी, इस से उन को पूछने का किसी को साहस नहीं होता था।

गुरां साहब पं. भक्तिसोमजी के दिल में भी यह शंका हो रही थी कि महाराज स्वयं आचार्य न होते हुए अंजनशलाका करने की जबाबदारी अपने ऊपर कैसे लेते हैं, परंतु

उनका भी महाराज के सामने पूछने का साहस नहीं होता था, परन्तु इस लोकचर्चा से महाराज भी अनजान नहीं थे, इस संबन्ध में आप कहा करते थे कि 'क्या ही अच्छा हो कि लोग हम से रूबरू मिल कर इस विषय की शंका दूर कर दें।' परंतु जब इस विषय में आप को कोई पूछने वाला नहीं मिला तब आपने स्वयं पं. भक्तिसोमजी के पास यह चर्चा छेडी कि क्या अंजनशलाका करने के अधिकारी के विषयमें भी आप को कुछ शंका है ? । इस पर यतिजीने कहा–हां लोगों की बातें सुनने से मैं इस विषयमें संशयग्रस्त हूं और आप से पूछना चाहता था परंतु पूछने का साहस नहीं हुआ, आज आपही ने प्रसंग छेडा है तब मैं भी आप से इस विषय का खुलासा चाहता हूं कि जो यह बात कही जाती है कि आचार्य के विना अंजनशलाका हो नहीं सकती सो इस में कुछ शास्त्र का आधार भी है या केवल दन्तकथा मात्र है ? । इस प्रश्न के उत्तरमें आपने फरमाया कि इस कथन में कुछ भी सत्यता नहीं है कि 'आचार्य के सिवा दूसरा कोई अंजनशलाका कर नहीं सकता ।' प्रमाण देते हुए आपने कहा–आचारदिनकर ग्रन्थान्तर्गत अंजनशलाका–प्रतिष्ठाविधि में १ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ साधु, ४ जैन ब्राह्मण और ५ क्षुल्लक ये पांच अंजनशलाका–प्रतिष्ठा करने के अधिकारी बताये हैं ।[१]

---

१ आचार्यैः पाठकैश्चैव, साधुभिर्ज्ञानसत्क्रियैः ।
जैनविप्रैः क्षुल्लकैश्च, प्रतिष्ठा क्रियतेऽर्हतः ॥" (आचारदिनकर)

आगे आपने फर्माया कि 'आचार्य विना प्रतिष्ठा नहीं हो सकती' यह मान्यता खरतरगच्छवालों की होना संभव है, क्योंकि तपागच्छीय उपाध्याय धर्मसागरजीने 'औष्ट्रिकमतोत्सूत्रदीपिका' नामक अपने ग्रन्थमें खरतरगच्छ की मान्यताओं का खण्डन करते हुए लिखा है कि 'आचार्य विना प्रतिष्ठा का निषेध करना न्यूनप्ररूपणात्मक मिथ्यात्व है।' इस के समर्थन में वे कहते हैं 'यह कथन प्रतिष्ठाकल्पादिग्रन्थों से विरुद्ध है। क्योंकि वहां उपाध्याय आदिको भी प्रतिष्ठा-अंजनशलाका करने की आज्ञा दी गई है, और श्रीशत्रुंजय माहात्म्यमें सामान्य साधु भी प्रतिष्ठा--अंजनशलाका कर सकता है ऐसा प्रतिपादन है।'[1]

८ अंजनशलाका ही प्रतिष्ठा है

आज काल मारवाड में एक रूढि सी हो गई है कि पुरानी मूर्तियां मन्दिरजी में स्थापन करने के विधिविधान को तो प्रतिष्ठा कहते हैं और नवीन मूर्तियों पर संस्कार कर पूजनीय बनाने के विधान को 'अञ्जनशलाका।' परन्तु असल

---

१ "आचार्यं विना प्रतिष्ठानिषेधः प्रतिष्ठाकल्पादिना विरुद्धः। तत्रोपाध्यायादीनामप्यनुज्ञातत्वात्। श्रीशत्रुंजयमाहात्म्ये सामान्यसाधुरपि प्रतिष्ठाकर्तेति।"

(औष्ट्रिकमतोत्सूत्रदीपिका पत्र ५)

बात तो यह है कि जिससे नयी मूर्तियां पूजनीय बनती हैं उसी विधान का नाम 'प्रतिष्ठा' है, और प्राचीन मूर्तियों को मन्दिर में पधराने और स्थापन करने के विधान का नाम 'बिंबप्रवेशविधि', यही कारण है कि नवीनबिंबों को अञ्जन-शलाकापूर्वक पूजनीय करने के विधान करने वाले ग्रन्थों का नाम 'प्रतिष्ठाकल्प' पड़ा और प्राचीनबिंबों को स्थापन करने संबन्धी विधि के ग्रन्थ 'बिंबप्रवेशविधि' इस नाम से प्रसिद्ध हुए हैं।

९ कार्यारंभ-नोकारसियों के चढावे

लोगों के मन की शंकाओ का समाधान करने के बाद महाराजसाहब ने संघ को धर्मशाला में इकट्ठा होने की सूचना की और संघ इकट्ठा हुआ, तब आपने फर्माया कि 'आज का दिन श्रेष्ठ है, इस वास्ते काम की शुरुआत आज ही हो जानी चाहिये। गोधूलिक का समय अच्छा है, उस समय जाजम बिछा कर चढावा बोलना शुरू करना चाहिये।' महाराजसाहब की आज्ञा संघ ने मस्तक पर चढाई और कहे हुए समय में जाजम का मुहूर्त किया और अञ्जनशलाका के दस दिन और शान्तिस्नात्र का एक दिन मिलकर कुल ११ दिन की ग्यारह नोकारसियों के चढावे बोले गये जो नीचे लिखे जाते हैं।

३००१) अक्षरे रुपया तीन हजार एक का चढावा सं० १९९१ द्वितीय वैशाख वदि ११ की नोकारसी का

मुंहता छोगालालजी मुलताणमलजी कपूरचन्दजी के बेटों पोतों की तरफ से हुआ।

२२०१) अक्षरे रुपया बाईस सौ एक का चढावा द्वितीय वैशाख वदि १२ की नोकारसी का सा० साहेबचन्दजी कुनणमलजी की तरफ से हुआ।

२२०१) अक्षरे रुपया बाईस सौ एक का चढावा द्वितीय वैशाख वदि १३ की नोकारसी का सा० चुनीलालजी कस्तूरजी की तरफ से हुआ।

२५०१) अक्षरे रुपया पचीस सौ एक का चढावा द्वि० वै० वदि १४ की नोकारसी का मुंहता चुनीलालजी ओकचन्दजी फुसाजी के बेटों पोतों की तरफ से हुआ।

२५०१) अक्षरे रुपया पचीस सौ एक का चढावा द्वि० वै० वदि ०)) की नोकारसी का मुंहता जेसाजी धुडाजी की तरफ से हुआ।

२४०१) अक्षरे रुपया चोईस सौ एक का चढावा द्वि० वै० शुदि १ की नोकारसी का सा० गणेशमलजी हरकचन्दजी भीमराज सुरताजी के बेटों पोतों की तरफ से हुआ।

२३०१) अक्षरे रुपया तेईस सौ एक का चढावा द्वि० वै० शुदि २ की नोकारसी का सा० कालुजी माणकजी की तरफ से हुआ।

३५०१) अक्षरे रुपया पेंतीस सौ एक का चढावा द्वि० वै० शुदि ३ की नोकारसी का सा० भेराजी राजमल गणेशमल की तरफ से हुआ।

४००१) अक्षरे रुपया चार हजार एक का चढावा द्वि० वै० शुदि ४ की नोकारसी का मुंहता फोजमलजी हजारीमलजी की तरफ से हुआ।

१३००१) अक्षरे रुपया तेरह हजार एक का चढावा द्वि० वै० शुदि ५ अञ्जनशलाका की नोकारसी का सा० दीपचन्दजी सागरमल सदाजी की तरफ से हुआ।

५००१) अक्षरे रुपया पांच हजार एक का चढावा द्वि० वै० शुदि ६ की नोकारसी का मुंहता भलेचन्दजी पुकराजजी की तरफ से हुआ।

ऊपर मुजब ग्यारह नोकारसियों के चढावों की कुल रकम ४२६११) अक्षरे बयालीस हजार छः सौ और ग्यारह रुपया हो गई जिससे सकल संघ को अतीव हर्ष प्राप्त हुआ, इतना

चढावा एक ही जाजम पर होना यह उक्त महाराजश्रीका अतिशय और उस दिन के पुष्यार्कयोग का प्रबल प्रभाव समझा गया।

१० कुंकुम पत्रिका

नौकारसियाँ निश्चित हो जाने के बाद महाराजसाहब के द्वारा क्रियाविधान के दिन मुकरर होकर आपही के तत्त्वावधान में श्री सकल जैन संघ को निमन्त्रित करने के लिये कुंकुम-पत्रिका का मसोदा तैयार हो गया जो अक्षरशः नीचे मुजब है।

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

॥ अनन्तलब्धिनिधानाय श्रीगौतमस्वामिने नमः ॥

॥ परमसुविहितशिरोमणितपागच्छाचार्य
श्री १००८ श्री विजयसिद्धिसूरी-
श्वरपरमगुरुभ्यो नमः ॥

श्रीपार्श्वनाथजिन अंजनशलाका-प्रतिष्ठामहोत्सव
श्री गोलनगरे

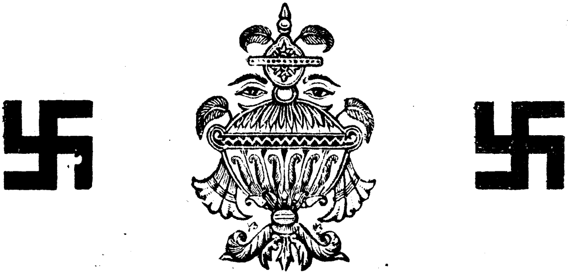

श्रीगोलनाम्नि नगरे, जयति जिनो नाभिराजकुलतिलकः ।
यो मङ्गलमयमूर्ति-र्वृषभ इति प्रोच्यते विबुधैः ॥१॥

चैत्ये नवे युगलभूमिवरे द्वितीये,
ऽपूर्वोत्सवेन विधिना च प्रतिष्ठ्यमानः ।
नानाभिधानविदितोऽजितसत्प्रभावः,
पार्श्वो ददातु भविनां हृदयेप्सितानि ॥२॥

आनन्दाद्वयपूर्णमङ्गलघटं मार्तण्डमुख्यैर्ग्रहैः,
संसेव्यं दिगधीशदेवनिकरैराराधितांह्रिद्वयम् ।
संघोल्लाससमुद्रशीतकिरणं सत्यप्रतिष्ठास्पदं,
लोकालोकविदं सुशान्तिनिलयं वन्दे जिनाधीश्वरम् ॥३॥

गच्छे श्रीविजयादिसिद्धिसुगुरोः प्राप्तः प्रतिष्ठां परां,
सच्चारित्रिसमाजलब्धसुयशा वैदुष्यमुख्यैर्गुणैः ।
कल्याणो विजयान्तशब्दविदितः सौभाग्यनामेत्ययम्,
भूयास्तां मुनिसत्तमौ सकुशलौ भव्यात्मचेतोमुदे ॥४॥

गोलनगर रलियामणो, नदी सूखडी तीर ।
विविधवृक्ष सोहे जिहां, अमृतमीठां नीर ॥१॥
पार्श्वनाथ आदि बहु, जिनवरबिंब सनूर ।
अञ्जनशलाका कारणे, प्रगुणित गुण भरपूर ॥२॥
तत्कारण उत्सव तणी, रचना माधव मास ।
अवधारी अम वीनति, संघ पधारो खास ॥३॥

स्वस्ति श्री पार्श्वजिनं प्रणम्य तत्र श्री ...... नगरे महाशुभस्थाने विराजमान पंचपरमेष्ठिमहामन्त्रस्मारक देवगुरुभक्तिकारक सम्यक्त्वमूलद्वादशव्रतधारी जिनशासनशोभाकारी चतुरसुजान परमबुद्धिनिधान इत्यादि अनेकशुभोपमालंकृत परमपूज्य श्रीसकलसंघसमस्त योग्य..एतान् श्रीगोलनगरसे लि० संघसमस्त का श्री जयजिनेन्द्र वांचना जी ।

यहां पर श्री देवगुरु के प्रतापसे आनन्द मङ्गल वर्त रहा है, आप साहिबों का सदा आनन्द मङ्गल चाहते हैं ।

विशेष नम्र विनति यह है कि हमारे यहां पर श्रीदेवगुरु और आप श्री संघ के प्रताप से द्विभूमिक शिखरबन्ध जिनमंदिर बन कर तैयार हुआ है जिस में विराजमान करने के लिये श्रीपार्श्वनाथ आदि अनेक जिनबिंबों की अंजनशलाका प्रतिष्ठा और भगवत्स्थापना का शुभ मुहूर्त मुनिमहाराज श्री १००८

श्रीकल्याणविजयजी के सदुपदेश से विक्रमसंवत् १९९१ (मारवाड की गणना मुजब १९९०) के द्वितीयवैशाख शुदि ५ वार शुक्र ता० १८ मई ईसवी सन् १९३४ के दिन करना निश्चित किया है। यह अंजनशलाका-प्रतिष्ठा परमपूज्य प्रातः स्मरणीय सुविहितसूरिशिरोमणि तपागच्छाचार्य श्री१००८ श्रीविजयसिद्धिसूरीश्वरजी महाराज की आज्ञानुसार उन्ही के सूरिमंत्रोपमंत्रितवासक्षेप से पुरातत्त्ववेत्ता मुनिश्रीकल्याणविजयजी तथा मुनि सौभाग्यविजयजी के शुभहस्त से होगी और इसका क्रियाविधान महाराज साहिब की आज्ञानुसार गुरां साहिब श्रीभक्तिसोमजी करावेंगे।

इस महोत्सवसंबन्धी शुभकार्य करने के लिये नीचे मुजब दिन मुकरर किये गये है—

(१) वैशाख वदि ११ बुध-जलयात्रा का वरघोडा, वेदिकापूजन, मंडपमें प्रतिमास्थापन, तथा कुंभस्थापन होगा और चंदा मुंहता छोगालाल मुलतानमल धींगडमल बेटा पोता कपुरचंदजी की तरफ से नवपदजी की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(२) वदि १२ गुरु-नंद्यावर्त तथा अष्टमंगल पूजन-स्थापन होगा और सा० साहेबचंद, कुनणमल, रिखबदास, हमीरमल मुनीलाल मेवरचंद, रूपराज, विजेराज, बेटा पोता ताराचंदजी की तरफ से नंदीश्वरद्वीप की पूजा तथा नोकारसी होगी

(३) वदि १३ शुक्र-दश दिक्पाल तथा नवग्रह का पूजन स्थापन होगा और लुणिया मुंहता जुहारमल, चूनीलाल, धर्मचंद, वीरमचंद, नेणमल, गेवरचंद, रिखबचंद, बेटा पोता पीथाजी की तरफ से अष्टप्रकारी पूजा तथा नोकारसी होगी।

(४) वदि १४ शनि-सिद्धचक्र का पूजन होगा और कागरेसा सा० चूनीलाल, अखेराज, गणेशमल, बेटा पोता फूसाजी की तरफ से नवपदजी की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(५) वदि ३० रवि-वीसस्थानक का पूजन होगा और बंदा मुंहता जसराज, जीतमल, बेटा पोता धूडाजी की तरफ से वीसस्थानक की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(६) वैशाख शुदि १ सोम-च्यवनकल्याणकमहोत्सव होगा और भणशाली मुंहता गणेशमल, हरखचंद, भीमराज, जोइतमल, गेवरचंद, मीठालाल, रूपराज, भूरमल, बेटा पोता सुरताजी की तरफ से बारह व्रत की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(७) शुदि २ मंगल-जन्मकल्याणकमहोत्सव होगा और बाफणा सा० रामाजी, कालुराम माणकजी की तरफ से ज्ञानावरणीय कर्म की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(८) शुदि ३ बुध-प्रतिमा, दंड, कलश आदि के अष्टादश अभिषेक होंगे और भणशाली मुंहता भेराजी, राजमल,

हरखचंद, मांगीलाल बेटा पोता किसानजी की तरफ से निनाणु प्रकार की पूजा तथा नोकारसी होगी ।

(९) शुदि ४ गुरु—दीक्षा कल्याणकमहोत्सव तथा अधिवासना विधान होगा और बंदा मुंहता फोजमल, जुहारमल, हंजारीमल, कुनणमल, देवराज, शुकराज, नथमल, रिखबचंद, हस्तीमल, बेटा पोता केरींगजी की तरफ से अंतरायकर्म की पूजा तथा नोकारसी होगी ।

(१०) शुदि ५ शुक्र—केवलज्ञानकल्याणकविधिपूर्वक शुभ-लग्न—नवांशक में जिनबिंबों की अंजनशलाका प्रतिष्ठा होगी सिद्धिकल्याणकविधि होगी और शुभलग्न—नवांशक में श्री पार्श्वनाथ आदि ७ जिन भगवान नवीनप्रासाद में तथा पद्मप्रभ आदि २ जिन भगवान प्राचीनचैत्य में तख्तनशीन किये जायंगे और अधिष्ठायक यक्ष यक्षिणी यथास्थान प्रतिष्ठित किये जायंगे, दोनों जिनमंदिरों पर सुवर्णकलश ध्वजा दंड आरोपण होंगे और भणशाली सा० दीपचंद, सागरमल, हस्तीमल, वस्तीचंद बेटा पोता सदाजी की तरफ से सतरह भेदी पूजा तथा बडी नोकारसी होगी ।

(११) शुदि ६ शनि—प्रातःसमय द्वारोद्घाटन विधि होगी और भणशाली मुंहता जोधाजी, भलेचंद, पुखराज बेटा पोता गुलबाजी की तरफ से बृहत्शांतिस्नात्र पूजा और नोकारसी होगी ।

होनेवाले महोत्सव की रूपरेखा

मनोहर और विशाल प्रतिष्ठामंडप में महातीर्थ श्रीशत्रुंजय और गिरनारगिरि की सुंदर रचना के उपरांत समवसरण की रचना होगी, पूजा पढाने के लिये प्रसिद्ध गवैये और भक्तिभावना के लिये जैनगायनमंडली आयगी, उत्सव के दिनों में हमेशा नयी नयी अंगियां और रोशनी होगी, सोना चांदी के रथ, पालखी, हाथी, घोडे और अंग्रेजी बेंड आदि सामग्री के साथ नित्य वरघोडे निकलेंगे, टकोरखाना और किटसन लाइट आदि साधन भी महोत्सव की शोभा में वृद्धि करेंगे।

इस महामांगलिक धार्मिक कार्यप्रसंग पर आप श्रीसंघ अपने अपने मित्रमंडल और कुटुंब परिवार सहित पधारने की अवश्य कृपा करेंगे, क्योंकि श्रीसंघ के पधारने से श्री जिनशासन की विशेष उन्नति होगी, यही अर्ज।

वीर संवत् २४६०, विक्रम संवत् १९९० का प्रथम वैशाख वदि ११, ता. १०-४ ईसवीसन् १९३४

श्रीसकलसंघ-गोल की तरफ से सा० दीपचंद सदाजी का जयजिनेंद्र वांचना जी।

नोट—रेलमार्ग से गोल आने वालों को बिसनगढ और बाकरारोड उतरना चाहिये, दोनों स्थानों से गोल ५ कोस के फासले पर है। मोटर, बैलगाडी, ऊंट विगैरह वाहन मिलते हैं। एरनपुरा रोड से आने वाले मोटर से आ सकते हैं।

११ पंदरह सौ कुंकुमपत्रियाँ लिखीं

अहमदाबाद से कुंकुमपत्रियां समितिने रेल्वे पार्सल कर पहले ही भेज दी थी, इस कारण गोल के संघने धर्मशालामें एकत्र हो प्रथम वैशाख वदि ११ के दिन कुंकुमपत्रियां लिखना शुरू किया और गांवों नगरों और व्यक्तियों के नाम से करीब १५०० कुंकुमपत्रियां लिखीं और आदमियों की मारफत तथा डाकद्वारा सर्वजगह पहुंचायी गयीं।

१२ कामों का बंटवारा

यों तो गांव के ८ पंच इस प्रतिष्ठासंबन्धी काम के लिये मुकरर थे ही तथापि सुगमता के लीये भिन्न भिन्न समितियों में इस काम का बंटवारा कर दिया गया था।

(१) सामान-समिति—

कुंकुमपत्री का मसोदा पूर्ण होने पर संघ इकट्ठा कर वह सुनाया गया और सब को पसंद आने से उस की पक्की प्रेस कोपी की गयी।

अंजनशलाकामहोत्सव के विधिविधान में, शान्तिस्नात्रमें और प्रतिष्ठामंडप के लिये जिन जिन चीज सामानों की जरूरत थी महाराजसाहबने उन के लिस्ट बनाकर अहमदावाद

जानेवाली सामानसमिति के सुपुर्द किये । कुंकुमपत्री छपवाना और मंदिरजी के कलशों पर सोना चढवाना आदि काम भी इसी समिति के हवाले किये गये ।

चैत्र शुदि १५ मा के दिन यह ४ सभ्यों की समिति अहमदाबाद के लिये रवाना हुई और १० दिन के अंदर अपना कार्य समाप्त कर वापस आ गयी ।

(२) प्रतिष्ठामंडप-समिति—

प्रतिष्ठामंडप के काम पर देख भाल रखने और उस के उपयुक्त सामान जुडाने के लिये भी एक ४ सभ्यों की समिति कायम की गयी थी ।

कणी, बांस, पाटिये आदि लकडी का सामान, टीन के पतरे, पट्टियां, कील आदि लोह का सामान और रंगीन तथा सादा कपडा, रंग-रोगान मंगवा कर हाजिर करना और मंडप बनाने वाले कारीगर मजदूरों पर निगरानी रखना आदि तमाम काम इस समिति के हवाले किये हुए थे ।

(३) खाद्यसामग्री-समिति—

नोकारसियों के लिये जरूरी स्वदेशी चीनी-खांड, गुड, ताजा तैयार किया हुआ स्वदेशी मैदा, चावल, दाल, चणा,

चवला, अमचूर, कोकम आदि खाद्यसामग्री एकत्र करने के लिये दो मेम्बरों की एक समिति नियत की थी जिसने बरेली से देशी चीनी, भटिण्डा से ताजा मेदा, ब्यावर से गुड और अन्यान्यस्थानों से अन्य चीजें एकत्र कीं।

(४) भोजनमण्डप-समिति—

भोजनमण्डप (परठा) के लिये गांव से सटा हुआ एक रहट का जाव (अरहट की भूमि) पसंद किया गया था, क्योंकि वह नजदीक भी था और जल तथा छाया का भी वहां सुख था।

इस काम के लिये ४ सभ्यों की एक समिति मुकरर थी जिसने सब से पहले रहट पर जल की कुण्डी (टांकी) बंधा कर वहां से रसोईघर तक एक बन्द नीक पक्की बंधा दी। नीक के मुंहाने पर एक बडा टांका (होद) बंधा लिया ताकि नीक द्वारा लाया गया जल सीधा टांका में ही गिरे। टांका के पास कोठियां रख कर छान कर कोठिओं में भरने और कोठिओं से बाल्टियों द्वारा मिट्टी के मटके भर कर परठे में जगह जगह रखने और उनमें से बाल्टियों में ले गिलासों से सर्वत्र पहुंचाने की व्यवस्था ध्यान में रख कर उपर्युक्त जल की व्यवस्था की गयी।

जल के टांके (होद) के पास कुछ फासले पर रसोई के लिये छोटी बडी करीब २० भट्टियां खोदा कर उन पर चांदनी बंधाई गयी। इसी रसोई स्थान के निकट एक बडा होल बना दिया था जहां पर रसोई के बर्तन, थालियां, रसोई का अन्यान्य सामान और तैयार हुई रसोई लापसी, सीरा वगैरह रखने के लिये बडे २ कडावे रक्खे गये थे।

इस होल के पिछले भाग में एक बडा नौहरा खोलाया गया था जिसमें घी, गुड, चावल मेदा, चीनी, गेहूं का दलिया वगैरह सामान रखा गया था। जहां जल का टांका बांधा गया था वहां एक बडा भारी बड का द्रख्त था जिसकी छाया टांके के ऊपर और आस पास दूर दूर तक पहुंचती थी, परन्तु यह छाया भी सब के लिये पर्याप्त नहीं थी इस कारण उसके सामने करीब ३०००० तीस हजार घनफूट जमीन पर साइबानों, चांदनियों और खादियों से छाया की गयी थी। इसके उपरान्त इस जगह से कुछ ही दूर उसी खेत में अन्य वर्ण के लोगों के जीमने बैठने के लिये जमीन ठीक करायी गयी थी।

(२) घृत-समिति—

ओर्डर से अगर वगैर ओर्डर से आने वाले घी के व्यापारियों से परीक्षापूर्वक घी खरीदने, उसको गर्म कर छानने और डिब्बों में बन्द कर गोदाम में रखने का कार्य इस घृतसमिति

के सुपुर्द था। इसके ४ सभ्य थे और घृतसंबन्धी कुल कार्य इनके स्वाधीन किया गया था। इस समिति ने करीब ७०० मन (बङ्गाली ८० रुपया भर के पक्के मन के हिसाब से ३११ मन से कुछ अधिक घृत खरीदा और गर्म कर छान कर पीपों में भर रसोड़ के गोदाम में रख दिया।

(६) मसाला-समिति—

प्रतिष्ठा के मौके पर शाक तरकारियों में डालने के लिये मिर्च, हल्दी, धनियां, जीरा, नमक आदि जरूरी मसाले कुटवा पिसवा कर तैयार करने के लिये भी दो सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी, जिसने पक्की १० मन मिर्च और इसके अनुसार ही जरूरी मसाला कुटवा पिसवा के तैयार करवाया।

(७) घास चारा-समिति—

प्रतिष्ठा पर आने वाली बैलगाडियों के बैलों, घोडों, ऊटों और हाथियों के लिये जरूरी घास चारा इकट्ठा करने के लिये भी दो सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी। कुछ तो घास पञ्चों ने पहले खरीद लिया था तौ भी वह कम मालूम होने से फिर घास खरीद कर करीब ५०० सौ गाडियां घास और १००० मन गुवारतरी (गुवार की भूसी) और इससे

भी अधिक प्रमाण में गेहूं का पुलाव (खाकला) खरीद कर एकत्र किया था।

(८) वरघोडासाज-समिति—

वरघोडे का साज-सामग्री इकट्ठी करने के लिये भी ४ सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी। इस समिति ने उदयपुर जाकर पण्डित सुखदेवप्रसाद जी के पास उदयपुर के हाथियों की मांगनी की, परन्तु गैररियासत का मामला बता कर पण्डित साहब ने हाथियों के भेजने में कठिनायी बतायी, इससे समिति के सभ्यों ने एक हाथी घानेराव ठिकाने से और एक हाथी खेरवा ठिकाने से लाना वहां जाकर तय किया। उसी दौरे में जोधपुर जाकर वहां का बेंड बाजा मंगवाना निश्चित किया। इसके अतिरिक्त आहोर से सोना चांदी के रथ पालकी आदि और अन्य-स्थानों से अन्यान्य-सामान लाना निश्चित कर दिया।

(९) मन्दिर कमठा-समिति—

उस समय दोनों मन्दिर जी के रिपेर काम और जरूरी कार्य पूरा करने के लिए कमठा चल रहा था। करीब २५ कारीगर और ५० मजदूर हमेशा काम कर रहे थे, इन सब पर निगरानी रखने, जरूरी सामान तैयार रखने, हाजरी पास

देने लेने और पगार चुकवाने का कार्य इस समिति के सुपुर्द था।

(१०) प्रकीर्णप्रबन्धक—

ऊपर लिखे मुजब भिन्न भिन्न कार्य भिन्न भिन्न समितियों में बांट दिये गये थे फिर भी छोटे बडे अनेक कार्य थे, जैसे पुलिस पार्टी का इन्तजाम, चौकी पहरे का बन्दोबस्त, स्वयंसेवक मण्डलों के बुलाने का प्रबन्ध, इलेक्टरी और गैस की दीवा बत्तियों के मंगवाने का बन्दोबस्त, नगर में योग्यस्थानों में और प्रवेशमार्गों पर दरवाजे खडे करवाना आदि। ये सब कार्य पञ्चोंने और अन्यान्य सज्जनों ने किये।

१३ प्रतिष्ठामण्डप

सब समितियों में भोजनमण्डप-समिति और प्रतिष्ठामण्डप-समिति का कार्य सबसे अधिक जवाबदारी का था। सारे उत्सव का मुख ये दो ही कार्य थे जो उक्त समितियों के सुपुर्द थे। भोजनमण्डप-समिति के कार्य की रूपरेखा ऊपर दी जा चुकी है। अब हम प्रतिष्ठामण्डप का दिग्दर्शन करायेंगे।

प्रतिष्ठामण्डपसम्बन्धी सबसे टेढा मामला उसके योग्य जमीन की पसन्दगी का था। गांव वालों के इसमें तीन मत

थे। अधिक भाग की इच्छा प्राचीन मन्दिर के पास गुरां साहब भक्तिसोमजी के नौहरे में यह मण्डप बनवाने की थी। कितनेक श्रावक कहते थे कि यहां जमीन कम है, भोजन मण्डप के निकट उत्तरी दरवाजे के बाहर मण्डप बनवाना अच्छा है, तब कतिपय सज्जनों की इच्छा महन्त साहब के मठ में मण्डप बनवाने की थी। आखिर यह सवाल महाराज साहब पर छोडा गया। आपने तीनों स्थानों को नजर में निकाला और मठ के बाहर का बाड़ा और उसके सामने वाली जमीन पसन्द की। यहां के मठपति महन्त श्री अजितभारतीजी बडे ही गुणी और मिलनसार सज्जन हैं। आप शैवधर्म के आचार्य होते हुए भी जैनधर्म के प्रशंसक और संघ के प्रति सद्भाव रखने वाले विद्वान् संन्यासी हैं। प्रतिष्ठा कराना निश्चित हुआ तभी से आपने यहां के संघ को अपनी तरफ से सभी तरह की मदद देने की सहानुभूति दर्शित की थी। महाराज साहब की पसन्दगी की जमीन पर प्रतिष्ठा मण्डप बनवाने के लिये आप की तरफ से तुरन्त आज्ञा मिल गयी। पूर्व तरफ की बाडे की भींत तुडवा कर जमीन बाहर के मैदान के साथ मिला दी गयी। वहां से कूडा कर्कट दूर करवा दिया गया। ऊपर ऊपर की मुर्दा धूली खुदवा कर बाहर फेंकवा दी गयी और उस जमीन पर सेंकडो गाडी ताजी शुद्ध मिट्टी और नदी की बालू डलवा कर मण्डप भूमि का तल भाग ऊंचा लिया गया।

महाराज साहब की सलाह मुजब मण्डप का प्लान बनाया गया था और उसी मुजब शुभमुहूर्त्त में मण्डप स्तम्भारोपण कर कार्य आगे चलाया गया, और करीब एक महीने के अन्दर देवविमान तुल्य सुन्दर मण्डप बन कर तैयार हो गया।

मण्डप के नीचे करीब ३२६८ बत्तीस सौ अडसठ घनफूट जमीन थी। मण्डप तीन भागों में बंटा हुआ था। सबसे पिछले भाग में बायी तरफ शत्रुंजय तीर्थ, दाहिनी तरफ गिरनार और मध्यभाग में तीन गढयुक्त समवसरण की रचना की गयी थी। ये तीर्थ इतने तादृश बने थे कि मानों साक्षात् अपने मूलरूप में ही आकर खडे हो गये हों। एक एक टोंक, एक एक देवल और एक एक गढ किले का आकार इस ढङ्ग से बना था कि जानकार प्रेक्षक देखते ही कह देते थे कि यह शत्रुंजय है और वह गिरनार।

पहाडों पर चढने के मार्ग, वृक्षलताओं के दृश्य, जंगली जानवरों के हूबहू चेहरे, बहते हुए झरनों और नदियों के दृश्य, जलकुंड और चलते हुए फुवारे देखने वालों को आश्चर्य चकित और आनंद मग्न बना देते थे।

मंडप के मध्यभाग में करीब ६६५ घनफूट भूमिभाग पर नवीन मूर्तियां स्थापित करने और उन का विधि विधान करने के लिये वेदिकायें बनी थीं। यह मध्यवेदिकामण्डप

मिहराबदार १२ दरवाजों से सुशोभित था। इस के चारों ओर ७-७ फूट चौडी परिक्रमा रक्खी गयी थी।

वेदिका मंडप और पंच पोलिया के बीच सिंहासन पर प्रतिष्ठित प्रतिमा स्थापन करने का स्थान और पंचपोलिया के सामने बाहर के भाग में करीब १४२६ घनफूट जमीन पर आलीशान सभामण्डप बना था। जहां पर गवैये पूजा पढाते, गायनमंडली गाती नाचतीं और दर्शकगण जिनभक्तिरसामृत का पान करते थे।

मंडप के तीनों भागों में कुल मिलाकर २३ बंगडीदार मिहराब वाले दरवाजे थे और ८ सादे। सारा मंडप ऊपर से सादे और नीचे से विविध रंगदार वस्त्रों से सजाया गया था।

छोटे बडे कांच के तख्तों, हांडियों, गोलों, झुमर, मीनाकारी पट्टियों और रंगीन पुष्पमालाओं से मंडप देवविमान की तरह जगमगा रहा था। भीतर जाते ही प्रेक्षकों की आंखे चौंधिया जातीं और चित्त प्रसन्न हो जाते थे।

प्रतिष्ठामंडप के सामने एक छायादार मैदान लगा हुआ था, जहां बड, नीम, इमली आदि के बडे बडे वृक्ष लहरा रहे थे मानों कुदरत ने ही यात्रिकों के लिये घनी छाया कर रक्खी थी। करीब १०००० दश हजार मनुष्य इस छाया में सुखपूर्वक बैठ सकते थे। मैदान के पूर्व भाग में एक मीठे

पानी की बाव थी और उत्तरभाग में गोल का प्रसिद्ध मठ, उसका बाग और कुंआ। इन सब कारणों से प्रतिष्ठामण्डप और उसके आस पास का दृश्य अतिशय मनोहर लगता था और दिन रात वहां मनुष्यों की भीड लगी रहती थी।

१४ समितियों की पुनर्नियुक्ति

भिन्न भिन्न कार्य भिन्न भिन्न समितियों के सुपुर्द करने की बात हम ऊपर लिख आए हैं। उन कामों में से बहुत से काम प्रतिष्ठा के पहले करनें के थे, अत एव वे कार्य प्रतिष्ठा के पहले ही समाप्त करके समितियों निवृत्त हो चुकी थीं। इधर महोत्सव निकट आने पर बहुत से अन्य कार्य उपस्थित हुए थे, इसलिए उन निवृत्त समितियों के सभ्यों से नयी समितियों नियुक्त की गयीं।

(१) मुकाम-डेरा-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। आगन्तुक महमानों के ठहरने के लिये महाजनों और अन्य लोगों के मकानात खोलवाना, उनको झडवा झुडवा के ठीक करना और आने वाले महमानों का वहां मुकाम करवाना इत्यादि इस समिति का कार्य था।

(२) मार्गसफाई-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। गांव भरके मार्गों को ठीक ठाक कराना, मार्ग में पडे हुए पत्थर, लकडी, सामान को उठवा कर मार्ग खुला करवाना, पडे हुए कूडे करकट दूर फेंकवा कर मार्ग की सफाई करवाना और उत्सव दर्मियान दोनों टाइम वहां पानी छिडकवाना इस समिति का कार्य था।

(३) जलप्रबन्ध-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। जहां जहां महमान ठहरे हों उन तमाम घरों में जल भराना, मार्ग में जगह जगह छाया करवाके जल के प्याउ बिठवाना, जल की कहीं कमी तो नहीं है इत्यादि बातों पर ध्यान रखना इस समिति का मुख्य कार्य था।

(४) मंगलघर-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। प्रतिष्ठा के विधि-विधान में उपयोगी फल, मेवा, पूजासामग्री आदि चीजों को संभाल कर मङ्गलघर में रखना और जरूरी समय पर निकाल कर देना, औषधियां मंगवा कर एकत्र करना और समय पर हाजर करना इस समिति का कर्तव्य था।

(५) पास-प्रदान-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। ठंडाई के मसाले, गर्म चाह घृत, दूध, गुड, शक्कर, आटा, दाल, चावल, मसाला आदि कुल भोजन सामग्री और घास, गुवारतरी, पुलाव आदि चारे का पास काट देना इस समिति का काम था।

(६) सीधासामान-समिति—

इस समिति में भी दो सभ्य थे। आटा, दाल, घी, गुड, शक्कर, ठंडे और गर्म मसाले आदि कुल मोदीखाने का सामान इस समिति के हवाले था।

सेवासमितियों, पूजा-भक्तिसमितियों और गुजराती महमानों को ही नहीं बल्कि सर्वसंघ को ही आम तौर से अर्ज कर दी गई थी कि जिनको सार्वजनिक भोजन पसंद न हो वे महाशय यथेष्ट सीधा मंगवा लिया करें। यद्यपि इस समिति का काम चीट्ठीमुजब सीधा देने का था, तथापि इसको हिदायत की गई थी कि जैन यात्रिक के लिए वह चिट्ठी पास के ऊपर ही निर्भर न रहे, इस कारण से बगैर पास के भी जैन यात्रिक को उसकी इच्छामुजब यह सीधा तोल देती थी।

(७) चारादान-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। इस समिति का कार्य घास

की गञ्जी पर निगरानी रखना और पास लेकर आने वालों को नोकरों द्वारा घास चारा दिलवाना था।

हाथी, घोडे, बैल, ऊंट, वगैरह को इस समिति के द्वारा ही घास चारा प्राप्त होता था।

(८) रसोईघरनिरीक्षण-समिति—

इस समिति में पांच सभ्य थे। रसोई घर की निगरानी, रसोई के लिये जरूरी सामान और बर्तन हाजर रखना, बची खुची रसोई को ठिकाने लगाना, रसोई के लिए इंधन, मजदूर हाजर करना इत्यादि काम इस समिति के सुपुर्द था।

(९) बिंबनिर्मापक- समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। जयपुर जाकर नये जिन-बिंब बनवाने का आर्डर देना, बिम्बों की तैयारी के लिये ताकीद देना और तैयार होने पर बिम्ब लेने जाना इस समिति का कार्य था। इस समिति की मार्फत करीब २५००) पच्चीस सौ रुपयों के जिनबिम्ब नये बनवाये गये थे।

(१०) पूजाभक्ति-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। उत्सव के दर्मियान पूजा पढाने की तैयारी करना, स्नात्रियों को तैयार करना आदि काम इस समिति के सुपुर्द था।

१५ बिम्बों का आगमन

गोलनगर के दोनों जिन मन्दिरों के लिए कुल ११ जिन बिम्बों और ४ यक्ष यक्षिणियों की मूर्तियो की जरूरत थी और प्रारम्भ में इनके लिये ही कारीगरों को खास ओर्डर दिये थे। परन्तु बाद में दूसरे भी अनेक गांव नगरो के जैनसंघों की जिनबिम्बों के लिए मांग होने के कारण अधिक बिम्बों के लिए ओर्डर दिये गये थे। बिम्ब तैयार होने की खबर मिलते ही बिम्बनिर्मापक समिति के दो सभ्य उन्हें लेने के लिए जयपुर गये और बिम्बो को रेल्वे पार्सलों में ले आये। कुछ बिम्बों का पालिस होना बाकी होने से दो दिन के बाद उन्हें कारीगर खुद पहुंचाने आये थे।

आर्डर के बिम्बों के उपरान्त भी जयपुर से कुछ बिम्ब आये थे जो सभी खरीद लिये गये और भिन्न भिन्न गांवों के संघो की प्रार्थना से उनके गांव के नाम के अनुकूल लेख और लांछन खुदवा कर प्रतिष्ठा में रख दिए गये थे। जयपुर के अतिरिक्त सीरोही, मेहसाना, सिनोर (गुजरात), अजमेर, वालेसर आदि दूसरे भी अनेक स्थानों से जैनबिम्ब प्रतिष्ठा अंजनशलाका के लिये आए थे। सिरोही से २५, मेहसाना से १३ पाषाण के बिम्ब आए थे। सिनोर से आये हुए बिम्बों में एक बिम्ब स्फटिकरत्न का था। इसके सिवा चांदी की अनेक चौवीसियां, पञ्चतीर्थियां, एकतीर्थियां, सिद्धचक्र, अष्टमङ्गल

और सर्वधातु के छोटे बडे अनेक जिन बिम्ब भाविक श्रावकसंघों की तरफ से नजदीक दूर से आये थे। पाषाण और धातु के मिलकर २०० दो सौ के ऊपर बिम्बसंख्या हो चली थी।

जयपुर से आए हुए सभी बिम्ब प्राचीन शैली के और पक्के श्वेत पाषाण के होने से देखते ही दर्शकों के चित्त प्रसन्न हो जाते थे।

१६ स्वयंसेवक मण्डल

प्रतिष्ठामहोत्सव पर एकत्र होने वाले संघ की भक्ति, वरघोडों की व्यवस्था और अन्य कामों की उचित व्यवस्था के लिये स्वयंसेवकमंडलों को बुलाने का महाराज साहबने उपदेश दे कर योग्य सेवामंडलों को आमंत्रित करवाया था जिस से निम्न लिखित ३ सेवामंडलोंने आ कर कुल व्यवस्था अपने ऊपर ले ली थी।

(१) श्री आदिजिन सेवा मंडल—तखतगढ.

सेवा मंडलों में प्रमुख उपर्युक्त तखतगढ का मंडल था। इस में मयमर्दो के ८० स्वयंसेवक (वालंटियर्स) थे। दो सेक्रेटरी, केप्टन, खजानची आदि अधिकारी भी मण्डल के साथ ही थे। ये सभी अपना अपना खास ड्रेस पहिने और सजे हुए थे।

इस मंडल के लिये गोल के श्रीसंघने २५ बैलगाडियाँ दो दिन पहले ही तखतगढ भेज दी थीं, इस से मंडल द्वितीय वैशाख शुदि १० के प्रभात समय में ही गोल आ गया और संघ के आग्रह से मयवर्दी और गाने के जुलूस के आकार में नगर में चक्कर लगाया, जिस से नगरनिवासियों पर अपूर्व प्रभाव पडा और सामान्य जनता तो इस मंडल को पुलिस से भी अधिक समझने लगी।

(२) दूसरा मंडल जालोर का "श्री ओसवाल नवयुवक सेवामंडल" था। इस मंडल में कुल २५ स्वयंसेवक थे।

यह मंडल वैशाख शुदि १३ को गोल आया और इसने भी प्रथमागत तखतगढ के मंडल के साथ हिलमिल कर संघ की सेवा बजाई।

(३) तीसरा मंडल गोल का "श्रीपार्श्वनाथ सेवा मंडल" था। यह मंडल यद्यपि नया था फिर भी पूर्वोक्त मण्डलों के साथ मिल कर इसने भी अपनी सेवा अर्पण की।

१७ मंडलों की कार्यव्यवस्था

इन मंडलोंने उत्सव पर जो सराहनीय कार्यव्यवस्था द्वारा संघसेवा की है उसका संपूर्ण वर्णन करना इस लेखिनी की शक्ति के बाहर की बात है।

मंडल के सभी सभासद् प्रातःकाल ४॥ साढे चार बजे उठ जाते और जरूरी कामों से निवृत्त हो ५॥ साढे पांच से छः बजे तक प्रतिष्ठामण्डप, दोनों मंदिर और भोजनमंडप विगैरह में चौकी पहरे की ड्युटी भरने लगते थे, नौ बजने पर उन की जगह नये वालंटियर आते और वे अपने अपने केम्पों में जाते। जलपान करके फिर वे अपनी अपनी ड्युटी पर चले आते थे। इस प्रकार बारी बारी से सभी वालंटियरों को जुदे जुदे स्थानों पर पहरा भरना पडता और यह क्रम हमेशा रात के ११ बजे तक रहता।

प्रातःकाल ७ से ९ तक और दो पहर को २॥ से ४॥ तक वरघोडे के चढावे बोले जाते थे, यह भी सर्व कार्य सेवा-मंडल के अधिकार में था। चढावे पूरे होते ही प्रतिष्ठामंडप के मैदान से दोनों समय वरघोडे चढते और नगर के मुख्य मार्गों में चक्कर काट कर फिर प्रतिष्ठामंडप के निकट आकर विसर्जन होते।

वरघोडे विसर्जन होते ही खास खास स्थानों के पहरेदार वालंटियरों को छोड शेष सभी स्वयंसेवक भोजनमंडप में जाते और भोजन की पांत शुरू कराते। सब कामों में सेवामंडलों के लिये यह काम एक कसौटी रूप था। एक साथ हजारों मनुष्यों की पांतें कर जीमने बैठाना और उन को थालियां, गिलास, जीमन, शाक तर्कारियां, चावल, दाल और पानी

आदि सब सामान पहुंचाना और वह भी वगैर विलंब के, इन सेवामंडलों के सिवा अन्य किसी से नहीं बन सकता। महोत्सव के आखिरी दिनों में जब कि महमानों की संख्या १५००० से २०००० तक पहुंच चुकी थी, इन मंडलों ने जो तत्परता पूर्वक सेवा उठायी, इतनी विशाल जनसंख्या होने पर भी किसी चीज को कमी न आने दी, यह एक चिरस्मरणीय प्रसंग है और विविध प्रान्तों के श्रीसंघ जो वहां पधारे हुए थे इस प्रसंग को कभी नहीं भूलेंगे।

१८ वरघोडा (जुलुस)

हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं कि दोनों समय वरघोडे निकलते और उन की व्यवस्था स्वयंसेवक करते, परंतु इतने ही से वरघोडों की वास्तविकता का अंदाजा नहीं हो सकता, इस लिये यहां वरघोडे के संबन्ध में कुछ लिखेंगे।

वरघोडा निकलने के समय जनसमुदाय इतना इकट्ठा हो जाता कि देखने वालों को पता तक नहीं चलता कि इस भीड का कहीं छोर भी है या नहीं, इतने पर भी सेवामंडलों की व्यवस्था इतनी उत्तम थी कि किसी को कुछ तकलीफ नहीं होने पाती।

वरघोडे में सब से आगे नगारा निशान चलता और अपनी प्रचंड ध्वनि से भीड को हटाता हुआ मार्ग करता जाता।

निशानडंके के पीछे चलती हुई विविधवेश-भूषाभूषित घोडेस्वारों की टुकडी प्रेक्षकों का ध्यान अपनी तरफ खींचती।

घोडेस्वारों के पीछे रथ, रेकले, सहजगाडी, सोनाचांदी का रथ आदि की कतार चलती हुई वरघोडे की भव्यता प्रदर्शित करती।

रथगाडियों की कतार के पीछे ढोल, थाली, तुरही, आदि देशी बाजा चलता और अपनी ध्वनि से प्रेक्षकों के हृदयों को हर्षमग्न बनाता।

देशी बाजे के पीछे अंग्रेजी बेंड बाजे वालों की टुकडी मयवर्दी के चलती।

इस के बाद दोनों हाथी अपने अपने साज शणगार के साथ १०-१०-१२-१२ सवारियां लिये मंदगति से चलते हुए वरघोडे की शोभा को बढाते थे।

इस के बाद भगवान की पालकी और पुरुषवर्ग ताल, ढोलक के साथ भक्तिमय गाने गाता चलता था।

पुरुषों के बाद सोना चांदी के मेरु, कल्पवृक्ष, पारणा, सुपन आदि विविध साज उपाडे हुए मधुर गीत गाता स्त्री मंडल चलता। इस मंडल के चारों तरफ स्वयंसेवक रस्सियों से कोर्डन बना कर बडी मुस्तेदी के साथ चलते थे।

स्त्रीमंडल के पीछे सामान्य जन गण चलता था।

इस प्रकार की व्यवस्था के साथ वरघोडा निकलता तब दर्शकगण की इतनी भीड होती थी कि इधर से उधर जाना मुश्किल हो जाता, फिर भी स्वयंसेवकों की तत्परता से उस में किसी तरह का कष्ट या नुकसान नहीं होने पाता था।

१९ पुलिसपार्टी का इन्तजाम

यद्यपि सभी स्थानों में सेवामंडल अपनी तत्परता से चौकी पहरे भरते रहते थे, फिर भी बाहर और खास करके रात्रि के समय पुलिस भी अपनी ड्युटी बजाती रहती, पुलिस सुप्रिन्टेंडेंट, पुलिस सबइन्सपेक्टर और कान्स्टेबल मिल कर करीब ३५ पुलिसमैन तो स्टेट के और उतने ही चौकी पहरेदार ठिकाने गोल के तथा १०—१२ खानगी आदमी मिल कर ७०—८० आदमी दिन रात चौकी पहरे का काम करते थे। इस के अतिरिक्त गोल के चारों ओर मार्गों में भी चौकियाँ बिठा दी थीं, जिस से दिन-रात किसी भी समय कहीं भी आने जाने वालों को चोर लुटेरों का भय न हो। इतना होने पर भी पुलिस के सवार दिन रात गांव में और जंगलों में गस्त लगाते रहते थे। इस उत्तम प्रबन्ध का ही परिणाम था कि सेंकडों गांवों से हजारों मनुष्यों के इकट्ठे होने पर भी कहीं भी लूट खोस या चोरी का नाम तक सुनने में नहीं आया।

२० जागीरदारों की सहानुभूति

पुलिसपार्टी के उपरांत उत्सव के दिनो में आस पास के जागीरदार साहबों की भी पूरी सहायता और सहानुभूति थी, वे अपनी अपनी हद्में तो चौकी पहरे का इन्तजाम करते ही थे, परंतु अनेक ठाकुर साहब तो गोल के श्रीसंघ के आमंत्रण को मान दे उत्सव में भाग लेने गोल भी पधार गये थे, जिन में कई ताजिमी ठिकाणों के सोनानवीस थे, इन में बाकरा ठाकुर-साहब की महरबानी विशेष उल्लेखनीय है, आप अपने ठिकाने के करीब सब घोडे लेकर गोल पधारे थे और इन्हीं घोडों से प्रतिष्ठा के वरघोडे की शोभा अधिक बढती थी।

२१ स्वदेशी-दवाखाना

उत्सव की तैयारी मुजब पहले ही आगाही मिल चुकी थी कि गोल में एक बडा भारी मेला होनेवाला है। इस मेले में पधारने वाले महमानों में से किन्ही को कुछ भी शारीरिक तकलीफ हो जाय तो उन की सेवा चिकित्सा के लिये गोल में एक छोटासा स्वदेशी दवाखाना भी खोल दिया था, जिस में जरूरी दवाइयां तैयार रक्खी थीं। इस दवाखाने में डाक्टर श्रीयुत लाभशंकरजी आचार्य बुलाये गये थे जो 'आयुर्वेदिक' और 'एलोपेथिक' इन दोनों पद्धतियों के एक अनुभवी चिकित्सक हैं।

देवगुरू की कृपा और श्रीपार्श्वनाथ भगवान् के अतिशय से उत्सव के दिनों में ऋतु इतनी अनुकूल और सुखदायक रही कि उक्त दवाखाने का शोभा बढाने के अतिरिक्त कोई उपयोग नहीं हुआ। यद्यपि दवाखाना जाहिर रास्ते पर था और उस के द्वार पर "स्वदेशी-औषधालय" इस प्रकारका बोर्ड लगा दिया था तथापि उत्सव के दर्मियान किसी के माथा तक नहीं दुखा और दवाखाने की जरूरत ही नहीं पडी।

२२ ऋतु की अनुकूलता

गर्मी का समय मारवाड के लिये अतिशय प्रतिकूल ऋतु है। इस मौसम में सख्त ताप और प्रचण्ड आंधियों से मनुष्य प्रायः बेचैन रहा करते हैं, और इस वर्ष तो वर्तमान पत्रों में कई भविष्यवाणियाँ भी छप चुकी थीं कि द्वितीयवैशाखशुदि ६ के दिन बडा भारी भूकम्प और आंधियाँ आने के योग हैं। इन उडती बातों से मनुष्य और भी चौकन्ने हो गये थे कि प्रतिष्ठा के दिनों में क्या होगा और क्या नहीं। द्वितीय-वैशाखवदि ७-और ८ मी के दो दिन हवा इतने जोरों की चली कि लोग और भी सशंक हो गये, आ आ कर महाराज से पूछते—'गुरुमहाराज? अगर इसी प्रकार हवा चलती रही तो संघ कैसे इकट्ठा हो सकेगा?' भोले भाविक मनुष्यों की इस बेचैनी पर महाराज साहब फरमाते—'गभराओ मत, गुरुदेव की कृपा से सब ठीक होगा।' और सचमुच सब ठीक

ही हुआ, नवमी से हवा कम होने लगी और दशमी तक बहुत ही कम हो गयी। एकादशी के प्रभातसमय में हवा उस प्रमाण पर आ गयी जितनी कि उस ऋतु के लिये जरूरी थी। इस हवा के चलने से ऋतु में खासा परिवर्तन हो गया। पहले लू और सख्त ताप से जो घबराहट होती थी वह बिल्कुल मिट गयी। वातावरण इतना ठंडा हो गया कि रात के समय अक्सर ओढ कर सोना पडता था और यह ऋतु की अनुकूलता प्रतिष्ठामहोत्सव समाप्त हुआ और संघ अपने अपने स्थान पहुंचा तब तक रही।

२३ कार्यों का प्रोग्राम

यद्यपि उत्सव में होनेवाले कार्यों का प्रोग्राम पहले ही निश्चित कर के कुंकुमपत्री में छपवा दिया था और हमेशा उसी मुजब कार्य होते रहते थे, फिर भी उन कार्यों के निमित्त जो जो चीज सामग्री जरूरी होती उन की सूचियां बना कर पहले ही दिन महाराज साहब अधिकारी समितियों को सुपुर्द कर देते थे, जिस से योग्य सामग्री पहले ही तैयार करके रख दी जाती थी। इन्द्र इन्द्राणियों का प्रोग्राम भी इन्हीं सूचियों में लिख दिया जाता था।

नवीन बिम्बों पर वैशाखशुदि १ के दिन से संस्कार होने लगे थे परंतु कुछ मूर्तियां शुदि २ के शाम को आयी थीं इस

कारण लेख लांछन खुदवाने के बाद वे शुदि ३ के दिन विधि में शामिल की गयीं और उसी दिन प्रथम च्यवन और जन्म कल्याणक के संस्कार करके फिर सब पर तीसरे दिन का विधान किया गया था। इस के सिवा सभी कार्य कुंकुमपत्री में लिखे मुजब ही किये गये थे।

२४ क्रिया-विधान

प्रतिष्ठा-अंजनशलाका संबन्धी जो जो क्रिया-विधान साधु से हो सकता था वह तो महाराज श्रीकल्याणविजयजी तथा मुनिश्रीसौभाग्यविजयजी के ही हाथ से होता था, परन्तु जो कार्य गृहस्थोचित होते वे शेठ नगीनभाई और उन के सहकारियों के हाथ से होते थे।

यद्यपि कुंकुमपत्री में महाराज साहब के हाथ नीचे क्रिया-कारक के तौर पर गुरां साहब श्रीभक्तिसोमजी का नाम छपवाया था, परंतु पं० भक्तिसोमजी कई महीनों से बीमार होने से क्रियाविधान करने के लिये छाणी (बड़ोदा) से शेठ नगीनभाई को बुलाने का प्रबन्ध महाराजसाहब ने पहले ही कर लिया था और नगीनभाई द्वितीयवैशाखशुदि ११ के रोज अपनी सहकारीमंडली के साथ वहां पधार गये थे। चैत्यवंदन, मंत्रन्यास, मुद्रा, जिनाह्वान, वासक्षेप, नेत्रोन्मीलन आदि जो जो कर्तव्य गुरुमहाराज के करने योग्य होते वे सब

महाराजसाहब स्वयं कर लेते थे और बलिक्षेप, नैवेद्य ढौकन, पुष्पांजलि, अंगचर्चा, पूजा आदि जो जो कृत्य श्रावक के करने योग्य होते वे सभी शेठ नगीनभाई और उन के सहकारी करते थे। गुरु और श्राद्ध दोनों क्रियाकारक अपने अपने कार्यों में कुशल होने से विधि--विधान बहुत ही शान्ति और निर्विघ्नतापूर्वक हुआ करता था।

२५ पूजा--भक्ति

द्वितीय वैशाखवदि ११ के दिन शुभमुहूर्त में प्रतिष्ठामंडप में सिंहासन स्थापित किया गया था और उस में पूर्वप्रतिष्ठित जिनप्रतिमा पधरा कर उसी दिन से कुंकुमपत्री में लिखे मुजब भिन्न भिन्न पूजायें पढा कर भगवान की भक्ति की जाने लगी थी।

यों तो गोल में तथा बाहर से आये हुए संघ में पूजा पढाने वाले बहुतसे गवैये थे, तथापि पूजाभक्ति को अधिक रोचक वनाने के लिये पूजा पढाने के लिये पालिताणा के प्रसिद्ध गवैये श्रीयुत नंदलालजी बुलाये गये थे। इन गवैयाजी को जिन्होंने पूजा पढाते सुना है वे ही इन के गाने की खूबियाँ जानते हैं। इस रसात्मक विषय का कलम से लिखना असंभव है। जब ये हारमोनियम के साथ पूजाओं की ढालें गाने लगते थे हजारों आदमियों की सभा स्तब्ध सी हो कर चुपचाप सुनने

लगती थी। अच्छे अच्छे गाने वाले भी इन के सामने गाने का साहस नहीं करने पाते थे, फिर भी ये स्वयं अन्य गवैयों को भी गाने के लिये समय देते थे।

पूजा हारमोनियम, दुकडे, खंजरी, ढोलक, ताल आदि सब साज के साथ पढाई जाती थी।

२६ रोशनी

यों तो रात्रि के समय सारे नगर में गैस की किट्सन बत्तियां लगतीं और सर्वत्र चकाचोंध प्रकाश हो जाता था, परंतु प्रतिष्ठामण्डप की रोशनी की तो छटा ही ओर होती थी।

बाहर का मैदान और सभामण्डप तो किट्सन लाइटों से चकाचोंध हो जाता था और मध्यमण्डप रंगबेरंगी काच की हांडियों और झुमर में जो बत्तियाँ लगतीं उन से देदीप्यमान हो जाता। वेदिकाओं की मिनाकारी-जडित मण्डपिकाओं पर जो सेंकडों बीजली के ग्लोब लगते उन के प्रकाश से तो मानों सूर्योदयका सा दृश्य उपस्थित हो जाता था। बीजली की बत्तियों के उज्ज्वल प्रकाश में हांडी, झुमरों के तैल के दीपक चंद्रयुक्त आकाश में तारों के से शोभते थे। उन के प्रतिबिम्ब जो कांच के तख्तों पर पडते उन से लोगों को भ्रान्तिसी हो जाति कि असली दीपक कौन हैं और प्रति

बिम्ब कौन ?, इस दृश्य को देख कर दर्शक स्वर्गविमानों की कल्पना करते और उन के अस्तित्व का अनुमान लगाने लगते थे।

२७ भावना-बैठक

दिन के समय जिस प्रकार पूजाभक्ति का ठाठ जमता उसी प्रकार रात्रि के समय करीब पहर रात तक सभामण्डप में भावना की बैठक होती थी। इसके लिए पालिताणा से श्रीजिनदत्तसूरि-ब्रह्मचर्याश्रम की संगीतमण्डली बुलाई गयी थी, जो सर्वसाज के साथ द्वितीय वैशाखवदि ११ को ही वहां पहुंच गयी थी। मंडली में ८ तो समवयस्क (समान अवस्था के) विद्यार्थी थे और बाकी मैनेजर, मास्टर, वजैये वगैरह, कुल १२ आदमी थे। यों तो मंडली वाले दिन के समय भी पूजा में अक्सर आया करते थे, परन्तु रात्रि के समय जरी के ड्रेस के साथ जब वे सभामंडप में आते लोग नृत्य (नाच) देखने और संगीत सुनने के लिए अधीर हो जाते और सभामंडप के उपरान्त बाहर का मैदान भी दर्शकों से ठसाठस भर जाता।

करीब २॥-३ घंटों तक मण्डली अपनी कला के साथ भक्तिभाव करती। रासक्रीडा, डंडीखेल, स्थालीभ्रमण, रस्सीगुंथन आदि अपनी कुशलतासूचक कलाओं के प्रदर्शन के साथ

वह जो नाचती, गाती और संवाद करती उस से सभा चित्र लिखित सी हो जाती और वहां से उठने का मन नहीं करती।

द्वितीय-वैशाखवदि १४ के दिन श्रीपार्श्वनाथ विद्याभवन -तीखी (मारवाड) की संगीतमण्डली भी वहां आ पहुंची और तीन दिन तक अपने नृत्य, गान और विविधकलाप्रदर्शन-पूर्वक भगवान् की भक्ति करती रही।

तीखीमंडली तीन दिन के उपरान्त दूसरे गांव चली गयी थी परन्तु पालीताणामण्डली तो आखिर तक वहां रह कर भगवान् की भक्तिद्वारा मनुष्यों का मनोरंजन करती रही।

२८ श्रीपुज्यधरणीन्द्रसूरिजी का आगमन

उत्सव के दिनों में जयपुर की खरतरगच्छीयगादी के युवाचार्य श्री धरणीन्द्रसूरिजी गोल से ४-५-कोश पर ही थे, परन्तु इस बात की महाराजसाहब को या गोल के श्रीसंघ को खबर नहीं थी, इस कारण उन्हें आमंत्रण नहीं दिया जा सका, सूरिजी बाकरा से रेवतडा पधारे और वहां से उन के कोटवा-लजी और एक अन्य यतिजी महाराजसाहब के पास आये और श्रीपूज्यजी के समाचार और उन की गोल पधारने की इच्छा प्रदर्शित की। महाराज साहबने उसी समय गांव के-४ पंचो को बुलाया और श्री पूज्यजी को कुंकुमपत्री देने का

उपदेश किया, पंचों ने महाराज का उपदेश शिरोधार्य किया और दूसरे दिन प्रभातसमय कुंकुमपत्री लिख कर कोटवालजी को दे दी, शाम को श्रीधरणीन्द्रसूरिजी भी सह परिवार गोल पधार गये और श्रावक संघने सत्कारपूर्वक नगर में ले जा कर तपागच्छ के उपाश्रय में मुकाम करवाया।

श्रीपूज्य महोदय नवयुवान होते हुए भी शिक्षित और शान्तप्रकृति के सज्जन हैं। आप प्रतिष्ठा-संबन्धी क्रियाविधान देखने और भगवद्भक्ति में भाग लेने को प्रतिष्ठामंडप में पधारा करते थे।

२९ महारात्रि के चढावे

मारवाड में विवाह या प्रतिष्ठा के लग्न दिन से पूर्वदिन की रात 'महारात' (महारात्रि) कहलाती है, क्योंकि प्रकृत उत्सव की अन्तिम रात्रि होने से उस में अधिक धामधूम और जागरण होने की वजह से वह लंबी चौडी हो जाती है।

प्रस्तुत अंजनशलाका-महोत्सव की महारात भी उत्कृष्ट धूम धाम और विविधप्रकार के चढावे बोलने के कारण सचमुच 'महारात' हो गयी। दोनों मंदिरों में मूर्तियां विराजमान करने, ध्वज दंड कलश चढाने, तोरण बांदने आदि के कुल चढावे इसी रात्रि में बोले गये। इस रातमें भाग्यशालि श्रावकों

ने चढावे बोल कर अपनी लक्ष्मी का जो सदुपयोग किया उस का विवरण नीचे मुजब है।

(१) श्रीपार्श्वनाथजी के मंदिर के चढावों के आदेश—

३८०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर ऊपर ध्वजा चढाने का आदेश मुंहता नेणमल, मिश्रीमल, गणेशमल, मुंहता कपूरजी के बेटों पोतोंने लिया।

३४०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के शिखर पर सुवर्ण-कलश (इंडा) चढाने का आदेश सा० गोमाजी, चूनीलाल, वनराज, सोनमल, दानमल, सा० आशाजी के बेटों पोतों ने लिया।

३०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के मंडप पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश मुंहता भीमाजी, खेतमल, जांवतराज, केवलचंद, मुंहता देवाजी के बेटों पोतों ने लिया।

४०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के दूसरे मंडप पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश मुंहता हरकचंद, इंदरमल, चुनीलाल, मुंहता भूताजी के बेटों पोतों ने लिया।

१००१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर ऊपर चोमुखजी की देहरी पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश भणशाली मुंहता जुहारमल, पीरचंद, पुखराज, मु० करताजी के बेटों पोतोंने लिया।

१२०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर पर दंड चढाने का आदेश बुद्धि० सा० भीमराज, रिखबदास, सा० जुहारमलजी के बेटों पोतोंने लिया।

३४५१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर में मूलनायकजी श्री पार्श्वनाथ भगवान् विराजमान करने का आदेश मुंहता मेघराज, भगाजी, अनाजी, हजारीमल, माणेकचंद, मिश्रीमल, कुंदनमल, घेवरचंद, गांधी मुंहता मोतीजी के बेटों पोतों ने लिया।

१३०१) रुपया में पार्श्वनाथजी की दाहिनी (जीमणी) तरफ श्री शान्तिनाथ भगवान विराजमान करने का आदेश बुद्धि० सा० जवानमल, अखयराज, भूरमल, सुखराज सा० ताराजी के बेटों पोतों ने लिया।

११२५) रुपया में पार्श्वनाथजी की बायी (डाबी) तरफ चंद्रप्रभस्वामी विराजमान करने का आदेश मुंहता भलाजी, पुखराज, मुंहता गुलबाजी के बेटों पोतों ने लिया।

८५१) रुपया में चौमुखजी में पहला बिंब स्थापित करने का आदेश मुंहता हीराजी, सिरेमल, रिखबदास, सुखराज, आईदानमल मिश्रीमल, फूलचंद, पारसमल, मुंहता जसाजी के बेटों पोतों ने लिया।

७५१) रुपया में चौमुखजी में दूसरा बिंब स्थापित करने का आदेश लूंणिया मुंहता भूताजी दानाजी ने लिया।

५५१) रुपया में चौमुखजी में तीसरा बिंब स्थापित करने का आदेश सूजाणी सा० उमाजी प्रेमचंद हुनरमल सूजाणी प्रतापजी के बेटों पोतों ने लिया।

५५१) रुपया में चौमुखजी में चतुर्थ बिंब स्थापन करने का आदेश जीरावला सा० तिलोकचंद, मिश्रीमल, देवीचंद सा० किसनाजी के बेटों पोतोंने लिया।

८२५) रुपया में गभारे के अंदर खत्तक (आले) में बिम्ब स्थापन करने का आदेश मुंहता अनाजी, मेघाजी, देवाजी, गणेशमल, हरखचंद, मिश्रीमल, सुखराज, सिरदारमल, वस्तीचंद- सांकलचंद, मुंहता हिन्दुजी के बेटों पोतोंने लिया।

६५१) रुपया में गभारे के अंदर दूसरे खत्तक (आले) में बिम्ब स्थापन करने का आदेश सा० मगाजी, सैदाजी,

सांकलचंद सा० अगराजी के बेटों पोतों ने लिया।

१२५) रुपया में श्री पार्श्वनाथजी के मंदिर में अधिष्ठायक श्रीपार्श्वयक्ष स्थापन करने का आदेश सा० वीरमजी दानाजी ने लिया।

१०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर में अधिष्ठायिका श्री पद्मावती देवी स्थापन करने का आदेश सा० भगाजी लखमाजी ने लिया।

१५०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर तोरण बांदने का आदेश श्रीसांथुनिवासी लूणिया मुंहता बेलाजी, नेणमल मुंहता वजींगजी के बेटों पोतों ने लिया।

२५२॥) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर का द्वार खोलने का आदेश मुंहता पूनमचंद, भीमराज, सुखराज, केवलचंद, मुंहता रेखचंदजी के बेटों पोतों ने लिया।

(२) श्री ऋषभदेवजी के मंदिर के चढावों के आदेश–

३२०१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी के मंदिर पर ध्वजा चढाने का आदेश सा० दीपचंद, नेणमल, भूरमल, सूजाणी मूलाजी के बेटों पोतों ने लिया।

१००१) रुपया में (इंडा) चढाने का आदेश सोलंकी प्रागजी,

जीतमल, सुरतानमल, पुखराज, पारसमल, सरूपजी के बेटों पोतों ने लिया।

३६०१) रुपया में मण्डप पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश सा० गणेशमल, हरखचंद, भीमराज, जोइतमल, घेवरचंद, मीठालाल, भणशाली सुरताजी के बेटों पोतों ने लिया।

१२०१) रुपया में दंड चढाने का आदेश मुंहता मिश्रीमल, शिवराज, फूलचंद, नेणमल, बंदा मुंहता मेघाजी के बेटों पोतोंने लिया।

८०१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी की दाहिनी (जीमणी) तरफ जिनबिम्ब स्थापन करेने का आदेश सा० हिम्मतमल, हजारीमल, भानमल, लक्ष्मीचंद, घेवरचंद, सा० रायचंदजी के बेटों पोतोंने लिया।

९५१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी की बायी (डावी) तरफ जिनबिम्ब स्थापन करने का आदेश मुंहता तिलोकचंद, लखमीचंद, मुंहता जुहारमलजी के बेटों पोतों ने लिया।

८२५) एक अधिक जिनबिम्ब स्थापन करने का आदेश श्री रेवतडानिवासी सा० सरूपजी, रिखबदास, सा० परखाजी के बेटों पोतों ने लिया।

११५१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी के मंदिर तोरण बांदने का आदेश श्री सांथु निवासी मुंहता बीठाजी, सोनमल, सागरमल, मुंहता परखाजी के बेटों पोतों ने लिया।

२०१) रुपया में श्री ऋषभदेवजी के मंदिर में श्री गोमुखयक्ष स्थापन करने का आदेश लूणिया मुंहता त्रीकमजी, चूनीलाल, भानमल, जवानमल, दीपचंद, मुंहता मूलाजी के बेटों पोतों ने लिया।

१७१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी के मंदिर में श्री चक्रेश्वरी देवी स्थापन करने का आदेश सा० छोगाजी वच्छाजी ने लिया।

ऊपर के दोनों मंदिरों संबन्धी कुल चढावे द्वितीय वैशाखशुदि ४ की रात में बोले गये थे, और उसी समय सेंकडों गाम नगरों के श्रीसंघ की सभामें इन चढावों के आदेश अंतिम बोली बोलने वालें को दिये गये थे।

वह समय ही अपूर्वउत्साहजनक था। भाग्यशाली श्रावक अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग करने के लिये एक एक से आगे बढते थे और जब किसी भी चढावे का आदेश उन को मिलता तब वे इतने आनंदित होते थे मानों उन्हें किसी अपूर्व पदार्थ की प्राप्ति हुई हो।

रात को करीब तीन बजे के समय महारात्री की वह संघसभा विसर्जन हुई थी और गोल श्रीसंघ के आगेवान उसी समय से द्वितीय दिन के कार्यों में प्रवृत्त हुए थे।

३० पंचमी का मंगल-प्रभात

संवत् १९९१ के द्वितीयवैशाखशुक्लपंचमी का प्रभात अपूर्व मंगलसमय था। जैन संघ के ही नहीं मनुष्यमात्र के मुख पर इस समय एक प्रकार की प्रसन्नता छायी हुई थी। जिन जिन भाग्यवानों ने रात्रि के समय चढावे बोले थे वे सब स्नानमज्जनपूर्वक शुद्धवस्त्र पहन कर तैयार हो रहे थे।

महाराजसाहब भी आज बहुत जल्दी से अपने आवश्यककार्यों से निवृत्त हो कर प्रतिष्ठामंडप में पधार गये थे। जिन बिम्बों के अधिवासनापर्यंत के संस्कार पहले हो चुके थे, आज अंजनशलाकाद्वारा नेत्रोन्मीलन कर केवलज्ञान और निर्वाणकल्याणक की विधि करना शेष था। इन कामों के उपयुक्त सब सामग्री पहले ही से तैयार करवा रक्खी थी। शेष विधान पूरा करने के उपरान्त अंजनशलाका का लग्न और नवांश आते ही मुनिमहाराजश्रीकल्याणविजयजीने सुवर्णशलाका से श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की अंजनशलाका की। बाद में शेष सभी जिनबिम्बों के भी अंजन कर नेत्रोन्मीलन किया। यह कार्य बडी शान्ति और शुभ निमित्तों में हुआ।

महाराजसाहब को इस विधान के मंत्रादि कण्ठस्थ थे, इस कारण कार्य शीघ्रतासे समाप्त हो गया। तुरन्त ही निर्वाणकल्याणक की विधि करके आपने मंगलगाथापाठ किया और बाद में स्थापनीय-बिम्बों को पालकियों में विराजमान कर मंदिर की तरफ रवाना किया।

३१ बिम्ब-प्रवेश और स्थापन

बिम्बस्थापन के, ध्वजा दंड कलश चढाने के और तोरण वांदने आदि के चढावे जिन्हों ने बोले थे, उन्हें पहले ही हिदायत कर दी थी कि वे सूर्योदय होते ही तैयार रहें। चढावा बोलने वाले समय पर आ पहुंचे थे। शेष संघ और सामान्य जनसमुदाय इस मंगल कार्य के दर्शन के लिये पहले ही उत्कण्ठित हो रहा था। प्रतिष्ठामण्डप और मंदिरों तक इतनी भीड जमा थी कि तिल रखने की जगह नहीं, तथापि स्वयंसेवको की कुशलता से जुलूस चलने का रास्ता हो जाता था।

प्रतिष्ठामंडप से स्थापनीय बिम्बों के लिये महाराज साहब के साथ वरघोडा मंदिरजी पहुंचा। वहां से मुनिमहाराज श्री कल्याणविजयजी श्रीपार्श्वनाथजी के मंदिर में पधारे और मुनिश्रीसौभाग्यविजयजी ऋषभदेवजी के मंदिर में। बिम्बों का सामेला वधावा होने के बाद तोरण वांदा गया और द्वार

पर पुंखणे की विधि के बाद बिम्ब मंडप में ले जाये गये। स्थापना की जगह पर सब कुछ कार्य पहले ठीक कर दिया गया था और तात्कालिक विधि उस वक्त कर करवा के शुभ -लग्न-नवांशक का समय आते ही दोनों मंदिरों में चढावे बोल कर आदेश लेने वालों के हाथों से जिनबिम्ब विराजमान कराये गये, ध्वजा, दंड, कलश चढवाये गये। यक्ष यक्षिणी स्थापित कराये गये। स्थापित जिनबिम्बादि पर मुनिमहाराज श्रीकल्याणविजयजी तथा सौभाग्यविजयजी के शुभ हस्तों से वासक्षेप हुआ। याचकों को विपुल दान दिया गया, तब गगनभेदी जयनाद करती हुई लोगों की भीड वहां से कुछ हटने लगी।

३२ याचकदान

प्रतिष्ठा जैसे उत्सवों में 'याचकदान' भी अपना खास स्थान रखता है।

जब से अंजनशलाका-महोत्सव शुरू हुआ तभी से याचकदान भी जारी था। मंगलकलशस्थापना पर, ग्रहदिक्पालादिपूजन पर, अभिषेक पर, दीक्षामहोत्सव विधि आदि के प्रसंगों पर याचकदान करने की प्रवृत्ति परम्परा से चली आती है। इन प्रसंगों पर तो भोजक, ब्राह्मण और पूजक आदि को दान दिया जाता ही है, पर इस का खास प्रसंग तो प्रतिष्ठा

है, उस समय उपर्युक्त जातियों के अतिरिक्त शिल्पि कों भी पारितोषिक दान (इनाम) दिया जाता है। अंजनशलाका जैसे महोत्सवों में इस प्रसंग पर सैंकडों रुपया का दान देना पडता है, गोलनगर में भी श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिष्ठा और स्थापना के समय वैसा ही हुआ, सब याचक दान से संतुष्ट किये गये।

इस के बाद सब से मोके का दान मुंडका दान है। अर्थात् प्रतिष्ठा होने के बाद प्रतियाचक कुछ दान दिया जाता है जो 'मुंडका' कहलाता है। खास तो मुंडका दान देने की रीति सेवकों के लिये ही प्रचलित है, परन्तु आज कल यति लोग भी मुंडका लेते हैं और उन के मुंडके की रकम सेवकों के मुंडके की रकम से दुगुनी होती है। अर्थात् सेवकों को प्रतिमनुष्य एक रुपया दिया जाता है तो यतियों को दो, सेवकों को दो तो यतियों को चार। मारवाड में याचकों में सब से अधिक संख्या सेवकों की, उन के बाद यतियों की, फिर श्रीमाली ब्राह्मण, भट्ट ब्राह्मण, भोजक, रावल आदि जातियों के नम्बर होते हैं।

गोल के महोत्सव पर सेवकों की संख्या ५०० पांच सौ के लगभग थी। यतियों की १०० एक सौ की। श्रीमाली, भट्ट, रावल, भोजक आदि प्रत्येक की संख्या सौ के अंदर थी। गोल के संघने सेवकों को प्रति मनुष्य ३ रुपया मुंडका

दिया यतियों को प्रतिमनुष्य-६-६ रुपये दिये। ब्राह्मण, रावल आदि को प्रतिमनुष्य १-१ रुपया दिया और भोजकों को एक मुस्त दान दिया।

इन याचकों के उपरान्त मारवाड में हिंडोला, नानकशाही, ओघड आदि अनेकप्रकार के मनुष्य आते हैं जो कुछ न कुछ ले ही जाते हैं।

गोल के श्रीसंघने प्रतिष्ठामहोत्सव पर कुल ३०००) तीन हजार से अधिक रुपया का याचक दान दिया।

३३ इन्द्र महाराज का आगमन

दश दिन पूरी शान्ति में बीते, न ज्यादा हवा चली, न गर्मी पडी और न वृष्टि हुई। इस पर लोग कहने लगे-'सब कुछ ठीक रहा, पर इस मौके पर इन्द्र महाराज का पधारना जरूरी था।' अर्थात् मारवाडवासियों की कुछ ऐसी मान्यता है कि प्रतिष्ठा-अञ्जनशलाका के प्रसंग पर थोडी बहुत वृष्टि होना शुभ शकुन है। ऐसा होने से प्रतिष्ठा विधिपूर्वक हुई यह समझा जाता है।

द्वितीयवैशाखशुदि ५ मी को रात्रि के करीब दश बजे थे। प्रतिष्ठामण्डप के सभामण्डप में गायन मण्डली नाचगान कर रही थी। हजारों मनुष्यों की सभा भगवद्भक्तिमय दृश्य

एकतान से देख-सुन रही थी। हजारों की मानवसंख्या होने पर भी सिवा गाने के और कोई आवाज वहां नहीं थी। ठीक उसी समय पश्चिम दिशा में एकायक मेघगर्जना सुनाई दी। थोडी सी आंधी के साथ बादलों की घटा भी ऊपर चढती हुई देखने में आयी और बिजली ने भी अपनी चमक से लोगों को चमका दिया। शान्त सभा एकदम क्षुब्ध हो गयी। उत्पातों की भविष्य वाणी के स्मरण से लोगों में भगदड मच गयी। परन्तु कुदरत की भी बलिहारी है! लोग सभा से पूरे उठने भी न पाये थे कि वर्षाद की घटा दो दो चार चार छींटे डालती हुई ऊपर होकर चली गयी। यद्यपि वहां से दश पंद्रह कोश पर इस मेघराज ने काफी जल वर्षाया और वायु देव ने भी अपना अच्छा बल आजमाया, परन्तु गोलनगर में कहने मात्र को छींटे डालने के उपरान्त कुछ भी उत्पात नहीं किया और आंधी तो आकाश में ही देखी गयी सो सही, जमीन पर उसकी खबर तक नहीं पडी। यह गड़बड करीब ८-१० मिनटों में ही बन्द हो गयी और लोगों ने कहा कि 'लो इन्द्र महाराज भी पधार गये।'

३४ प्रतिष्ठा के दिन की जनसंख्या

दश दिनों से गोलनगर में हजारों मनुष्यों का खासा मेला लगा हुआ था और वह दिन दिन वृद्धिंगत होता जाता

था। यह वृद्धि पञ्चमी के दिन अन्तिम सीमा को पहुंच गयी थी, क्योंकि महोत्सव का आखिरी दिन यही था। द्वितीय वैशाखशुदि ४ के शामको गोल में कम से कम २०००० वीस हजार मनुष्यों की संख्या थी और यह संख्या प्रायः जैन महमानों की थी। नगर भर के घर, मकान, चोकी, चबूतरा सब मनुष्यों से ठसाठस भरे हुए थे। इनके उपरान्त सेवक, भोजक, जति आदि याचकों ने अपने डेरे सूकडी नदी के तट पर और उसके भीतर जमाये थे। सैंकडों व्यापारी अपनी अपनी दूकानें चौक-मैदानों में लगा कर जमे हुये थे। पंचमी के दिन चतुर्थी की जनसंख्या में पर्याप्त (काफी) वृद्धि हुई। इसमें मुख्य संख्या अन्य वर्ण के मनुष्यों की थी और वह बारह तेरह हजार से कम न होगी। जैनों की संख्या में आज दो तीन हजार की और वृद्धि हुई होगी। जैन और जैनेतर मिलकर आज की जनसंख्या ३५००० पेंतीस हजार के आस पास थी। आज गोलनगर में तो क्या उस के बाहर भाग में भी मनुष्यों की इतनी भीड थी कि चलने को मार्ग नहीं मिलता। यद्यपि इस मनुष्य संघ की संख्या निश्चित रूप से नहीं की गयी थी, तथापि उस दिन के भोजन के उठाव के ऊपर जनसंख्या कूती गई थी जो पेंतीस हजार के लगभग होना पाया गया था। उस दिन गोल की पन्द्रह १५ (जालोर की १८॥।) कलसी की लापसी पकायी गयी थी। महाजनों का खुराक अन्य लोगों से कम होता है और वे १ कलसी की लापसी में

२००० दो हजार मनुष्य जीमते हैं, सम्भव तो इससे भी अधिक संख्या में जीमने का है, क्योंकि इनमें का अधिक भाग कई दिनों से इसी भोजन पर होने से वह बहुत कम खाता है, फिर भी हम फी कलसी लापसी २००० मनुष्य मान लें तो ११ कलसी में २२००० बाईस हजार और अन्य कौम के मनुष्य फी कलसी १५०० मान लें तो ८ कलसी की लापसी में १२००० मनुष्य जीम सकते हैं, इस हिसाब से १९ कलसी की लापसी के उठाव से ३४००० चोतीस हजार मनुष्यों की संख्या निश्चित मान सकते हैं, उस समय का मानव समुद्र देखते यह संख्या कुछ अधिक भी नहीं है।

३५ वैशाख शुक्ल षष्ठी

पंचमी का दिन यद्यपि उत्सव का आखिरी दिन था, तथापि मेला षष्ठी तक बना रहा। कारण यह था कि षष्ठी को दोनों टाइम नोकारसी थी और शान्तिस्नात्र पढानी थी इस लिये संघ की आण देकर इस दिन भी श्रीसंघ को ठहरा लिया था।

इस दिन क्रियाविधान में शान्तिस्नात्र पढाने का प्रोग्राम था, परन्तु भाव और संयोग अधिक भक्तिजनक होने से अष्टोत्तरी बृहच्छान्तिस्नात्र पढाई गई।

यह पूजा श्रीपार्श्वनाथजी के मन्दिर में महाराज साहिब श्रीकल्याणविजयजी की आज्ञानुसार मुनिमहाराज श्री सौभाग्यविजयजी और शेठ नगीनदासभाई के द्वारा पढाई गयी थी और ग्राम के फिरती स्नात्रजल की जलधारा दी गयी थी।

इसके अतिरिक्त टीका मांडने का कार्य भी आज ही हुआ। प्रतिष्ठा होने के बाद उस गांव के मन्दिरजी में बाहर गांवों के श्रीसंघ जो भंडार में अमुक रकम देते हैं उस को इस प्रदेश में 'टीका मांडना' अथवा 'टीका देना' कहते हैं, इसी रस्म को कहीं 'केसर मांडना' और कहीं 'भंडार मांडना' भी कहते हैं।

बहुत जगह टीका प्रतिष्ठा के ही दिन ले लिया जाता है परन्तु गोल में प्रतिष्ठा के दूसरे दिन टीका लिया गया। क्योंकि यह रस्म अदा होने के बाद बाहर का संघ प्रायः चला जाता है, परन्तु यहां संघ को रोकना था अतएव यह रस्म दूसरे दिन अदा किया गया।

टीका मांडने में भी मारवाड में पहले पीछे का रिवाज हुआ करता है यहां भी इस विषय में खासी चर्चा विचार के बाद टीका मांडना शुरू हुआ। गांव नगरों के संघों और व्यक्तियों की मिलकर टीके की कुल रकम ९०००) नौ हजार हुई।

इस दिन प्रभात समय करीब १७०००-१८००० सतरह अठारह हजार मनुष्य गोल में थे और यह संख्या प्रायः

जैनों की थी। अन्य वर्ण के लोग आज बहुत कम रह गए थे। टीका मण्डने के बाद् शाम को जीम कर यह मेला भी विसर्जन होने लगा और रात पडते पडते बहुत लोग बिखर गये, दूसरे दिन मुश्किल से बाहर के पन्द्रह सौ मनुष्य वहां रहे होंगे।

२६ सेवा का सम्मान

सेवा करना एक अति कठिन कार्य है, परन्तु सेवा का सम्मान करना भी कम कठिन नहीं। प्रायः देखा जाता है कि जब तक मनुष्यों को गर्ज होती है तब तक वे सहायता करने वालों की खुशामद किया करते हैं, परन्तु काम निकलने के बाद् वे अपने सहायकों को भूल जाते हैं, आनन्द का विषय है कि गोल के श्रीसंघ के संबन्ध में ऐसा नहीं हुआ। प्रतिष्ठा के काम में जिन जिन की सहायता मिली थी गोल के श्रीसंघ ने उन सबकी उचित कद्र की। दृष्टान्त के तौर पर हम स्वयं सेवक मण्डलों के सम्मान का यहां उल्लेख करेंगे।

श्री आदिजिन-सेवामण्डल-तखतगढ और श्री ओसवाल नवयुवक सेवामण्डल जालोर ने गोल के श्री संघ को होने वाली अपूर्व यशःप्राप्ति में अपनी अपूर्व सेवा द्वारा जो सहायता प्रदान की थी वह श्रीसंघ के ध्यान के बाहर नहीं थी।

सेवामण्डलों की इस सेवा के सम्मानार्थ गोल के श्रीसंघ ने वैशाख शुदि ७ के दोपहर को तीन बजे प्रतिष्ठा-मण्डप के

सभामण्डप में श्री सकलजैनसंघ की सभा होने संबन्धी नोटिस निकाल दिये थे जिस से समय होते ही सभामण्डप सभासदों से भर गया था। पूर्वोक्त दोनों सेवामण्डल भी अपनी अपनी वर्दी पहने हुए सभा में हाजर थे। गोल का श्रीसंघ भी समय होते ही वहां उपस्थित हो गया था।

सभा का प्रमुखपद खरतरगच्छ के आचार्य श्रीमान् धरणीन्द्रसूरिजी को दिया गया। मंगलाचरणादि होने के बाद श्री गोल के संघ की तरफ से जालोर-दरबारस्कूल के तत्कालीन हेडमास्टर साहब मुंहता किसनराजजी ने सभा बुलाने का उद्देश प्रकट किया।

श्री जालोरवासी कानूंगा कानमलजी रामलालजी ने प्रतिष्ठासंबन्धी कार्य का दिग्दर्शन कराने के साथ अन्य स्थानों में होने वाली प्रतिष्ठा-अंजनशलाकाओं से इस अंजनशलाका की विशिष्टता समझाई और ऐसे भारी कार्य की इस प्रकार निर्विघ्न समाप्ति होने में महाराज साहबका पुण्यप्रभाव और स्वयंसेवकों की अपूर्व संघसेवा को कारण बताया।

इसके बाद गोल के संघ की तरफ से मुंहता भेरूमलजी वकील जालोरवालोंने अभिनन्दन पत्र (मानपत्र) सभा में पढ कर दोनों मण्डलों को अर्पण किये और प्रसंगोचित व्याख्यान दिया। पाठकगण के अवलोकनार्थ हम उनमें से एक अभिनन्दनपत्र को नीचे उध्धृत करते हैं।

"अभिनन्दन पत्र"

श्री आदिजिन सेवामंडल-तखतगढ-मारवाड

भाइयो !

आप सज्जनों ने हमारे यहाँ अजनशलाका के शुभ प्रसंग पर पधार कर रात-दिन तन-मन से जो सच्ची सेवा की है उसकी प्रशंसा करना हमारी शक्ति के बाहर है। हमारे पास एक भी ऐसा शब्द नहीं है कि जिससे हम आपके इस कार्य की किंचिन्मात्र भी प्रशंसा कर सकें, हजारों मनुष्यों के रोजाना खान-पान और वरघोडे आदि की प्रशंसनीय व्यवस्था करके आपने हमारे ही नहीं बल्कि सैंकडों गांवों के जैनसंघ के हृदयपट पर अपूर्व प्रभाव डाला है।

आपकी इस निःस्वार्थ संघसेवा और कार्यक्षमता का हम हार्दिक सम्मान करते हैं, और शासनदेव से प्रार्थना करते हैं कि आपका सेवामण्डल इसी प्रकार के सेवाभाव से यशस्वी बने।

यद्यपि आपकी इस संघसेवा का बदला देना हमारी शक्ति के बाहर है फिर भी हमारा संघ आपके कार्य से खुश होकर सुवर्ण चांदी के 'सम्मान पदक' और 'अभिनन्दन पत्र' अर्पण करता है जिन्हें आप स्वीकार कर हमें आभारी करेंगे।

ता. २०-५-३४ ई०
दा० दीपचंद मुलाजी
,, दानमल सायबजी
,, भेरा कसनाजी
,, ताराचंदरा छे,

आपका शुभचिंतक
जैन संघ-गोल
दा॥ रखबचंद साहेबजी
मुता मेघराज मोतीचंदजी।

अभिनन्दन पत्र की नकल उस पर हस्ताक्षर करने वाले गोल के पंचों के नाम के साथ ऊपर मुजब है। जालोर के ओसवाल नवयुवक सेवामंडल को दिया हुआ अभिनन्दन पत्र भी अक्षरशः ऊपर मुजब ही है।

अभिनन्दन पत्र अर्पण करने के बाद भी कई सज्जनों ने प्रासंगिक विवेचन किये। और मुनिमहाराज श्रीकल्याण-विजयजी का-

'सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः'

इस पोइंट पर सारगर्भित व्याख्यान हुआ। अन्त में प्रमुख महोदय ने बडा ही आकर्षक और रोचक व्याख्यान और इस अंजनशलाका जैसे महान् कार्य को निर्विघ्नतापूर्वक पार पहुंचाने के बदले में पूज्य मुनिमहाराज साहबों को बधाई दी और इस प्रकार के धर्मकार्य में लक्ष्मी का व्यय करके धर्म और संघभक्ति का लाभ उठाने वाले गोलनगर के जैन-संघ को हार्दिक धन्यवाद दिया।

अंत में दोनों सेवा मंडलों ने अपने कसरत के प्रयोगों से सभाजनों का मनोरंजन किया और जयध्वनि के साथ सभा विसर्जन हुई।

३७ आय-व्यय

मारवाड की प्रतिष्ठा-अंजनशलाकाओं में आय-व्यय अर्थात् उपज और खर्च भी अपना खास स्थान रखते हैं। अन्य देशों में जैन प्रतिष्ठाओं में न ज्यादा खर्च होता है, न पैदायश, परन्तु छोटी मारवाड के लिये ये दोनों बातें बडे महत्त्व की होती हैं। यहां के जैनों के लिये मंदिर की प्रतिष्ठा कराना बडे से बडा कार्य होता है। वे अपनी शक्ति भर खर्च करके प्रतिष्ठा-महोत्सव करते हैं। इस प्रसंग पर उन्हें कम खर्च करने के लिए कहा भी जाय तो नहीं मानते। कहते हैं, खर्च नहीं करेंगे तो उपज कैसे होगी ?। कुछ अंश में यह बात है भी सही। प्रतिष्ठा पर जैसा खर्च किया जाता है वैसी ही उपज भी होती है।

प्रतिष्ठा-अंजनशलाकाओं में उपज के ४ चार मद होते हैं-१ नोकारसियों के चढावे, २ वरघोडे के चढावे, ३ ध्वजा, दंड, कलश, बिम्बस्थापन आदि के चढावे और ४ टीका अथवा भंडार मांडना।

इसी प्रकार प्रतिष्ठाओं में खर्च के भी अनेक मद्द होते हैं जैसे १ भोजन, २ सामग्री जुडाना, ३ पूजापा, ४ प्रतिष्ठा मंडप, ५ भोजनमंडप, ६ कीर्तिदान आदि। इन सब में भोजन खर्च सब से आगे निकलता है। शेष उक्त और अनुक्त अनेक कामों में हजारों रुपया खर्च होता है।

पिछले पचास वर्ष के अंदर होने वाली मारवाड की अंजनशलाकाओं में गोल की अंजनशलाका जैसे अपना अग्रस्थान रखती है वैसे ही इस के आय व्यय भी अपना खास स्थान रखते हैं। गोल की अंजनशलाका में कुल उपज चारों मद्दों से नीचे लिखे मुजब हुई।

४२६११) बयालीस हजार छः सौ ग्यारह रुपया चैत्रशुदि १० के दिन बोले गये ११ नौकारसियों के चढावों के हुए।

२१९४५) इक्कीस हजार नौ सौ पेंतालीस रुपया ग्यारह दिन के वरघोडों (जुलूसों) में बोले गये चढावों के हुए।

३६१८७) छत्तीस हजार एक सौ सत्तासी रुपया वैशाख शुदि ४ को रातसमय में बोले गये ध्वजा, दंड, कलश, बिम्बस्थापनादि के चढावों के हुए।

९०००) नौ हजार रुपया टीका के मंडे।

कुल जोड १०९७४३) एक लाख नौ हजार सात सौ तयालीस रुपया ।

गोल की अंजनशलाका में भोजन, साधनसामग्री भेंट और दान आदि भिन्न भिन्न विषय में कुल ५०००० पच्चास हजार रुपया के लगभग खर्च हुआ ।

३८ उत्सव की परिसमाप्ति

उत्सव के और पर्व के दिन आते मालूम होते ह जाते मालूम नहीं होते । अंजनशलाका-महोत्सव जब तक दूर था लोग दिन गिनते और तरह तरह के मनोरथ मंसूबे बांधते थे परंतु उत्सव आया और गया इस का मानों पता ही न लगा।

लगभग तमाम अन्य वर्ण के लोग और तीन चार हजार के आसरे जैन महमान तो पंचमी के शाम को ही रवाने हो गये थे । शेष संघजन वैशाख-शुक्लषष्ठी के शाम को जीम कर रवाने होने लगे थे सो खासी रात आयी वहां तक जाते ही रहे । इस दिन रात तक लगभग सारा जैन संघ विदा हो चुका था, फकत दोनों सेवामंडल, गायनमंडली, खास खास महमान और गांववालों के सगे संबन्धी विगैरह मिल कर करीब १५०० पंदरह सौ मनुष्य पीछे रहने पाये होंगे ।

पंचमी के शाम से सप्तमी के शाम तक गोल की चारों

तरफ के तमाम मार्ग चलते रहे। चोकी पहरे का बंदोबस्त होने से लोग दिन और रात चलते ही रहते थे। सप्तमी को नगर में मनुष्य बहुत कम दिखते थे। यद्यपि तब तक बाहर के बहुत आदमी थे और नगर मनुष्यों से भरा हुआ था तथापि ३००००-३५००० हजार मनुष्य का मेला देखे हुए मनुष्यों को सप्तमी का दिन जन शून्यसा दिखता था और अष्टमी के रोज तो वहां ओर भी अधिक निर्जनता मालूम होती थी।

इस प्रकार गोल का चिरस्मरणीय अंजनशलाका-महोत्सव बडी सजधज के साथ आया और शान शौकत के साथ बीता, परंतु हजारों मुखों में ये शब्द छोडता गया 'धन्य अंजनशलाका! धन्य गोल!'।

३९ परिशिष्ट

श्री गोलनगर अंजनशलाका उत्सव पर गायनमंडली के गाए हुए गांयन

१ गायन

(राग-केशरीया थासुं.)

भयो ओच्छव भारी, पार्श्वप्रतिष्ठा गोलनयर में ॥ आंकणी ॥
सुखडी सरिता सुंदरतट पर, श्री गोलनगर उद्दाम।
जैन जगत ज्योति झलकावत, अंजनशलाका शुभ काम रे भयो० ॥

पार्श्वप्रभु श्री तख्त बिराजित, अवरबिंब शुभ साथ ।
दीपचंद शेठ श्री संघनायक, करे गोलसंघ साथ रे ॥ भयो०॥२॥

मुनिप्रवर श्रीकल्याणविजयजी, सौभाग्यविजयजी संगे ।
गुरां साहेब श्री भक्तिसोमजी, करे क्रिया शुभरंगे रे ॥ भयो०॥३॥

रंग बेरंगी धजा वावटा, मंडप रचना भारी ।
विविधवाजित्रमधुरध्वनि से, सोहत प्रभु अस्वारी रे ॥भयो०॥४॥

ब्रह्मचर्याश्रम-संगीतमंडल, सिद्धक्षेत्रथी आवे ।
गीत-नृत्य-वाजिंत्रलयोथी, 'नागर' प्रभुगुण गावे रे ॥भयो०॥५॥

२ गायन

(राग-वीरा वेश्याना यारी०)

धन्य ओच्छव आजे, प्रभुजी बिराजे, आनंद मंगल आज, ।
प्रभु पार्श्व बिराजे, शिवसुखकाजे, आनंद-मंगल आज, ॥आं०॥

सरिता सुखडी तीर मनोहर, गोलनगर सुस्थान ।
जैनप्रभाकर पार्श्वप्रभुजी, कीधी करुणा महान रे ॥धन्य० ।१।

नायक संघतणा दीपचंदजी, शेठ शूरा गुणवान ।
निःस्वार्थ भावे प्रेमभक्ति थी, कार्य बजावे सुजान रे ॥धन्य०।२।

मुनिप्रवर श्री कल्याणविजयजी, सौभाग्यविजयजी साथ ।
गुरां साहेब श्री भक्तिसोमजी, करे क्रिया भलिभात रे।धन्य०।३।

शोभा मंडपनी भासे भलेरी, कहेतां न आवे पार।
नौतम अनुपम रचना रुपाली, जन-मन-रंजनहार रे ॥धन्य०।४।

भविकजन नर नारी केरा, हैये हरख न माय।
थाय कृतार्थ प्रीतेथी पधारी, निरखीने जिनराय रे ॥धन्य०।५।

धन्य भूमि मरुधर केरी, धन्य नगर ते वास।
धन्य सुभग जन वासी अहीं, ज्यां पार्श्वप्रभुना वास रे ॥धन्य०।६।

श्री सिद्धक्षेत्र सुतीर्थभूमिना, ब्रह्मचर्याश्रम-बाल।
प्रीते प्रभुगुणगाय सदा ने, इच्छे सकल जयकार रे।धन्य०।७।

३ गायन

(राग-प्रभु भजन कर प्रभु भजन०)

गोलनगर धन्य गोल नगर......॥आं०॥

शोहामणुं पुर शोभे मनोहर,
रम्य रसाल भूमि मरुधर ॥ गोल० ॥१॥

पुनीत सरिता सुखडी केरां,
वहे सदाए ज्यां निर्मल जल ॥ गोल० ॥२॥

पार्श्वप्रभुजीना दरबार दीपे,
ज्योति जेनी जगमगे झलहल ॥ गोल० ॥३॥

श्रीदीपचंदजीसम श्रीमंतो,
वसे सेवाभावी स्वार्थ वगर ॥ गोल० ॥४॥

मुनिप्रवर श्री कल्याणविजयजी,
सौभाग्यविजयजी श्रेष्ठ छत्तर ॥ गोल० ॥५॥

गुरां साहेब भक्तिसोमसमा ज्यां,
मुनिगुणज्ञ शोहे शुभ कर ॥ गोल० ॥६॥

धन्य दिवस शुभ आनंदकारी,
पार्श्वप्रतिष्ठा सुकार्य मंगल ॥ गोल० ॥७॥

शोभा अनुपम उर हरखावे,
आनंद आनंद छायां सकल ॥ गोल० ॥८॥

श्रीसिद्धक्षेत्रब्रह्मचर्याश्रम,-
केरां शिशु गुण गावे जिनवर ॥ गोल० ॥९॥

४ श्री गोलनगरमण्डनपार्श्वनाथस्तवन

(राग-समुद्र के लाला०)

पासप्रभु की मोहनी मूरत,
देखत दिल को मोह लिया ॥आं०॥

गोलनगर में आप बिराजो,
तेवीसमा जिनचंद ।
दर्शन तेरा आज ही पाया,
मिट गया कर्म का फंद ॥पासप्रभु० ॥१॥

अंगी बनी क्या आनंदकारी,
सूरत तेरी है अतिप्यारी ।
आलम सारी तुम गुण गावे,
नाचत वंदत सीस नमावे ॥ पास० ॥२॥
उन्नीसे एकाणुं द्वितीय वैशाखे,
शुदिपंचमी सब संघ की साखे ।
नूतनमंदिर तख्त बिराजे,
जयजयनाद से मंदिर गाजे ॥ पास० ॥३॥
विश्वपति प्रभु मोहनगारा,
गोलप्रजा के हो सुखकारा ।
आश पूरो सब संकट चूरो,
दिन दिन संपत् हो भरपूरो ॥ पास० ॥४॥
वामाराणी के नंदन प्यारे,
प्रभावती के आप दुल्हारे ।
सौभाग्यविजय की अर्ज सुणीजो,
दास की खबरां नित नित लीजो ॥
पासप्रभु की० ॥५॥

५ लावणी

आनन्द छे आजे गोलनगरनी मांहि,
शोभा छे अपरंपार मणा नथी कांइ

मणिमय मण्डप रचियो छे अति उत्साहे,
वारे वारे जोवाने मन ललचाये ॥आनन्द छे०॥१॥

वाजित्र बहु विध विध परकारना वागे,
थता श्रवण कानने अति मधुरा लागे ।
हस्ती घोडा रथ मनुष्यनो नहीं पार
वली जमवा माटे उत्तम भोजन सार ॥आनन्द० ॥२॥

इन्द्रापुरी सम गोलनगर तो शोभे,
जोवाने माटे देवसभा पण थोभे ।
मुनि कल्याणविजयजी महाराज भले पधार्या,
मुनि सौभाग्यविजयजी महाराज हमोने भाव्या ॥आनन्द०३॥

संवत् उगणीसे नेउआ (१९९०) मास वैशाख,
शुक्लपक्षने उत्तम शुक्रवार ।
प्रभु पारसनाथ शुभपंचमीदिने पधराशे,
ए शुभ दिवसे आनन्द अति वरताशे ॥आनन्द० ॥४॥

गुण गावे भोजक कर जोडी बहुभावे,
प्रभु पार्श्वनाथना दर्शनथी दुख जावे ॥
आनन्द छे आजे गोलनगरनी मांहि,
शोभा छे अपरंपार मणा नथी कांइ ॥५॥

॥ इति समाप्त ॥

—— ० ——

परिशिष्ट २

पोषधविधि ।

दिवस–पोषध

१ पोषध

"पोषं दधाति इति पोषधः" अर्थात् धर्म की पुष्टि करे उसे 'पोषध' कहते हैं। पोषध जैन–श्रावक के पालने योग्य बारह व्रतों में से 'ग्यारहवां' व्रत है। सामान्यतया यह अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वदिनों में और विशेषप्रसंगों में किसी भी दिन किया जाता है।

मुख्यवृत्त्या पोषध आठ पहर का करना चाहिये, परंतु जिनकी भावना आठ पहरका करने की नहीं होती वे दिन को अथवा रात्रि को चार पहर का भी पोषध करते हैं।

पोषध के मुख्य भेद चार होते हैं–१ आहारपोषध, २ शरीरसत्कारपोषध, ३ ब्रह्मचर्यपोषध और ४ अव्यापारपोषध।

१–उपवास आदि तप करना उसका नाम 'आहारपोषध।'

२–स्नान–विलेपनादि शरीरविभूषा का त्याग करना सो 'शरीरसत्कारपोषध।'

३–विषयवासना का त्याग कर ब्रह्मचर्य पालन करना उसे 'ब्रह्मचर्यपोषध' कहते हैं।

४–सांसारिकप्रवृत्तियों का त्याग कर धर्मध्यानमें प्रवृत्ति करना उसका नाम 'अव्यापारपोषध।'

उक्त चारों भेदों को देश और सर्वसे गिनने से आठ भेद होते हैं और उनके संयोगी भेद ८० होते हैं, परन्तु पूर्वाचार्यों की परंपरानुसार आज कल केवल आहारपोषध देश और सर्व भेद से किया जाता है, शेष तीन प्रकार के पोषध सर्व से किये जाते हैं, देश से नहीं। आहारपोषध में सर्व प्रकार के आहारों का त्याग कर 'चउविहार' उपवास करना उसको 'सर्व स आहारपोषध' और तिविहार उपवास, आ बिल, नीवि, एकाशन करना उसको 'देश से आहारपोषध' कहते हैं।

२ पोषध लेने का समय

मुख्यवृत्त्या रात्रिप्रतिक्रमण करने के पहले पोषध लेना चाहिये, फिर रात्रिप्रतिक्रमण कर के प्रतिलेखना करनी चाहिये, परन्तु आजकल पहले रात्रिप्रतिक्रमण कर लेते हैं, फिर शरीरचिन्ता आदि से निवृत्त हो जिनमंदिर का योग हो तो जिनपूजा कर के बाद में पोषध ग्रहण करते हैं। कुछ भी हो परंतु जहां तक हो सके पोषध जल्दी लेना चाहिये, समय हो तो पूजा

कर केपोषध लेना अच्छा है, परन्तु पूजा के आग्रह से पोषध लेने में अधिक विलंब करना भी अच्छा नहीं है।

३ पोषधलेने की विधि

प्रथम खमासमण देकर "इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं पडिक्कमामि" 'इच्छं' कह कर 'इरियावही' 'तस्स उत्तरी' 'अन्नत्थ' बोलकर एक 'लोगस्स' अथवा चार नवकार का काउस्सग्ग करे, पार कर ऊपर प्रकट लोगस्स बोले, फिर खमा०, इच्छा० 'पोसहमुहपत्ति पडिलेहुं' इच्छं कह कर

१-यह 'इच्छं' 'इच्छामि' क्रियापद का रूप है, इसका अर्थ 'चाहता हूं' यह होता है। यह पद आदेशस्वीकारात्मक होने से गुरु का आदेश प्राप्त होने पर बोलना चाहिये, परन्तु गुरु के अभाव में स्थापनाचार्य को गुरु मान कर उनके आगे क्रिया करते समय भी प्रत्येक आदेश के अन्त में यह पद अवश्य बोलना चाहिये।

२-जहां जहां 'लोगस्स' का काउस्सग्ग लिखा हो वहां 'लोगस्स' ही गिनना चाहिये, परन्तु जिसको लोगस्स याद न हो वह एक लोगस्स के बदले में चार नवकार गिने।

३-जहां केवल 'इरियावही' करने का लिखा हो वहां भी इसी प्रकार खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर इरियावही, तस्स उत्तरी, अन्नत्थ आदि सूत्र बोलकर एक लोगस्स का काउस्संग्ग करना चाहिये और ऊपर प्रकट लोगस्स कहना चाहिये।

४-जहां जहां 'खमा०' लिखा हो वहां 'इच्छामि खमास-

मुहपत्ति की पडिलेहणा कर खमा० इच्छा० 'पोसह संदिसाहु' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'पोसह ठाउं' 'इच्छं' कह के दोनों हाथ जोड एक नवकार पढकर खडा हो "इच्छकारि भगवन्! पसाय करी पोसहदंडक उच्चरावोजी" इस प्रकार बोलकर गुरु-मुख से पोसह उच्चरे, गुरु का योग न हो तो स्वयं अपने मुखसे नीचे का पाठ पढकर पोषध उच्चरे—

"करेमि भन्ते पोसहं, आहारपोसहं देसओ सव्वओ, सरीर सक्कारपोसहं सव्वओ, बम्भचेरपोसहं सव्वओ, अव्वावार-पोसहं सव्वओ। चउव्विहे पोसहे ठामि। जावदिवसं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं—मणेणं वायाए काएणं, न करेमि

मणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि" इस प्रकार यह संपूर्ण सूत्र बोलना।

१—जहां इच्छा० लिखा है वहां "इच्छाकारेण संदिसह भगवन्" इतना वाक्य बोलना चाहिये।

२—गुरु के अभाव में पोषध लिया हुआ कोई जानकार श्रावक वहां हाजर हो तो उसके मुखसे भी पोषध लिया जा सकता है।

३—आठ पहर का पोषध उच्चरते समय "जावदिवसं" के स्थान में "जाव अहोरत्तं" और रात्रि के चार पहर का पोषध उच्चरते समय "जाव सेसदिवसं रत्तं" ऐसा पाठ बोलना चाहिये। यदि चार पहरका और आठ पहर का साथ उच्चरना हो तो "जाव दिवसं अहोरत्तं" ऐसे बोलना चाहिये। प्रातःकाल चार पहर का पोषध उच्चरनेवाला

न कारवेमि, तस्स भन्ते पडिक्कमामि निंदामिं गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।"

खमा० इच्छा० 'सामायिकमुहपत्ति पडिलेहुं?' 'इच्छं' कह बैठकर मुहपत्ति पडिलेहण करे और खमा० इच्छा० 'सामायिक संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'सामायिक ठाउं' 'इच्छं' कह एक नवकार गिन "इच्छकारि भगवन् पसाय करी सामायिक दंडक उच्चरावोजी" यह बोल कर गुरुमुखसे अथवा स्वयं नीचे का पाठ बोलकर सामायिक व्रत उच्चरे–

"करेमि भन्ते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव पोसहं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं–मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि, तस्स भन्ते पडिक्कमामि निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।"

बाद में खमा० इच्छा० 'बेसणे संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बेसणे ठाउं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'सज्झाय संदि-

---

यदि रातपोषध भी करना चाहे तो दिन के रहते हुए फिर पोषध उच्चरे और पाठ "जाव अहोरत्तं" बोले।

१–पोषध के विना सामायिक करना हो उसकी भी यही विधि है। इरियावही करके सीधा सामायिक मुहपत्ति पडिलेहण करे और तीन नवकार गिनने पर्यन्त तमाम विधि यहां लिखे मुजब करे, सिर्फ 'जावपोसहं' के स्थान 'जाव नियमं' ऐसा पाठ बोले।

साहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० सज्झाय करुं 'इच्छं' कहकर तीन नवकार गिनना। फिर खमा० इच्छा० 'बहुवेल संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बहुवेल करशु' 'इच्छं।'

प्रतिलेखनाविधि—

खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करुं' 'इच्छं' कहकर मुहपत्ति चरवला, कटासन (बैठका), कन्दोरा और पहिरी हुई धोती, इन पांच उपकरणों की पडिलेहणा करना। बाद में खमा० देकर इरियावही का काउसग्ग करना, ऊपर प्रकट लोगस्स कहना। फिर खमा० 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहावोजी' 'इच्छं' कह कर स्थापनाचार्य की पडिलेहणा करे, स्थापनाचार्य की पडिलेहणा दूसरे ने कर ली हो अथवा गुरुमहाराज के स्थापनाचार्य के सामने क्रिया की जाती हो तो एक बडेरे श्रावक के अप्रतिलेखित उत्तरासन की पडिलेहणा करना। बाद में खमा० इच्छा० 'उपधिमुहपत्ति पडिलेहुं' 'इच्छं' कह मुहपत्ति की पडिलेहणा करे, फिर खमा० इच्छा० 'उपधि संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'उपधि पडिलेहुं' 'इच्छं' कह कर बाकी के पास में रखे हुए तमाम वस्त्रों की 'पडिलेहणा' करे।

पडिलेहणा करने के बाद इरियावही करं एक पौषधिक

काजा लेवे और दूसरी बार इरियावही करके "अणुजाणह जस्सुग्गहो" ये शब्द बोल कर उसे परठ देवे, परठने के बाद 'वोसिरे' यह पद तीन बार बोले, फिर सब अविधि आशातना का 'मिच्छामि दुक्कडं' देकर देववन्दन करें।

५ पोषध लेने के पहले पडिलेहणा करने की विधि—

इरियावही करके खमा० इच्छा० 'पडिलेहणा करुं?' 'इच्छं' कह कर मुहपत्ति, कटासन, चरवला, और दूसरे तमाम वस्त्रों की पडिलेहणा एक साथ कर लेनी चाहिये, फिर इरियावही कर काजा लेना और दूसरी इरियावही कर विधिपूर्वक परठना चाहिये।

जिसने पोसह लेने के पहले पडिलेहणा कर ली हो उस को पोसह लेने के बाद सिर्फ पडिलेहना के आदेश लेने चाहिए और जहां 'मुहपत्ति पडिलेहण' का आदेश हो वहां मुहपत्ति की पडिलेहणा करनी चाहिए, दूसरे उपकरणों की फिर पडिलेहणा करने की जरूरत नहीं है, और न काजा लेने परठने की ही जरूरत है। मात्र अविधि आशातना का 'मिच्छामि दुक्कडं' देकर देववन्दन करना चाहिये।

१-ऊनी झाडू से जमीन झाडने से जो कूडा कर्कट इकठा होता है उसे 'काजा' कहते हैं।

२-'परठने' का तात्पर्य त्यागने—छोडने से है।

६ पोषध लेने के बाद 'राइय' प्रतिक्रमण—

जिसे पोषध करना हो उसे पहले रात्रिकप्रतिक्रमण अवश्य कर लेना चाहिये, परन्तु किसीने कारणविशेषसे प्रतिक्रमण न किया हो तो उसे पोसह लेने के बाद भी पडिलेहणा करके देववन्दन करने के पहले नीचे लिखे मुजब राइयप्रतिक्रमण कर लेना चाहिये।

इरियावही कर खमासमण दे आदेशपूर्वक कुसुमिणी दुसुमिणी का काउस्सग्ग करना, आगे की विधि नित्य मुजब करनी, मात्र सात लाख के स्थान इच्छा० 'गमणागमणे आलोउं' 'इच्छं' कह कर नीचे लिखा हुआ गमणागमणे का पाठ बोलना—

गमणागमणे—

"ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभंडनिक्खेवणासमिति, पारिट्ठावणियासमिति, मनगुप्ति, वचनगुप्ति कायगुप्ति ए पांच समिति त्रणगुप्ति आठ प्रवचनमाता श्रावकतणे धर्मे सामायिक पोसह लीधे रूडी रीते पाली नहीं, खंडना विराधना थइ होय ते सविहुं मन, वचन, कायाए करी तस्स मिच्छामि दुक्कडं।"

अन्तमें 'भगवानहं' आदि कहने के पहले खमा० इ-

च्छा० 'बहुवेल संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बहुवेल करशुं' 'इच्छं' कह कर फिर 'भगवानहं' आदि कहके 'अड्डाइज्जेसु' कहना और बाद में सब के साथ देववन्दन करना।

७ देववंदन विधि-

प्रथम खमासमणपूर्वक इरियावही करना, 'लोगस्स' कह के उत्तरासन कर खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करुं ?' 'इच्छं' कह कर चैत्यवन्दन, नमुत्थुणं और 'जय वीयराय' (आभवमखंडा) तक कहना, फिर खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करुं ?' 'इच्छं' कह कर चैत्यवन्दन, नमुत्थुणं, अरिहंतचेइयाणं, अन्नत्थ, १ नवकार का काउसग्ग और १ स्तुति, इसी प्रकार लोगस्स, पुक्खरवरदीवड्ढे और सिद्धाणं बुद्धाणं के अंत में एक एक नवकार का काउस्सग्ग और एक एक स्तुति कहनी। चतुर्थ स्तुति कहने के बाद बैठ कर नमुत्थुणं कहना और फिर पहले ही की तरह 'अरिहंतचेइयाणं' आदिसे लेकर 'सिद्धाणं बुद्धाणं' और वेयावच्चगराणं' तक के सूत्र और चार स्तुतियां कहनी।

दूसरी बार चतुर्थ स्तुति कहने के बाद फिर नमुत्थुणं दोनों जावंति और स्तवन कह के 'आभवमखंडा' तक 'जयवीयराय' कहना। फिर खमा० इछा० 'चैत्यवंदन करुं' 'इच्छं' कह कर चैत्यवंदन और नमुत्थुणं कह कर 'जयवीयराय' संपूर्ण कहना और अविधि आशातना का मिच्छामि दुक्कडं देकर सज्झाय करना।

८ सज्झायविधि—

खमा० इच्छा० 'सज्झाय करुं' 'इच्छं' कह कर उकडु पगों पर बैठ नवकार गिन के एक जन 'मन्नहजिगाण' सज्झाय कहे और दूसरे सब सुने। सज्झाय के अंत में फिर नवकार गिनने की जरूरत नहीं है।

"मन्नह जिणाण" सज्झाय—

मन्नह जिणाणमाणं, मिच्छं परिहरह धरह सम्मत्तं।
छव्विह आवस्सयम्मि, उज्जुत्ता होह पइदिवसं ॥१॥

पव्वेसु पोसहवयं, दाणं शीलं तवो अ भावो अ।
सज्झायनमुक्कारो, परोवयारो अ जयणा य ॥२॥

जिणपूआ जिणथुणणं, गुरुथुअ साहम्मिआण वच्छल्लं।
ववहारस्स य सुद्धी, रहजत्ता तित्थजत्ता य ॥३॥

उवसम-विवेग-संवर, भासासमिई छजीवकरुणा य।
धम्मिअजणसंसग्गो, करणदमो चरणपरिणामो ॥४॥

संघोवरि बहुमाणो, पुत्थयलिहणं पभावणा तित्थे।
सड्ढाण किच्चमेअं, निच्चं सुगुरूवएसेणं ॥५॥

९ पोरिसी पढाने की विधि—

पोसहवालों को कच्ची ६ घडी दिन चढने के बाद पोरिसी पढानी होती है जिसकी विधि इस प्रकार है-

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' दूसरा खमा० इच्छा० 'इरियावहियं पडिक्कमामि' 'इच्छं' कह इरियावाही कर १ लोगस्स का काउस्सग्ग करना, ऊपर प्रगट 'लोगस्स' बोल खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करुं ?' 'इच्छं' कह कर मुहपत्ति की पडिलेहण करनी ।

१० राइमुहपत्ति पडिलेहण विधि-

गुरुमहाराज का योग होने पर भी राइप्रतिक्रमण उनके समक्ष आदेशग्रहणपूर्वक न किया हो तो पोसहवालों को गुरु-महाराज के समक्ष राइमुहपत्ति पडिलेहनी चाहिये, जिसकी विधि इस प्रकार है-

प्रथम खमासमण दे इरियावही करना, फिर खमा० इच्छा० राइमुहपत्ति पडिलेहुं ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहनी फिर दो वंदन[1] देकर इच्छा० राइयं आलोउं इच्छं 'आलोएमि जो

१—जहां जहां 'दो वंदन' देने का लिखा हो वहां सर्वत्र "इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए अणु-जाणह मे मिउग्गहं निसीहि" इत्यादि संपूर्ण सूत्र दो बार बोल कर द्वादशावर्त वंदन करना चाहिये ।

मे राइओ०' इत्यादि पाठ बोल के 'सव्वस्स वि राइअ' इत्यादि कहना, बाद में गुरु पदस्थ हों तो दो वंदन देकर और सामान्य हों तो एक 'खमासमण' देकर 'इच्छकार' और 'अब्भुट्ठिओहं' के पाठसे खमाना। अंत में फिर दो वन्दन देकर 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पच्चक्खाण का आदेश दीजोजी' कह कर पच्चक्खाण लेना।

इसके बाद दो दो खमासमण, इच्छकार, और अब्भुट्ठि-ओहं' के पाठ से बाकी के सर्व मुनिराजों को वंदन करना।

११ जिनदर्शन विधि—

पोषध लेने के बाद जिनमंदिर दर्शनार्थ अवश्य जाना चाहिये। उत्तरासन कर, कटासन कंधे पर, चरवला बायी बगल में और मुहपत्ति दाहिने (जीमणे) हाथ में रख कर जीवजयणा पालते हुए अभिगम, निसीहि आदि विधिपालन-पूर्वक मंदिरमें प्रवेश करना और मंडप में जा दर्शन, स्तुति कर ईर्यावहीप्रतिक्रमणपूर्वक चैत्यवंदनविधि करना, बाद में 'निसीहि' कह कर मंदिर से पीछा पोषधशाला आना। मंदिर पोषधशाला से १०० कदम से अधिक दूर हो तो आकर इरि-यावही करना और 'गमणा गमणे' कहना, अन्यथा जरूरत नहीं।

१२ दूसरी बार काजा लेने की विधि—

अगर वर्षाऋतु[१] का समय हो तो पौषधिक को पोरिसी पढाने के बाद और दो पहर का देववंदन करने के पहिले पौषधशाला में दूसरी बार काजा (पूंजा) निकालना चाहिये।

इसकी विधि इतनी ही है कि एक जन इरियावही करके मकान में काजा निकाल कर यों ही बाहर पठ देवे, फिर इरियावही करने की जरूरत नहीं है।

१३ पच्चक्खाण पारने की विधि—

चौविहार उपवासवालों को तो पच्चक्खाण पारने की जरूरत नहीं है, परंतु जिनको तिविहार उपवास, आयंबिल, निवी अथवा एकाशन हो उनको पूर्वोक्त विधिसे दोपहर का देववंदन करने के बाद नीचे लिखी विधि से पच्चक्खाण पारना चाहिये।

प्रथम इरियावही करके खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करुं' 'इच्छं' कहके 'जगचिन्तामणि' का चैत्यवन्दन, नमुत्थुणं, दोनों जावन्ति, उवसग्गहर और संम्पूर्ण जयवीयराय कहना।

१—वर्षाऋतु श्रावणवदि १ से कार्तिक शुदि १५ तक गिनी जाती है, परंतु वर्तमान परम्परा मुजब आषाढ शुदि १५ से कार्त्तिक शुदि १४ तक दूसरी बार काजा लिया जाता है।

बाद में खमा० इच्छा० 'सज्झाय करुं' 'इच्छं' कह के एक नवकार गिन 'मन्नह जिणाण' सज्झाय करना। फिर खमा० इच्छा० 'मुहपत्ति पडिलेहुं ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहणा करनी और खमा० इच्छा० पच्चक्खाण पारुं ?' 'यथाशक्ति' फिर खमा० इच्छा 'पच्चक्खाण पार्युं' 'तहत्ति' कह के दाहिना (जीमना) हाथ मुठिवाल कर चरवला के ऊपर स्थापना और एक नवकार गिनके जो पच्चक्खाण किया हो उस का नाम ले कर नीचे का पाठ बोलना—

"उग्गए सूरे नमुक्कारसहिअं पोरिसी साढपोरिसी सूरे उग्गए पुरिमड्ढमुट्ठिसहिअं पच्चक्खाण कर्युं चउविहार आयंबिल, नीवि, एकाशन कर्युं तिविहार पच्चक्खाण फासिअं, पालिअं सोहिअं, तीरिअं, किट्टिअं, आराहिअं, जं च न आराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।"

उपर का पाठ बोलने के बाद एक नवकार गिनना।

पोरिसी, साढपोरिसी, पुरिमढ अथवा इनके साथ आयंबिल, निवी, या एकाशन का पच्चक्खाण किया हो वे ऊपर के पाठ से अपने पच्चक्खाण पारें, परंतु जिनके तिविहार उपवास हो वे नीचे के पाठ से अपना पच्चक्खाण पारें-

"सूरे उग्गए उपवास कर्यो तिविहार, -पोरिसी—साढ पोरिसी पुरिमड्ढ मुट्ठिसहिअं पच्चक्खाण कर्युं पाणाहार, पच्च-

क्खाण फासिअं, पालिअं, सोहिअं, तीरिअं, किट्टिअं, आराहिअं जं च न आराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।"

प्रत्येक पच्चक्खाण पारनेवालों को अंत में एक एक नवकार गिनना चाहिये ।

१४ पानी पीने और भोजन करने की विधि–

पौषधिक को तिविहार उपवास हो और पानी पीना हो तब ऊपर की विधि से पच्चक्खाण पार के आसन पर बैठ याचित अचित्त जल पीना चाहिये और जिस बर्तन से जल पिया हो उसे शुद्धवस्त्र से पोंछ लेना चाहिये और जल के बर्तन को ढंक कर रखना चाहिये ।

जिसके आंबिल, निंवी या एकाशन हो और अपने घर भोजन करने जाना हो उसको ईर्यासमिति पालते हुए जाना और घरमें प्रवेश करके "जयणा मंगल" ये शब्द बोल कर बैठने की जगह कटासन बीछा के बैठना, स्थापना स्थाप कर के इरियावही करना और खमासमण देकर 'गमणा गमणे' कहना चाहिये । फिर पाटला, थाली आदि भाजन देख साफ कर स्थिर आसन बैठ भोजन करे । उस समय मुनिराज का योग हो तो उनको दान देकर भोजन करे । आहार उतना ही ले जितना सुखपूर्वक खाया जा सके, क्योंकि भोजन उच्छिष्ट

(जूठा) छोडने पर पौषधिक को प्रायश्चित्त लेना पडता है। भोजन करते समय बोलना नहीं चाहिये, कोई चीज लेनी हो तो इशारे से मांगे अथवा पानी से कुल्ला करके बोले।

जिसको घर न जाना हो वह पौषधशाला में ही पुत्रादि द्वारा लाया आहार करें[1]। घर जाकर स्थापना स्थापने, इरियावही करने आदि की जो विधि कही है वह पोषधशाला में भोजन करने वालों को करने की जरूरत नहीं। बाकी सब बातें दोनों जगह समान भावसे करनी चाहिये।

भोजन के बाद मुख शुद्ध करके 'दिवसचरिमं तिविहार' का पच्चक्खाण कर लेना चाहिये और जहां बैठ कर आहार किया हो वहां काजा निकाल लेना चाहिये।

भोजन के लिये घर जाने वालों को भोजन करके तुरंत पोषधशाला आ जाना चाहिये और सबको आहार करने के बाद इरियावाही कर 'जगचिन्तामणि' से लेकर 'जयवीयराय' पर्यन्त चैत्यवन्दन करना चाहिये।

१—आज कल यही प्रवृत्ति अधिक चल रही है इस लिये विधि में लिखना पडा है, वास्तव में पौषधिक को दूसरे का लायो हुआ आहार पानी ग्रहण करना ठीक नहीं, स्वयं लाना चाहिये अथवा अन्य पौषधिक से मंगवाना चाहिये, क्योंकि दूसरे अव्रती का लाया हुआ आहार पानी ग्रहण करना पोषध का दोष माना गया है।

१५ मल-मूत्र की शंका दूर करने की रीति-

औदारिक शरीर मल मूत्र का स्थान है इस कारण पोषहवालों को भी इन शरीर शंकाओं को दूर करना पडता है, परंतु पोषध में यह काम जयणापूर्वक करना चाहिये, इस लिये पौषधिक को अचित्त (गर्म किया हुआ) जल, छोटी कुंडिया और पोंछनी आदि चीजें पहले से ही याच कर रख लेना चाहिये।

जब शंका निवृत्ति के लिये जाना हो, पहले पहनने का वस्त्र बदल देना चाहिये, मुहपत्ति कमर में-कंदोरे में भरा देनी चाहिये और चरवले को बायी (डाबी) बगल में रख, कंबलकाल में कंबल ओढ़ कर, अन्यथा बगैर कंबल के एकान्त में जहां बैठने की जगह हो कुंडिया को पोंछनी से पोंछ कर उसमें लघुशंका (पैशाब) करे और बाहर अथवा जहां खुली जगह हो उसको परठ (फेंक) दे। । परठने की जगह जाकर पहले कुंडि को जमीन पर रख मन में "अणुजाणह जस्सुग्गहो" ये शब्द बोले, बाद में परठे और परठने के बाद फिर कुंडी को नीचे रख कर मन में तीन बार 'वोसिरे' यह शब्द बोले। बादमें कुंडि को स्थान पर रख दे।

बाडा अथवा खुला बडा मैदान हो और मनुष्यों की दृष्टि अधिक न पडती हो तो विना कुंडि के भी लघुशंका निर्जीव भूमि में की जा सकती है।

शंका निवृत्ति करने के बाद हाथ धो डालना चाहिये।

बडी शंका (टट्टी) भी इसी विधिसे जाना चाहिये। यहां कुंडि के स्थान जल का लोटा लेकर जहां टट्टी जाने की जगह हो, जाना और बैठने के पहले "अणुजाणह जस्सुग्गहो" तथा उठने के बाद तीन बार 'वोसिरे' शब्द पूर्ववत् बोलना चाहिये। शंकानिवृत्ति कर स्थान पर आ के हाथ पग शुद्ध करना और पहरने का वस्त्र बदलना चाहिये। बादमें स्थापना-चार्य के संमुख इरियावही कर 'गमणा गमणे' कहना।

१६ चौथे पहर की प्रतिलेखनाविधि–

पौषधिक उक्त जरूरी कामों से निवृत्त होने के बाद स्वाध्याय–ध्यान या धर्मचर्चा में समय बीतावे और दिन के तीन पहर वीतने के बाद दूसरी बार पडिलेहणा करे जिसकी विधि नीचे मुजब है।

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' फिर खमा० इच्छा० 'इरियावहिअं पडिक्कमामि' 'इच्छं' कह कर इरिया-वही करना, बाद में खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करूं?' 'इच्छं' फिर खमा० इच्छा० 'पोषणशाला प्रमार्जुं' 'इच्छं' कह के उप-वासवाला मुहपत्ति, कटासन और चरवला की- पडिलेहण करे और जिसने आयंबिल, एकाशन आदि किया हो वह उपर्युक्त

तीन चीजों के उपरान्त कंदोरे और धौती की भी इसी समय पडिलेहण करे।

बादमें पांच उपकरणों की पडिलेहणा करनेवाले इरिया-वही करके और तीन उपकरण पडिलेहने वाले विना इरिया-वही किये ही 'खमासमण' देकर 'इच्छकारी भगवन् ! पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहावो जी' इस प्रकार आदेश मांग के मुनिराज का योग हो और स्थापनाचार्य की पडिलेहणा उन्होंने कर दी हो तो बड़ेरे श्रावक के उत्तरासन की पडिलेहणा करे, अगर स्थापनाचार्य की पडिलेहणा न हुई हो तो होने तक ठहर जाय, बादमें उत्तरासन पडिलेहे, अगर गुरुमहराज का योग न हो और स्थापनाचार्य के आगे पोसह किया हो तो यहां स्वयं स्थापनाचार्य की पडिलेहण करे, फिर खमा० इच्छा० 'उपधिमुहपत्ति पडिलेहुं' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहण करे, बाद में खमा० इच्छा० 'सज्झाय करुं' 'इच्छं' कह एक नवकार गिन उकडु बैठ कर 'मन्नह जिणाण' सज्झाय कहे। बाद में खाने वाले दो वंदन देकर पानी न पीना हो तो पाणाहार का और पानी पीना हो तो मुट्ठिसहियं का पच्चक्खाण करे। तिविहार उपवासवालों को वंदन देने की जरूरत नहीं, वे खमासमण दे के 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पच्चक्खाण का आदेश दीजो जी' कह कर पाणाहार का पच्चक्खाण करे। चउविहार उपवास-वालों को यहां पच्चक्खाण करने की जरूरत नहीं है। जिसने प्रातःकाल तिविहार उपवास का पच्चक्खाण किया हो परंतु

पानी न पिया हो और पीना भी न हो तो यहां पर चउविहार उपवास का पच्चक्खाण कर ले। फिर खमा० इच्छा० 'उपधि संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'उपधि पडिलेहुं' 'इच्छं' कह कर बाकी सर्व वस्त्रों की पडिलेहण करे। पडिलेहण करके सब अपने अपने वस्त्रादि उपकरण उठा कर खडे हो जायें और उनमें से एक जन इरियावही करके काजा ले शुद्ध कर दूसरी बार इरियावही कर विधिपूर्वक परठ देवे और अन्त में सर्व अविधि आशातना का मिच्छामि दुक्कडं दें।

१७ मुट्ठिसहिअ पच्चक्खाण पारने की विधि-

पडिलेहण में जिसने मुट्ठिसहिअं का पच्चक्खाण किया हो और पानी पीना हो वह पडिलेहण करके पहले मुट्ठिसहिअं का पच्चक्खाण पारे।

मुट्ठिसहिअं का पच्चक्खाण पारने में विशेष विधि नहीं है, कटासनपर बैठ दाहिने (जीमने) हाथ की मुट्ठि वाल कर चरवले पर रखे और एक नवकार गिन कर "मुट्ठिसहिअं पच्चक्खाण फासिअं, पालिअं, सोहिअं, तीरिअं, किट्टिअं, आराहियं, जं च न आराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं" यह पाठ बोल पच्चक्खाण पारे और यह भी न बने अथवा याद न हो तो मुट्ठिवाल के तीन नवकार गिनने से भी चल सकता है। पीछे देववन्दन के पहले पहले पानी पी लेवे, क्यों कि देववन्दन करने के बाद

पानी नहीं पिया जाता। बाद में सब मिलकर तीसरी बार का देववन्दन करे।

१८ दैवसिक प्रतिक्रमण—

प्रतिक्रमण पोसहवालों और दूसरों के लिये एक ही है, परन्तु उसमें जहां जो फरक आता है वह यहां बताया जाता है।

पौषधिक श्रावक को प्रतिक्रमण के समय सामायिक लेने की, पच्चक्खाणमुहपत्ति पडिलेहणे की और पच्चक्खाण लेने के लिये दो वन्दन देने की जरूरत नहीं है, क्यों कि उनके सामायिक ली हुई है और पच्चक्खाण की क्रिया पडिलेहण के समय की हुई है। हां, पाणाहार का पच्चक्खाण पहले न किया हो तो उस समय कर ले। बाकी पौषधिक को इरियावही करके प्रतिक्रमण का चैत्यवन्दन शुरू करना चाहिये और दैवसिक या पाक्षिक जो प्रतिक्रमण हो विधिमुजब करना चाहिये। उसमें सात लाख और अठारह पापस्थान की जगह पौषधिक "इच्छाकारेण संदिसह भगवन् गमणागमणे आलोउं?" 'इच्छं' कह कर "इरिया समिति, भाषासमिति०" इत्यादि 'गमणागमणे' का पाठ बोले और 'करेमि भन्ते' के पाठ में 'जाव नियमं' के स्थान में 'जाव पोसहं' शब्द बोले।

१९ पोषध पारने की विधि—

प्रतिक्रमण समाप्त होने के बाद पोसह पारने के पहले दंडासन, कुण्डिया, पानी विगैरह चीजें जिसके पोषध न हो उस गृहस्थ को सुपुर्द कर दे और फिर इस विधि से पोसह पारे।

पहले खमासमणपूर्वक 'इरियावही करे और चउक्कसाय से ले जयवीयरायपर्यन्त चैत्यवन्दनसूत्र बोले। फिर खमा० इच्छा० 'मुहपत्ति पडिलेहुं?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहे, बाद में खमा० इच्छा० 'पोसह पारुं ?, यथाशक्ति, खमा० इच्छा० 'पोसह पार्यो ?, तहत्ति कहके एक नवकार गिन दाहिना (जीमना) हाथ चरवला के ऊपर स्थापन कर नीचे लिखा हुआ 'सागरचन्दो' का पाठ कहे—

सागरचन्दो—

"सागरचन्दो कामो, चन्दवडिंसो सुदंसणो धन्नो।
जेसिं पोसहपडिमा, अखंडिआ जीविअंते वि ॥१॥

धन्ना सलाहणिज्जा, सुलसा आणंदकामदेवा य।
जास पसंसइ भयवं, दढव्वयत्तं महावीरो ॥२॥"

पोसह विधिए लीधो, विधिए पार्यो, विधि करतां जे कंइ

अविधि हुओ होय ते सविहुं मन वचन कायाए करी मिच्छा-मि दुक्कडं ।

फिर खमा० इच्छा० मुहपत्ति पडिलेहुं ? 'इच्छं' कह कर मुहपत्ति पडिलेहण करे और खमा० इच्छा० 'सामायिक पारुं?' यथाशक्ति, खमा० इच्छा० 'सामायिक पार्युं' 'तहत्ति' कहके चरवले पर हाथ स्थापन कर नवकार गिन नीचे लिखा सामायिक पारने का पाठ बोले—

"सामाइअवयजुत्तो, जाव मणे होइ नियमसंजुत्तो ।
छिन्नइ असुहं कम्मं, सामाइअजत्तिआवारा ॥१॥
सामाइयंमि उ कए, समणो इव सावओ हवइ जम्हा ।
एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा ॥२॥"

सामायिक विधे लीधुं, विधे पार्युं, विधि करतां जे कंइ अविधि हुओ होय ते सविहुं मने वचने कायाए करी मिच्छा-मि दुक्कडं ।"

रात्रिपोषध–

१ पौषधिक प्रकार

रात्रिपोषधवाले दो प्रकार के होते हैं-एक तो आठ पहर का पोषध लेने वाले और दूसरे शामको रत्रिपोषध लेने वाले। आठ पहर का पोषध लेने वालों को फिर रात्रिपोषध उच्चरने की जरूरत नहीं है।

शाम को रात्रिपोषध लेने वाले भी दो तरह के होते हैं– कोई प्रातः चार पहर का पोषध लेकर शामको रात्रिपोषध उच्चरते हैं और कोई केवल शाम को ही रात्रिपोषध लेते हैं। इनमें जो दिनके पौषधिक शामको रात्रिपोषध उच्चरते हैं उन को शाम की पडिलेहण के समय इरियावही से लेकर 'बहु-वेल करशुं' तक की तमाम विधि दिवसपोषध की विधि मुजब ही करनी चाहिये, सिर्फ 'बेसणे संदिसाहुं' 'बेसणे ठाउं' ये दो आदेश लेने के बाद एक खमासमण दे के 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सज्झायमां छुं' इस प्रकार का एक ही आदेश लेना और एक नवकार गिनना चाहिये, तीन नहीं। परन्तु जिनके दिवसपोषध नहीं है वे रात्रिपोषध लेते समय भी 'बहुवेल करशुं' पर्यंत की तमाम विधि दिवसप्रोषधविधि के अनुसार करें।

शामकी पडिलेहण और देववन्दन सब पोषधिक एक साथ समान-रीति से करें।

२ स्थंडिलपडिलेहणा

सभी प्रकार के रात्रिपौषधिकों को जल, पथारी के लिए संथारिया—उत्तरपट्टा, कानों में डालने के लिये कुण्डल और दंडासन आदि जरूरी उपकरण पास में रख लेना चाहिये। इतना ही नहीं किंतु रात्रि में मात्रा परठने और स्थंडिल जाने योग्य नजदीक, मध्यम और दूर ऐसे तीन स्थानो को देख रखना चाहिये। आधुनिक प्रवृत्ति मुजब संथारा करने की जगह, पोषधशाला के द्वार के आस पास की भूमि और पोषधशाला से १०० हाथ तक के प्रदेश को अनुक्रम से नजदीक मध्यम और दूर का स्थान माना जाता है। इन स्थानों की प्रतिलेखना आज कल नीचे मुजब २४ मण्डलों द्वारा की जाती है।

प्रथम इरियावही करके खमा० इच्छा० 'स्थंडिल पडिलेहुं?' 'इच्छं' कह कर चरवला दाहिने हाथमें ले उपर्युक्त स्थानों की तरफ फिराता हुआ नीचे का पाठ बोले—

(१)

१ आगाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अणहियासे।
२ आगाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे।

३ आगाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
४ आगाढे मज्झे पासवणे अणहियासे ।
५ आगाढे दूरे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
६ आगाढे दूरे पासवणे अणहियासे ।

(२)

१ आगाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अहियासे ।
२ आगाढे आसन्ने पासवणे अहियासे ।
३ आगाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अहियासे ।
४ आगाढे मज्झे पासवणे अहियासे ।
५ आगाढे दूरे उच्चारे पासवणे अहियासे ।
६ आगाढे दूरे पासवणे अहियासे ।

(३)

१ अणागाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
२ अणागाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे ।
३ अणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
४ अणागाढे मज्झे पासवणे अणहियासे ।
५ अणागाढे दूरे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
६ अणागाढे दूरे पासवणे अणहियासे ।

(४)

१ अणागाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अहियासे।

२ अणागाढे आसन्ने पासवणे अहियासे।

३ अणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अहियासे।

४ अणागाढे मज्झे पासवणे अहियासे।

५ अणागाढे दूरे उच्चारे पासवणे अहियासे।

६ अणागाढे दूरे पासवणे अहियासे।

ऊपर जो ६–६ मण्डलों के ४ पाठ दिये गये हैं उन प्रत्येक में पहला दूसरा तीसरा चौथा और पांचवां छठा ये दो दो वाक्य अनुक्रम से निकट, मध्यम और दूर के स्थण्डिलों की प्रतिलेखना के प्रतिपादक हैं इस वास्ते प्रत्येक षट्क में इन दो दो वाक्यों को बोलते समय नजदीक मध्यम और दूर के स्थंडिल की प्रतिलेखना की भावना से उस तरफ चरवला फिराना चाहिये। आज कल की प्रवृत्ति में पहले छः मण्डल करते समय चरवला पथारी के स्थान की तरफ फिराते हैं, दूसरे छः मण्डलों में पोषधशाला के भीतर द्वार के पास, तीसरे छः में द्वार के बाहर और चौथे छः मण्डल करते समय पोषधशाला के बाहर सौ हाथ के अन्दर चरवला फिरा कर प्रतिलेखना की भावना की जाती है।

३ दैवसिक प्रतिक्रमण

दैवसिकप्रतिक्रमण सभी पौषधिकों के लिये समान है इस वास्ते 'दिवसपोषध' के अधिकार में कहे मुजब ही रात्रि-पोषधवालों को भी दैवसिकप्रतिक्रमण कर लेना चाहिये। हां, इतना जरूर है कि रात्रिपोषधवालों को प्रतिक्रमण के पूर्ण होने पर इरियावही या चउक्कसायादिविधि करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि यह विधि उनको संथारापोरिसी पढाते समय करने की है।

४ संथारा पोरिसी पढाने की विधि—

लगभग एक पहर रात तक का समय पौषधिक को सज्झाय-ध्यान या धर्मचर्चा में बीताना चाहिये, और बाद में पूर्वप्रतिलेखित स्थान में दण्डासन या चरवले से प्रमार्जन कर संथारा करे। पूर्वकाल में संथारा दर्भ का किया जाता था परन्तु आज कल ऊनी संथारिया या कम्बल बीछा कर उस पर एक सूती कपडा (उत्तरपट्टा) बीछा लेते हैं।

संथारा बीछा कर नीचे लिखी विधि से संथारा पोरिसी पढाई जाती है।

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' फिर खमासमण-पूर्वक इरियावही करे। बाद में खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना

पोरिसी राइयसंथारए ठामि' 'इच्छं' कह चउक्कसाय का चैत्य-वन्दन और नमुत्थुणं से जयवीयरायपर्यन्त विधि करे, फिर खमा० इच्छा० 'संथारापोरिसी विधि भणाववा मुहपत्ति पडिलेहुं ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहण करे, पीछे "निसीहि निसीहि निसीहि नमो खमासमणाणं गोयमाईणं महामुणीणं" यह पाठ, एक नवकार और करेमि भन्ते बोले, इस प्रकार इस पाठ को एक नवकार, तथा करेमिभन्ते के साथ तीन वार बोलकर फिर नीचे का पोरिसी पाठ पढ़े–

"अणुजाणह जिट्ठज्जा–अणुजाणह परमगुरू,
गुरुगुणरयणेहि मण्डियसरीरा ।
बहुपडिपुन्ना पोरिसी, राइअसंथारए ठामि ॥१॥
अणुजाणह संथारं, बाहुवहाणेण, वामपासेणं ।
कुक्कुडिपायपसारण, अतरंत पमज्जए भूमिं ॥२॥
संकोइअसंडासा, उव्वट्टंते य कायपडिलेहा ।
दव्वाइउवओगं, ऊसासनिरुम्भणालोए ॥३॥
जइ मे हुज्ज पमाओ, इमस्स देहस्सिमाइ रयणीए ।
आहारमुवहिदेहं, सव्वं तिविहेण वोसिरिअं ॥४॥
चत्तारि मंगलं–अरिहन्ता मङ्गलं, सिद्धा मङ्गलं,
साहू मङ्गलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मङ्गलम् ॥५॥
चत्तारि लोगुत्तमा–अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ॥६॥

चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहन्ते सरणं पवज्जामि,
सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि,
केवलिपन्नत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि ॥७॥
पाणाइवायमलिअं, चोरिक्कं मेहुणं दविणमुच्छं ।
कोहं, माणं, मायं, लोभं पिज्जं तहा दोसं ॥८॥
कलहं अब्भक्खाणं, पेसुन्नं रइ–अरइसमाउत्तं ।
परपरिवायं माया–मोसं मिच्छत्तसल्लं च ॥९॥
वोसिरिसु इमाइं, मुक्खमग्गसंसग्गविग्घभूआइं ।
दुग्गइनिबन्धणाइं, अट्ठारस पावठाणाइं ॥१०॥
एगोहं नत्थि मे कोइ, नाहमन्नस्स कस्सइ ।
एवं अदीणमणसो अप्पाणमणुसासइ ॥११॥
एगो मे सासओ अप्पा, नाणदंसणसंजुओ ।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संयोगलक्खणा ॥१२॥
संजोगमूला जीवेण, पत्ता दुक्खपरंपरा ।
तम्हा संयोगसम्बन्धं, सव्वं तिविहेण वोसिरिअं ॥१३॥
अरिहन्तो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो !
जिणपन्नत्तं तत्तं, इय सम्मत्तं मए गहिअं ॥१४॥

(यह १४वीं गाथा तीन बार बोल के सब ७ नवकार गिने, फिर आगे की गाथायें बोलें)।

खमिअ खमाविअ मइ खमिअ, सव्वह जीवनिकाय ।
सिद्धह साख आलोयणह, मुज्झह न वइर–भाव ॥१५॥

सव्वे जीवा कम्मवस, चउदहराज भमन्त ।
ते मे सव्व खमाविआ, मुज्झवि तेह खमन्त ॥१६॥

जं जं मणेण बद्धं, जं जं वायाइ भासिअं पावं ।
जं जं काएण कयं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥१७॥"

समाप्ति में अविधि आशातना का मिच्छामि दुक्कडं देना । मुहपत्ति कन्दोरे में भरा, कटासन तथा चरवला पथारी के पास एक तरफ रख पहिरने का वस्त्र बदल कर सो जाय। सोने के बाद बातचीत या किसी भी प्रकार की गड-बड न करे । अगर नींद न आती हो तो मन में नवकारमन्त्र का ध्यान करे ।

शरीर–बाधा दूर करने के लिये अथवा अन्य किसी भी कारण से रात को उठना पडे तो दण्डासन से जमीन प्रमार्जन करते हुए चलना चाहिये ।

५ निद्रात्याग और प्राभातिक प्रतिक्रमण–

जितना भी हो सके पौषधिक को प्रमाद का सेवन कम करना चाहिये । कम से कम दो मुहूर्त (कच्ची ४ घडी) पिछली रात रहते उठ जाना चाहिये । उठते ही नवकार स्मरण कर धार्मिक भावका पोषक शुभचिन्तन तथा ध्यान करके रात्रिक-प्रतिक्रमण करे ।

पौषधिक के रात्रिकप्रतिक्रमण में जो फेर फार है वह "पोषध लेने के बाद राइयप्रतिक्रमण" नामक 'दिवसपोषध' के छठे प्रकरण में बता दिया है।

६ प्राभातिक प्रतिलेखना–

रात्रिपौषधिकों को प्राभातिक प्रतिक्रमण करके सूर्योदय होने के लगभग समय में प्रतिलेखना करनी चाहिये।

इस प्राभातिक प्रतिलेखना की विधि अक्षरशः "प्रतिलेखना विधि– नामक 'दिवसपोषध' के ४ थे प्रकरण में लिखे मुजब है। भेदमात्र इतना ही है कि वहां पोषध उच्चरने के अनन्तर होने से 'इरियावही' किये विना ही पडिलेहण शुरू की जाती है और यहां खमासमणपूर्वक इरियावही करने के बाद खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करुं?' इत्यादि आदेश मांगे जाते हैं, बाकी तमाम विधि एक ही है।

७ देववन्दन तथा सज्झाय–

प्रतिलेखना के बाद रात्रिपौषधिक को "देववन्दन विधि" नामक ७ वें प्रकरण में लिखित विधि मुजब देववन्दन और "सज्झायविधि" नामक ८ वें प्रकरण में लिखित विधि मुजब सज्झाय करना चाहिये। बाद में दण्डासन, कुण्डी, पानी, कुण्डल, कम्बल, आदि जो चीजें याच कर ली हों वे सब पोषधरहित–गृहस्थ को सोंप दे। बाद में पोषध पारे।

८ रात्रिपोषध पारने की विधि-

रात्रिपोषध और दिवसपोषध के पारने की विधि में कुछ भी अन्तर नहीं है। भेदमात्र इतना ही है कि दिवसपोषध पारते समय इरियावही करके 'चउक्कसाय' से ले 'जयवीयराय" पर्यन्त चैत्यवन्दन कर बाद में खमासमणपूर्वक पोषध पारने की मुहपत्ति पडिलेहते हैं। इसके आगे दोनों प्रकार के पोषध पारने की विधि "पोषध पारने की विधि" नामक १९ वें प्रकरण में लिखे मुजब है।

प्रकीर्णक

१ पोषध व्रत के पांच अतिचार—

(१) शय्या-संथारे की भूमि की पडिलेहणा न करे, अथवा अविधि से पडिलेहण करे।

(२) शय्या-संथारे की भूमि की प्रमार्जना न करे, अथवा अविधि से प्रमार्जन करे।

(३) स्थण्डिलभूमि (लघुनीति-बडी नीति जाने की जगह) की प्रतिलेखना न करे, अथवा अविधि से प्रतिलेखना करे।

(४) स्थंडिलभूमि की प्रमार्जना न करे, अथवा अविधि से करे।

(५) पोषध विधिपूर्वक पूरा न करे, पारणा की चिन्ता करे, घर के कामों की चिन्ता करे, पोषध के १८ दोष न टाले।

सर्व पौषधिकों को पोषधव्रत के उपर्युक्त पांच अतिचार टालने का प्रयत्न करना चाहिये।

२ पोषधव्रत के १८ दोष—

(१) अव्रती गृहस्थ का लाया हुआ आहार पानी ग्रहण करे।

(२) सरस आहार के लोभ से पोषध करे।

(३) पोषध के निमित्त पहले सरस आहार करे।

(४) पोषध में अथवा पोषध के लिये पहले शरीर विभूषा करे।

(५) पोषध के निमित्त वस्त्र धुलावे।

(६) पोषध के निमित्त आभूषण घडावे अथवा पहिरे।

(७) पोषध के निमित्त वस्त्र रंगावे।

(८) शरीर पर से मेल उतारे।

(९) अकालशयन करे–निद्रा करे।

(१०) स्त्रीकथा करे।

(११) आहारकथा करे।

(१२) राजकथा करे।

(१३) देशकथा करे।
(१४) प्रतिलेखन-प्रमार्जन किये विना मल मूत्र परठे।
(१५) किसी की निन्दा करे।
(१६) मातापिता पुत्र भाई आदि से सांसारिक बातें करे।
(१७) चौरसम्बन्धी वार्तालाप करे।
(१८) स्त्रियों के अङ्गोपाङ्ग सरागदृष्टि से देखे।

ऊपर लिखी हुई १८ बातें पोषध में करे तो पौषधिक को दोष लगता है इसलिये इनका त्याग करना चाहिये।

३ सामायिक के ३२ दोष—

(मन के १०)

(१) विधि समझे बगैर सामायिक करे।
(२) यशःकीर्तिकी आशा से सामायिक करे।
(३) धन की इच्छा से सामायिक करे।
(४) सामायिक करने का गर्व करे।
(५) लोकनिन्दा के भय से सामायिक करे।
(६) सामायिक करके पौद्गलिक सुखप्राप्ति का निदान करे।
(७) सामायिक के फल में संशय करे।
(८) कषाययुक्त चित्त से सामायिक करे।
(९) गुरु का अथवा स्थापनाचार्य का विनय न करे।
(१०) भक्तिभाव से सामायिक न करे।

(वचन के १०)

(१) कुवचन बोले ।
(२) उपयोगशून्य अविचारित भाषण करे ।
(३) किसी के ऊपर असत्य कलङ्क लगावे ।
(४) शास्त्रविरुद्ध बोले—उत्सूत्र भाषण करे ।
(५) सूत्रपाठ पूरा न बोले ।
(६) किसी के साथ कलह करे ।
(७) राजकथादि चार विकथा करे ।
(८) किसी की ठट्ठा मश्करी करे ।
(९) सूत्रपाठ अशुद्ध बोले ।
(१०) सूत्रपाठ का उच्चारण जल्दी जल्दी करे ।

(काया के १२)

(१) पग ऊपर पग चढा कर बैठे या ऊंचे आसन बैठे ।
(२) चपलता से बार बार आसन बदले ।
(३) हिरन की तरह चपलदृष्टि से चारों ओर देखा करे ।
(४) सावद्य कार्य करने का संकेत करे ।
(५) स्तम्भ आदि का अवष्टंभ (ओठा) लेकर बैठे ।
(६) विना कारण हाथ पग पसारे और संकोचे ।
(७) अङ्गडाई ले (आलस मरडे)
(८) अंगुली आदि को मरोड कर काटके पाडे ।

(९) खाज खिने।
(१०) हाथ पग टेक कर बैठे।
(११) निद्रा ले।
(१२) ठण्डी या मच्छरों के भय से सारा शरीर ढक कर बैठे।

ऊपर लिखे १० मनसम्बन्धी, १० वचनसम्बन्धी और १२ कायसम्बन्धी सामायिक के दोष हैं, इनको सामायिक करने वालों को अवश्य वर्जने का प्रयत्न करना चाहिये।

४ मुहपत्ति के ५० बोल-

(१) सूत्र अर्थ तत्त्व करी सद्दहुं (दृष्टिपडिलेहणा)
(३) समकितमोहनी, मिश्रमोहनी, मिथ्यात्वमोहनी परिहरुं।
(३) कामराग, स्नेहराग, दृष्टिराग परिहरुं।
(३) सुदेव, सुगुरु, सुधर्म आदरुं।
(३) कुदेव, कुगुरु, कुधर्म परिहरुं।
(३) ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदरुं।
(३) ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना, चरित्रविराधना परिहरुं।
(३) मनगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति आदरुं।
(३) मनदण्ड, वचनदण्ड, कायदण्ड परिहरुं।
(३) हास्य, रति, अरति परिहरुं (बायी भुजा पर मुहपत्ति फिरानी)
(३) भय, शोक, दुगंच्छा परिहरुं (दाहिनी भुजा पर)

(३) कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या परिहरुं (मस्तके)
(३) रसगारव, ऋद्धिगारव, सातागारव परिहरुं (मुखे)
(३) मायाशल्य, नियाणशल्य, मिथ्यात्वशल्य परिहरुं (हृदये)
(२) क्रोध, मान परिहरुं (बायी भुजा के पीछे)
(२) माया, लोभ, परिहरुं (दाहिनी भुजा के पीछे)
(३) पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकायनी जयणा करुं (बाये पग पर)
(३) वाउकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकायनी रक्षा करुं (दाहिने पग पर)

इन बोलों को बोलने के साथ किस प्रकार पडिलेहणा करनी इसका यथार्थ अनुभव इसके जानकार से हो सकता है तो भी थोडा सा खुलासा यहां देना उचित समझा जाता है।

आरम्भ के ७ बोल मुहपत्ति को खोल किनारी वाले दो कोनों से पकड कर प्रदक्षिणारूप में तीन बार फिराते हुए बोलना चाहिये। आगे के 'सुदेव' से 'कायदण्ड परिहरुं' पर्यन्त के १८ बोल मुहपति को दाहिने हाथ की अंगुलियोंके अन्तरों में पकड कर बाये हाथ की हथेली में फिराते हुए बोले जाते हैं। 'आदरुं' वाले बोल बोलते समय मुहपत्ति को हथेली में ऊपर की तरफ चढाया जाता है, और 'परिहरुं' वाले बोलते समय अंगुलियों की तरफ नीचे उतारा जाता है। यहां तक के २५ बोल मुहपत्तिपडिलेहणासम्बन्धी हैं। 'हास्य' से

'त्रसकायनी रक्षा करुं' तक के २५ बोल शरीरपडिलेहणा के हैं, इसलिये इनको बोलते समय इनके आगे ( ) ऐसे कोष्ठक में लिखित अङ्ग-विभाग में मुहपत्ति को फिरा कर उसकी पडिलेहणा की जाती है।

पडिलेहण में बोलों का उपयोग

ऊपर जो मुहपत्तिपडिलेहणा के बोल कहे हैं वे पुरुषों की अपेक्षासे समझना चाहिये। स्त्रियां अंगपडिलेहणा के बोलों में से मस्तक के ३, हृदय के ३ और दो भुजाओं के ४ इन १० बोलों को छोड कर शेष ४० बोलती हैं।

धोती, उत्तरासन, कम्बल आदि वस्त्रों की पडिलेहणा करते समय भी मुहपत्तिके २५ बोल कहने चाहिये। कटासन चरवला और सूती कन्दोरा इन्हीं २५ बोलों में से शुरू के क्रमशः पन्द्रह, दश और दश बोलों से पडिलेहने चाहिये।

५ पोषध में जरूरी उपकरण-

दिवस-पोषध करने वाले को १ मुहपत्ति, १ चरवला, १ कटासन, १ धोती, १ सूती कन्दोरा, १ उत्तरासन, १ लघुनीति तथा बडीनीति जाते समय पहिरने योग्य धोती और १ नाक साफ करने के लिये वस्त्र का टुकडा, इतने उपकरण पास में रख कर पोषध लेना चाहिये।

रात्रिपोषध करने वाले को उक्त ८ उपकरणों के उपरांत नीचे लिखे हुए उपकरण भी लेने चाहिये–१ ऊनी कम्बल, (ठण्डी की मौसम हो तो २ भी रख सकते हैं) १ उत्तरपट्टक सूती, १ कुण्डल जोडी, १ दण्डासन, १ चूनाडाला हुआ पानी, १ लोटा। इससे भी ज्यादा किसी उपकरण की जरूरत हो तो रख लेना चाहिये।

६ कम्बल–काल

आषाढ शुदि १५ से कार्तिक शुदि १४ तक ६ घडी, कार्तिक शुदि १५ से फागुन शुदि १४ तक ४ घडी और फागुन शुदि १५ से आषाढ शुदि १४ तक २ घडी का कम्बलकाल है, इसलिये प्रातः इतनी कच्ची घडी दिन चढने के पहले और सायं इतनी घडी दिन शेष रहे उसके बाद पौषधिक को कम्बल ओढे बगैर खुले आकाश में न जाना चाहिये।

७ अचित्त–जल काल

आषाढ सुदि १५ से कार्तिक शुदि १४ तक ३ पहर, कार्तिक शुदि १५ से फागुन शुदि १४ तक ४ पहर और फागुन शुदि १५ से आषाढ शुदि १४ तक ५ पहर पर्यन्त अग्नि से 'अचित्त' किया हुआ जल 'अचित्त' रहता है। उक्त काल के बाद वह फिर पूर्ववत् 'सचित्त' हो जाता है, इस वास्ते समय पूरा होने के पहले ही उसमें थोडा सा कली का चूना–जिससे

पानी का रंग छाछ की आछ जैसा हो जाय–डाल देना चाहिये ताकि वह २४ पहर तक 'अचित्त' ही रहे।

८ जानने योग्य बातें—

(१) चार अथवा आठ पहर का पोषध करने वाले को उस दिन कम से कम एकाशन का तप तो अवश्य करना चाहिये।

(२) गुरु के योग में पोषध गुरुमुख से ही लेना चाहिये। यदि देर होने के भय से स्वयं उच्चर ले तो भी बाद में राइमुहपत्तिपडिलेहणा के पूर्व फिर गुरुमुख से उच्चरना चाहिये।

(३) पडिलेहणा उकडु पगों पर बैठ कर करनी चाहिये, उस समय बोलना न चाहिये, उत्तरासन रखना न चाहिये, जीवजन्तु की जयणा करनी चाहिये।

(४) मुहपत्ति आदि पांच उपकरणों की पडिलेहणा स्थापनाचार्य की पडिलेहणा के पहले भी हो सकती है, परन्तु "इच्छकारी भगवन् पसायकरी पडिलेहणा पडिलेहावो जी" इसके आगे की पडिलेहणाविधि स्थापनाचार्य की प्रतिलेखना होने के बाद ही की जा सकती है।

(५) पोषध में मध्याह्न का देववन्दन किये बगैर पच्चक्खान नहीं पारते।

(६) पौषधिक और अपौषधिक सभी को एकाशन निवी या आयंबिल करने के बाद 'दिवसचरिमं तिविहार' का पच्चक्खाण करना चाहिये।

(७) दूसरी बार की पडिलेहणा में उपवास आदि तपवालों को कन्दोरा और पहरने की धोती सबके पीछे पडिलेहनी चाहिये।

(८) मुख्यवृत्त्या पौषधिक की रात्रि में स्थण्डिल जाने का निषेध है, परंतु कारणविशेष से जाना पडे तो पोषधशाला से सौ कदम के अन्दर जाना चाहिये।

(९) कंबलकाल में कंबल ओढे बिना खुली जगह में जाने बैठने, सोने का पौषधिक को निषेध है।

(१०) पौषधिक को मुहपत्ति और चरवला हर समय अपने पास रखना चाहिये और सौ हाथ के उपरान्त कहीं भी जाना हो तो कटासन साथमें रख कर जाना चाहिये।

॥ इति ॥

'पोषधविधि'का परिशिष्ट—

देशावकाशिक व्रत लेने और पारनेकी विधि-

श्रावक के बारह व्रतोंमें ५ अणुव्रत और ३ गुणव्रत बार बार लिये नहीं जाते, परन्तु ४ शिक्षाव्रत अभ्यासरूप होने से बार बार लिये और पारे जाते हैं।

सामायिक और पोषधव्रत के लेने तथा पारनेकी विधि 'पोषधविधि' में लिखी जा चुकी है, और 'अतिथिसंविभागव्रत' किस प्रकार किया जाय इसकी रीति भी उसके वर्णनमें बता दी गई है। अब रहा 'देशावकाशिकव्रत' सो इस के लेने तथा पारनेकी विधि यहां पर लिखी जाती है।

देशावकाशिकव्रत लेने की विधि में देशभेदसे कुछ अंतर है। गुजरात में यह व्रत लेने के पहले द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से सांसारिक प्रवत्तियों का मनमें नियम करने के बाद गुरुमुखसे अथवा स्वमुखसे-

''देसावगासियं उवभोगं परिभोगं पच्चक्खाइं[1] अन्नत्थणा-

---

१. गुरु या अन्य उच्चराने वाले 'पच्चक्खाइ' बोलें, और उच्चरनेवाला 'पच्चक्खामि' बोले, स्वमुखसे उच्चरने वाला केवल 'पच्चक्खामि' ही बोले।

भोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरइ[1]"

यह आलावा बोल कर देशावकाशिक उच्चरते हैं और बादमें तत्काल अथवा समयान्तरमें सामायिक करते हैं। कुल १० सामायिक करके देशावकाशिक पूरा करते हैं।

मारवाड में कहीं कहीं तो ऊपर मुजब ही देशावकाशिक किया जाता है, परन्तु कई स्थानों में 'पोषध' की ही तरह यह व्रत भी इरियावहीप्रतिक्रमणपूर्वक मुहपत्तिपडिलेहणा करके खमा० इच्छा० 'देसावगासिक संदिसाउं', खमा० इच्छा० 'देसावगासिक ठाउं' 'इच्छं' कह नवकार गिन के नीचेका आलावा बोल कर उच्चरते हैं—

'अहं नं भंते तुम्हाणं समीवे देसावगासियं उवभोगं परिभोगं पच्चक्खामि, दुविहं तिविहेणं—मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि, तं देसावगासियं चउव्विहं पन्नत्तं—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ। दव्वओ णं देसावगासियं सव्वदव्वाइं अहिगिच्च, खित्तओ णं जाव पोसहसालाए वा, कालओ णं जाव नियमं वा दिवसं, भावओ णं जाव एस परिणामो न परिवडइ, तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि॥"

---

१ उच्चरनेवाला 'वोसिरामि' बोले, जो स्वमुखसे उच्चरता हो तो केवल 'वोसिरामि' ही बोले।

इस के बाद सामायिकविधिसे सामायिक उच्चरते हैं और शाम को जब देशावकाशिक पारते हैं उसी समय सामायिक भी पारते हैं।

देशावकाशिक पारते समय इरियावही, मुहपत्तिपडिलेहणा और आदेश लेना आदि विधि पोषध की तरह की जाती है और चरवले पर हाथ स्थापन कर नवकार गिन के 'सागरचंदो' की जगह नीचे की गाथा बोली जाती है—

"जं जं मणेण बद्धं, जं जं वायाए भासियं पावं।
जं जं काएण कयं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥"

इस के बाद सामायिक पारते हैं। इति।

卐